शरीरविज्ञान: दर्शन
यत् पिंडे
तत् ब्रह्माण्डे
प्रेमयोगी वज्र

शरीरविज्ञान दर्शन

यत् पिंडे तत् ब्रह्माण्डे

लेखक: प्रेमयोगी वज्र

२०१७

पुस्तक-परिचय~

यह पुस्तक, पुराणों से मिलते-जुलते रूप में, आध्यात्मिक-वैज्ञानिक प्रकार का अपूर्व उपन्यास है। यह एक आध्यात्मिक-भौतिक प्रकार की मिश्रित कल्पना पर आधारित है। यह हमारे शरीर में प्रतिक्षण हो रहे भौतिक व आध्यात्मिक चमत्कारों पर आधारित है। यह दर्शन हमारे शरीर का वर्णन आध्यात्मिकता का पुट देते हुए पूरी तरह से चिकित्सा विज्ञान के अनुसार करता है। इसीलिए यह आम जनधारणा के अनुसार नीरस चिकित्सा विज्ञान को बाल-सुलभ सरल व रुचिकर बना देता है। यह पाठकों की हर प्रकार की आध्यात्मिक व भौतिक जिज्ञासाओं को शाँत करने में सक्षम है। यह सृष्टि में विद्यमान प्रत्येक स्तर की स्थूलता व सूक्ष्मता को एक करके दिखाता है, अर्थात यह द्वैताद्वैत की ओर ले जाता है। यह दर्शन एक उपन्यास की तरह ही है, जिसमें भिन्न-भिन्न अध्याय नहीं हैं। इसे पढ़कर पाठकगण चिकित्सा विज्ञान के अनुसार, शरीर की पूरी जानकारी प्राप्त कर लेते हैं; वह भी रुचिकर, प्रगतिशील व आध्यात्मिक ढंग से। इस पुस्तक में शरीर में हो रही घटनाओं का, सरल व दार्शनिक विधि से वर्णन किया गया है। इस पुस्तक को शरीरविज्ञान दर्शन~ एक आधुनिक कुंडलिनी तंत्र [एक योगी की प्रेमकथा] नामक मूल पुस्तक से लिया गया है। कुछेक पाठकों ने कहा कि इस पुस्तक में बहुत से विषय एकसाथ हैं, इसलिए कुछ भ्रम सा पैदा होता है। कई लोग लंबी पुस्तक नहीं पढ्न चाहते, और कई किसी एक ही विषय पर केन्द्रित रहना चाहते हैं। हमने मूल पुस्तक से छेड़छाड़ करना अच्छा नहीं समझा, क्योंकि उसे प्रेमयोगी वज्र ने अपनी अकस्मात व क्षणिक कुंडलिनी जागरण के एकदम बाद लिखा था, जिससे उसमें कुछ दिव्य प्रेरणा और दिव्य शक्ति महसूस होती थी। इसीलिए हमने वैसे पाठकों के लिए उसके मात्र शरीरविज्ञान दर्शन भाग को ही नए रूप में प्रस्तुत किया। हालांकि यही शरीरविज्ञान दर्शन असली व मूलरूप है, जिसे प्रेमयोगी वज्र ने तथाकथित जागृति से बहुत पहले लिखना शुरु कर दिया था, बेशक उसने अपने आध्यात्मिक अनुभवों को जोड़ते हुए इसे अंतिम रूप बाद में दिया। ऐसी ही, एक आधुनिक कुण्डलिनी तंत्र

(एक योगी की प्रेमकथा) नाम की एक अन्य पुस्तक भी है, जो इसी मूल पुस्तक से निकली है। इसमें मूल पुस्तक के योगात्मक व आध्यात्मिक पहलू पर ही मुख्यतः गौर किया गया है। आशा है कि यह पुस्तक जन-आकांक्षाओं पर खरा उतरेगी।

लेखक परिचय~

प्रेमयोगी वज्र का जन्म वर्ष 1975 में भारत के हिमाचल प्रान्त की वादियों में बसे एक छोटे से गाँव में हुआ था। वह स्वाभाविक रूप से लेखन, दर्शन, आध्यात्मिकता, योग, लोक-व्यवहार, व्यावहारिक विज्ञान और पर्यटन के शौक़ीन हैं। उन्होंने पशुपालन व पशु चिकित्सा के क्षेत्र में भी प्रशंसनीय काम किया है। वह पोलीहाऊस खेती, जैविक खेती, वैज्ञानिक और पानी की बचत युक्त सिंचाई, वर्षाजल संग्रहण, किचन गार्डनिंग, गाय पालन, वर्मीकम्पोस्टिंग, वैबसाईट डिवेलपमेंट, स्वयंप्रकाशन, संगीत (विशेषतः बांसुरी वादन) और गायन के भी शौक़ीन हैं। लगभग इन सभी विषयों पर उन्होंने दस के करीब पुस्तकें भी लिखी हैं, जिनका वर्णन एमाजोन ऑथर सेन्ट्रल, ऑथर पेज, प्रेमयोगी वज्र पर उपलब्ध है। इन पुस्तकों का वर्णन उनकी निजी वैबसाईट demystifyingkundalini.com पर भी उपलब्ध है।

वैधानिक टिप्पणी (लीगल डिस्क्लेमर) ~

यह पुस्तक एक प्रकार का आध्यात्मिक-भौतिक मिश्रण से जुड़ा हुआ मिथक कथाओं/घटनाओं का साहित्य है, जो फिक्षन विज्ञान से मिलता-जुलता है। इसको किसी पूर्वनिर्मित साहित्यिक रचना की नक़ल करके नहीं बनाया गया है। फिर भी यदि यह किसी पूर्वनिर्मित रचना से समानता रखती है, तो यह केवल मात्र एक संयोग ही है। इसे किसी भी दूसरी धारणाओं को ठेस पहुंचाने के लिए नहीं बनाया गया है। पाठक इसको पढ़ने से उत्पन्न ऐसी-वैसी परिस्थिति के लिए स्वयं जिम्मेदार होंगे। हम वकील नहीं हैं। यह पुस्तक व इसमें लिखी गई जानकारियाँ केवल शिक्षा के प्रचार के नाते प्रदान की गई हैं, और आपके न्यायिक सलाहकार द्वारा प्रदत्त किसी भी वैधानिक सलाह का स्थान नहीं ले सकतीं। छपाई के समय इस बात का पूरा ध्यान रखा गया है कि इस पुस्तक में दी गई सभी जानकारियाँ सही हों व पाठकों के लिए उपयोगी हों, फिर भी यह बहुत गहरा प्रयास नहीं है। इसलिए इससे किसी प्रकार की हानि होने पर पुस्तक-प्रस्तुतिकर्ता अपनी जिम्मेदारी व जवाबदेही को पूर्णतया अस्वीकार करते हैं। पाठकगण अपनी पसंद, काम व उनके परिणामों के लिए स्वयं जिम्मेदार हैं। उन्हें इससे सम्बंधित किसी प्रकार का संदेह होने पर अपने न्यायिक-सलाहकार से संपर्क करना चाहिए।

सर्वप्रथम यह पुस्तक श्री भोले महादेव को समर्पित है, जो कि तंत्रशास्त्र के आदि गुरु हैं। तदनंतर यह पुस्तक प्रेमयोगी वज्र के पूज्य पितामह श्री/गुरु/उन्हीं वृद्धाध्यात्मिक पुरुष को समर्पित है, जो कि एक महान व व्यावहारिक कर्मयोगी थे, और तंत्रप्रवर्तक महादेव के अवतार प्रतीत होते थे।

मैं अपने सहपाठियों, सहव्यवसायिओं, ज्ञातिजनों, परिवारजनों, मित्रों, शिक्षकों/गुरुजनों व अन्य विस्मृत जनों-जीवों के प्रति भी अपना हार्दिक आभार प्रकट करता हूँ, जिन्होंने इस पुस्तक के प्रकटीकरण में, किसी भी रूप में मुझे सहयोग दिया है। साथ में, मैं डॉ० भीष्म शर्मा जी का भी आभार प्रकट करता हूँ, जिन्होंने मेरे माध्यम से प्रकट होने वाले शरीरविज्ञानदर्शन के लिए, मुझे शरीरविज्ञान से सम्बंधित जानकारियाँ उपलब्ध करवाईं।

लेखन कला एक श्रेष्ठतम कलाओं में वर्णित की जाने योग्य कला है, क्योंकि यह मस्तिष्क को या विचारों को अनासक्ति के साथ अभिव्यक्त करती है, जिससे कि अद्वैत का अनुभव होता है, और फलस्वरूप आत्मशान्ति प्राप्त होती है। जिस प्रकार शुद्ध जल सर्वत्र ही शुद्धीकरण करता है, उसी प्रकार सबसे छोटी और स्वतन्त्र देह, जो देहपुरुष के नाम से विख्यात है, वह सजीवपुरुष भी जीवों का विकास करके सर्वत्र आनंद को बढ़ाता है। इससे देहपुरुष आनंदरूप ही सिद्ध होता है। देहसमाज पूर्ण व युक्तियुक्त कर्मठता के साथ, तथा अद्वैत के साथ व्यवहार करता है।

इससे सिद्ध होता है कि मानव का वास्तविक विकास देहपुरुष की तरह अनासक्तिमय, युक्तियुक्त व सर्वहितकारी कर्मों के साथ होता है, अन्यथा नहीं, क्योंकि आसक्ति के साथ लाख उपाय करने पर भी सर्वहितकारिता संभव नहीं हो पाती। वेद का साररूप जो ब्रम्हज्ञान है, वह अनासक्ति से ही उत्पन्न होता है, तथा यह अनासक्ति शरीरविज्ञान दर्शन से सबसे अधिक सुलभ है। इससे सिद्ध होता है कि देहपुरुष वेदज्ञ होते हैं, तथा देहसमाज एक सर्वजनमुक्त समाज है, इसलिए पूर्ण है।

अपनी सत्ता के प्रति आकर्षण सजीव और निर्जीव, दोनों प्रकार के जगत का स्वभाव है। निर्जीव पदार्थ घटना के बाद ही अपनी सत्ता की रक्षा के लिए प्रयास करते हैं, क्योंकि उनमें उस घटना का संकेत करने वाले मन, बुद्धि, विचार आदि तत्त्वों का, अर्थात अंतःकरण का अभाव होता है, उदाहरणतः जैसे गदा के प्रहार के बाद शिला बिखर जाती है, परन्तु सजीव पदार्थ पुराने अनुभव के स्मरण से, श्रवण से व पठन से या बुद्धि द्वारा विश्लेषण करने के उपरांत उत्पन्न अनुमान से घटनाकारक व उस घटना के परिणाम का मन में ध्यान करके और फिर बुद्धि द्वारा निश्चय करके अपनी सत्ता की रक्षा करते हैं। उदाहरण के लिए, गदायुद्ध से अनभिज्ञ पुरुष गदा का प्रहार सहने से पहले ही भाग जाता है, परन्तु गदायोद्धा गदा को गदा से, हाथ से या पैर से रोकने में स्मर्थ होता है, इसलिए वहीँ ठहरता है, केवल आपातकालीन स्थिति में ही भागता है। निर्जीव शिला अत्यधिक सटीकता, पूर्वनिर्दिष्टता व विज्ञानाधारित सामान्यसाधारण नियमों के साथ अपनी रक्षा करती है, पर सजीव गदयोधा अपने मस्तिष्क द्वारा निर्दिष्ट अनेक प्रकार के देहसंचालन से अतिरिक्त सुरक्षा प्राप्त करता है। देहपुरुष भी पूर्णतः सजीव की तरह ही अपने मस्तिष्क की क्रियाशीलता को प्रदर्शित करता है, परन्तु वह सजीव पुरुषों की तरह इससे आत्मबद्ध नहीं होता, जिससे कि वह अद्वैतपूर्ण, अनासक्त, अपरिवर्तनशील व जीवन्मुक्त पुरुष ही सिद्ध होता है, स्थूल पुरुष की तरह जीवनचर्या होने के परिपेक्ष्य से। अतः देहपुरुष पुरुषोत्तम स्वरूप ही है। अद्वैतभाव

से सम्पन्न पुरुष भी देहपुरुष की ही तरह सभी ईश्वर-निर्दिष्ट मानवसेवारूपी कर्मों को अपने कर्तव्य की पूर्ति के लिए ही करता है, सुख-प्राप्ति के लिए नहीं, क्योंकि उसमें अद्वैत से सिद्ध निर्विकल्प आत्मानंद स्वयं ही विद्यमान होता है। पुरुष शब्द यहाँ साधारण, स्थूल मनुष्य का द्योतक है। देहपुरुष की तरह क्रियाशील होने पर भी अद्वैत की अवस्था केवल चिदाकाशात्मा से ही संभव है, क्योंकि संकल्प सदैव चिदाकाश के अंश होते हैं। देहपुरुष और पुरुष, दोनों पूरी तरह से एकरूप ही हैं, केवल एक काल्पनिक भिन्नता के साथ, वह यह कि देहपुरुष अनासक्त धारणा से सम्पन्न हैं, और पूर्णचेतन है, परन्तु पुरुष आसक्तधारणा से सम्पन्न है, इसलिए वह पूर्ण चेतना को भूला हुआ, अल्पचेतना से युक्त है। कर्म के साथ-साथमन के भाव भी बदलते रहते हैं। भावों को बिना किसी व्यवधान के बनने देना चाहिए। हमें तो केवल देहपुरुष के ध्यान से उन भावों-अभावों के प्रति अनासक्त अर्थात द्वैताद्वैत-संपन्न होना है। इसका अर्थ है कि हमें केवल साक्षीभाव से स्थित रहना है। कर्म व भाव एक-दूसरे के आश्रित रहते हैं। जब हम भावों को अधिक उच्च बनाए रखने का या उन्हें बदलने का प्रयत्न करते हैं, तब उनसे जुड़े हुए कर्म दुष्प्रभावित हो जाते हैं। प्राचीन शास्त्रों में अनासक्ति शब्द का प्रयोग कम ही दिखाई देता है। वहाँ राग-द्वेष को नष्ट करने पर जोर दिया गया है। राग-द्वेष के अभाव को ही अनासक्ति कहते हैं। योगवासिष्ठ में लिखा है कि मन से किया हुआ काम ही कर्म कहलाता है, जिससे बंधन होता है, अतः सभी कर्म शरीर से करने चाहिए, मन से नहीं। वैसे मन के बिना काम हो ही नहीं सकते, अतः मनोहीनता का अर्थ उसमें बिना आसक्ति वाला (रागरहित) या द्वैताद्वैत वाला मन ही है, जिसकी सिद्धि हमने शविद के माध्यम से की है। उस पौराणिक ग्रन्थ में भी अनासक्ति पर बहुत जोर दिया गया है, अतः शविद के सिद्धांत की पुष्टि हो जाती है। योगवासिष्ठ ग्रन्थ में ही तंत्रविज्ञान की पुष्टि करते हुए भी लिखा गया है कि जिस तत्परता के साथ अज्ञानी लोग कर्म करते हैं, उसी तत्परता के साथ ज्ञानी लोग भी करें। यहाँ पर ज्ञानी का अर्थ शविद आदि की अद्वैतवृत्ति को धारण करने वाला ही है।

देहदेश में सर्वोत्कृष्ठ कर्मविभाजन होता है। सभी देहपुरुष समूहों में ही कार्य करते हैं, अकेले नहीं। कोई पुरुषसमूह सम्पूर्ण देहदेश में अन्न को ढोता है, सभी देहपुरुषों के भोजन के लिए। कोई समूह देहदेश के किसानों द्वारा उत्पादित अन्न के अपाच्य अंश को पशुपालकों के लिए उपलब्ध कराता है; जिनके घोड़े, हाथी, गाय आदि समस्त पालतु पशु समस्त देहदेश के लिए दूध, वस्त्र आदि अनेक वस्तुएँ, तथा मनोरंजन, यातायात आदि अनेक सुविधाएँ उपलब्ध कराते हैं। इससे स्वच्छता विभाग भी लाभान्वित होता है। कोई देहदेश विकसित होता है, कोई विकासशील।

अपने नष्ट होने से पूर्व ही मातृदेश अपने जैसे पुत्रदेशों का निर्माण कर लेते हैं। मातृदेश के अनुसार ही कोई देश मूढ़ शासक वाला, कोई कुशाग्रबुद्धि-युक्त शासक वाला होता है। यद्यपि कुछ देश अपने बलबूते पर भी विकसित बन जाते हैं। देहदेश में भी अधिकारियों या शिक्षकों की एक दीर्घ परंपरा विद्यमान होती है। वहाँ पर सभी उच्च लोग अपने से अधिक उच्च लोगों से सीखते हैं। सर्वोच्च शिक्षक अति सुरक्षित, सर्वसुविधाओं से सम्पन्न व वातानुकूलित नगरी में निवास करते हैं। कई बार समाज के लिए अहितकर उच्च आदेश का उसके अनुसरक पालन भी नहीं करते हैं।

कुछ पुरुष देहदेशसीमा पर तैनात होकर, अवैध प्रवेश की रोकथाम के लिए कंटीली तारों की दीवार व अन्य सीमा-भित्तिओं का निर्माण करते रहते हैं। एक समूह का कार्य अवैध रूप से प्रविष्ट बाह्य शत्रुओं का संहार करना होता है। मुख्य राजद्वार से वैधरूप से प्रविष्ट मित्र पुरुषों के लिए देहदेश के सीमाप्रांत में, मुख्य राजमार्ग के निकट, देश-सेवा का अवसर प्रदान किया जाता है, जिसके बदले में वे देहदेश के आवश्यकताधिक संसाधनों के साथ जीवनयापन करते हैं, और साथ में देहदेश का संरक्षण भी प्राप्त करते हैं। कुछ लोग कृषक हैं, जो सम्पूर्ण देश के लिए विविध प्रकार के अन्न उगाते हैं। कुछ विद्यार्थी आधारभूत शिक्षाप्राप्ति के उपरांत चिकित्साशिक्षा में उपाधि ग्रहण करके रोगियों की चिकित्सा करते हैं। एक संगठन शिल्पकारों का होता है; जो कि मार्ग, ग्राम, नगर अदि संरचनाओं का निर्माण व उनकी क्षतिपूर्ति करता रहता है। ईश्वर की सृष्टि रचने की इच्छा की तरह ही देहपुरुष की इच्छा भी मानव के सर्वोत्तम लाभ के लिए कर्म से भरी हुई होती है, जिससे देहसृष्टि का सञ्चालन होता है। इससे सिद्ध होता है कि देहपुरुष ईश्वररूप ही होते हैं।

वास्तव में देहदेश के सभी विभाग उसके जन्म के साथ ही बन जाते हैं, क्योंकि एक के भी अभाव के बिना देहदेश का सञ्चालन संभव नहीं। समय के साथ, धीरे-धीरे संसाधनों की वृद्धि से वे पूर्वनिर्मित विभाग ही सुदृढ़ होते रहते हैं, अनावश्यक नए विभागों को खोलने की बजाय। कई विभाग अति क्रियाशील होते हैं, इसलिए उनके पुरुष अत्यधिक निष्ठा के साथ अनासक्ति का आचरण करते हैं, तथा थोड़े से विश्रामकाल में भी वे अद्वैतसाधना करते रहते हैं, जिससे कि उनकी सारी थकान दूर हो जाए और मन में शाँति छा जाए। सभी देहपुरुष पूजा, योग, संध्या-वंदन आदि आध्यात्मिक क्रियाएं नियमित रूप से करते रहते हैं। इन्हीं के प्रभाव से तो वे कर्मबंधन से बचे रहकर सदैव द्वैताद्वैत व अनासक्ति से संपन्न रहते हैं। देहदेश में सदैव नवजात उत्पन्न होते रहते हैं, जो प्रतिक्षण हो रही मृत्यु से बने रिक्त स्थानों की पूर्ति करते रहते हैं। वे नवजात प्रिय, सुकोमल व सुन्दर होते हैं, पर कार्य करने में अकुशल होते हैं। सम्पूर्ण देश पूरी तत्परता व सुरक्षा के साथ

उनका पालन पोषण करता है। बाल्यकाल में वे साधारण शिक्षकों व परिवारजनों से खाना, पीना, चलना, हँसना, खेलना, पढ़ना, लिखना अदि सरल विद्याएँ सीखते हैं। कुछ बड़े होने पर, विशेष प्रशिक्षक उन्हें विशेष पुस्तकों के सहयोग से जटिल विद्याएँ सिखाते हैं, तथा उनके वंश, गोत्रादि के अनुसार किसी एक विशेष विद्या में विशेष दक्षता प्रदान करते हैं, जिससे कि कर्मविभाजन व उत्कृष्ठ कार्यदक्षता कायम रहती है।

देहपुरुष अनेक प्रकार के क्रीड़ा-करतबों को भी प्रदर्शित करते हैं, जिनमें एक क्रीडा पुरुषों के युद्धाभ्यास जैसी होती है। अगर देहसमाज के इतना जटिल होने पर भी देहपुरुष पूर्ण रूप से अनासक्त रह सकते हैं, तो पुरुष क्यों नहीं रह सकते, जबकि पुरुषों का स्थूल समाज अपेक्षाकृत साधारण होता है। वैसे देहपुरुषों के ध्यान से पुरुष अनासक्ति को अनायास ही प्राप्त कर सकते हैं। यही शरीरविज्ञानदर्शन का सार है। शरीरविज्ञाननदर्शन से जब पुरुष-रूपी जीवात्मा कुछ निर्मल हो जाता है, तो वह अनायास ही उच्च साधना की ओर अग्रसर हो जाता है। गूढ़ चिंतन से प्रतीत होता है कि देहपुरुष पर्वत, नदी, वायु आदि जड़ पदार्थों की तरह स्वयं ही चलायमान हैं, परन्तु साथ में वे मनुष्य की तरह भी व्यवहार करते हैं, जिससे हम अनुमान लगा सकते हैं कि उनके अन्दर मनुष्य के जैसा मन है, पर वो उसमें मनुष्य की तरह आसक्त नहीं होते, अर्थात हमेशा अद्वैत भावना को धारण किए रहते हैं। वैसे पुरुष भी अनेक बाह्य पदार्थों के बल से अनासक्ति प्राप्त करते हैं, जैसे कि माँस, मदिरा, नशीले पदार्थ आदि-आदि; यद्यपि ये क्षणिक व सापेक्ष अनासक्ति प्रदान करते हैं, और साथ में शरीर के लिए हानिकारक होते हुए पापकर्म की ओर भी प्रवृत्त कर सकते हैं। शुद्ध भावनाओं व संकल्पों से भी अनासक्ति प्राप्त की जाती है; जैसे कि प्रेम, भ्रमण, व्यायाम, क्रीड़ा, कला, संगीत आदि-आदि से, परन्तु व्यावहारिक अनासक्ति का सर्वोत्तम उपाय शविद अर्थात शरीरविज्ञानदर्शन ही है, क्योंकि इसके बल से साँसारिक कार्यों में पूर्ण व्यस्तता के बावजूद भी अनासक्ति विद्यमान रहती है। इसके सहयोग से तो अनासक्ति उतनी ज्यादा उत्पन्न होती है, जितनी ज्यादा साँसारिक काम-काज की उलझनें होती हैं। यदि अनासक्तिकारक मानवीय व साँसारिक गतिविधियों के साथ शविद का भी आश्रय लिया जाए, तो उच्च कोटि की अनासक्ति अनायास ही उत्पन्न होती है। वास्तव में सारी पृथ्वी ही अनासक्तिकारक है, क्योंकि उसकी सभी घटनाओं में एक क्रमबद्धता और धैर्य सा होता है, जिस तरह कि ज्ञानी में होता है। अज्ञानी की तरह या अन्य ग्रह-नक्षत्रों की तरह उसमें अस्त-व्यस्तता नहीं होती। इसलिए कह सकते हैं कि पृथ्वी एक अद्वैतज्ञाननिष्ठ, महास्थूल पुरुष है, और हम सभी पुरुष उसके देहपुरुष हैं। देहपुरुष के

अनुसरण से या अन्य किसी उपाय से, अद्वैत की भावना से ही जगत और ब्रम्ह, दोनों की सिद्धि होती है। संकल्पों को रोककर संकल्प नष्ट नहीं होते, अपितु इससे संकल्प अज्ञानकलारूपी सूक्ष्मरूप धारण करते हैं, और उपयुक्त समय पर पुनः स्थूल रूप में प्रकट हो जाते हैं। देहपुरुष के चिंतन से उत्पन्न आसक्तिरहित मानवीय आचरण से भौतिकवादी और उत्पथगामी भी लाभान्वित होते हैं। जो कर्म शविद-अज्ञानियों के लिए बंधनकारी हैं, वही कर्म शविद-ज्ञानियों के लिए मुक्तिकारी होते हैं। योगवासिष्ठ ग्रन्थ में लिखा है कि वास्तव में कर्मरूपी या जगतरूपी नदी दोनों दिशाओं में बहने वाली विचित्र नदी के समान है, जो दृष्टिकोण व विधि के अनुसार नीचे की ओर भी बहा सकती है, व ऊपर की ओर भी चढ़ा सकती है। चित्तवृत्ति के भाव-अभाव देहपुरुषों में भी प्रतिक्षण चलते रहते हैं, पर वे उनसे अनासक्ति के कारण अप्रभावित व समरूप बने रहते हैं, परन्तु आसक्ति के कारण पुरुष उनसे प्रभावित होकर समता को त्याग देते हैं, जो कि परम दुःख का कारण है। देहपुरुष ईश्वररूप ही हैं। इसका प्रमाण है, शास्त्रों-पुराणों के वचन। शास्त्रों में सभी बातें घुमा-फिरा कर कही गई हैं, ताकि दिमाग पर जोर पड़े और कुण्डलिनी जागृत होए। उनमें कहा गया है कि ईश्वर न तो भावरूप है, न अभावरूप है, दोनों भी है,और दोनों भी नहीं है। अगर हम ध्यान से सोचें तो ऐसी विचित्र स्थिति केवल तभी संभव है, यदि सभी साँसारिक कार्य युक्तियुक्त ढंग से व अनासक्ति के साथ किए जाएं। पूरी निष्ठा के साथ ऐसा करने वाले तो केवलमात्र देहपुरुष ही प्रतीत होते हैं।

हास्य-विनोद से भी अनासक्ति का उदय होता है, क्योंकि इनके प्रति सत्यत्व बुद्धि नहीं होती। वास्तव में यदि अद्वैत दृष्टिकोण का प्रयोग किया जाए, तो पूरी निष्ठा व गुणवत्ता से किए गए साधारण कार्य भी मजबूत अनासक्ति पैदा करते हैं, जेसे कि पर्वतारोहण, नौका-चालन, युद्ध आदि साहसिक कार्य तथा कला, विद्या, पठन, लेखन, क्रीड़ा अदि सरल कार्य। संसार में कुरूपता अनासक्ति प्रदान करने के लिए ही बनी है। कर्म व आचरण की आसक्तिमय विधि संक्रामक रोग की तरह पूरे समाज में फैली है, जिसका समूल नाश इस दर्शन से ही संभव है। जैसे पुरुष-समाज अनेक प्रकार व अनेक स्तरों के होते हैं, उसी प्रकार देहपुरुष-समाज भी। जैसे पुरुष-समाजों में परिवार, ग्राम, देश, पृथ्वी आदि अनेक प्रकार के समाज हैं, उसी प्रकार देहपुरुष-समाजों में भी हैं, यद्यपि नाम भिन्न-भिन्न हैं। देहपुरुष की मुक्ति के लिए अनासक्ति अनिवार्य नहीं है, क्योंकि उसने कभी आसक्ति की ही नहीं। क्योंकि उसमें व्यक्त व अव्यक्त संकल्पों का अभाव होता है, अतः आसक्ति किससे करेगा व अनासक्ति किससे? इसलिए वह सदामुक्त है। क्योंकि पुरुष देहपुरुष की तरह

संकल्पों के अभाव के साथ काम नहीं कर सकता, संकल्पों व कर्मों के एक दूसरे पर आश्रित होने के कारण, अतः उसके लिए संकल्पों के प्रति अनासक्ति ही एकमात्र उपाय है, मुक्ति के लिए, क्योंकि व्यक्ताव्यक्त संकल्पों के प्रति अनासक्ति उनके अभाव के समतुल्य ही है। अतः सिद्ध होता है कि अनासक्त पुरुष व सर्वसाधारण देहपुरुष, दोनों एकरूप ही हैं। जैसे सूक्ष्म पशुओं ने अपने क्रमिक विकास से देहपुरुष की रचना की, जिसने फिर अपने फले-फूले वंश के कर्मविभाजन से देहसमाज को रचा; उसी प्रकार स्थूल पशुओं ने स्थूल पुरुष की रचना की, जिसने फिर अपने समाज को रचा। जैसे सूक्ष्म पशु की इन्द्रियाँ खासकर मस्तिष्कगत, निम्न कोटि की होती हैं, जिससे वे देहसमाज के निर्माण में अक्षम होते हैं; उसी प्रकार स्थूल पशु भी इन्द्रिय-न्यूनता के कारण स्थूल समाज के निर्माण में अक्षम होते हैं। आश्चर्य तो यह है कि देहसमाज में सभी पुरुष और साथ में सभी पशु भी मुक्त हैं, पर स्थूल समाज में केवल विरले पुरुष ही मुक्त होते हैं। स्थूल पुरुष की मुक्ति के लिए उसके द्वारा संकल्पों के प्रति अनासक्ति आवश्यक होती है, जो स्थूल पशुओं के लिए करना असंभव है, क्योंकि उनमें बुद्धि का अभाव होता है। स्थूल पुरुष के जैसा चेतन जीव ही देहपुरुष की तरह चेतना-विकास के लिए कर्म कर सकता है, जड़ नहीं। साथ में, देहपुरुषों में संकल्प भी नहीं होते हैं। अतः सिद्ध होता है कि देहपुरुष मूल चिदाकाश रूप ही हैं।

नियमबद्धता से भी अनासक्ति उत्पन्न होती है, क्योंकि नियम के अंतर्गत कर्म में आसक्ति को पैदा करने वाली स्वार्थ बुद्धि व बेचैनी नहीं होती। इसी प्रकार, ज्योतिष-निर्दिष्ट व लोकहितार्थ कर्म के बारे में भी समझ लेना चाहिए। चित्तवृत्तियाँ चिदाकाश की तरह चिन्मय व प्रकाशमान होती हैं। इनके प्रकाश व चिन्मयता को लुप्त नहीं किया जा सकता। अतः देहपुरुष की तरह अद्वैत तभी संभव है, जब पुरुष अपनी आत्मा को अन्धकार-विहीन व जड़ता-विहीन करे, अर्थात आत्मरूप से चिदाकाश बने। परीक्षा केवल कठिनाइयों में ही होती है। ऐसे तो सुख-सुविधाओं के बीच में बहुत से लोग अद्वैतवादी होने का दावा करते हैं, परन्तु जब उनके ऊपर मुसीबत आती है, तब उनका अद्वैत हवा में फुर्र हो जाता है, और वे चीखने-चिल्लाने लग जाते हैं। यदि कोई कठिनाइयों के बीच में भी अद्वैत को धारण करके रखे, तो उसका कुण्डलिनीजागरण तय है। प्रेमयोगी वज्र के साथ भी तो वही हुआ था। आजकल के भौतिककयुग में, इस प्रकार का शक्तिशाली अद्वैत केवल शविद जैसे बलवान व वैज्ञानिक शास्त्र से ही सहजता से संभव है।

जिस प्रकार स्थूल देश की सीमा दुर्गम होती है, और वहाँ पर कम जनसँख्या व कम संसाधन होते हैं, उसी प्रकार की स्थिति देहदेश की सीमा पर भी होती है। देहपुरुषों के द्वारा कर्मविभाजन

कार्य की उत्कृष्टता के लिए होता है, तथा साथ में इससे कर्मों-संकल्पों के बवंडर से उत्पन्न रजोगुण व तमोगुण का निवारण भी होता है। अनासक्ति से प्रथमतः तो भौतिक पतन प्रतीत होता है, परन्तु तनिक अभ्यास होने पर तीव्र उन्नति का अनुभव होता है, भौतिक भी व आध्यात्मिक भी। देहपुरुष के ध्यान से अद्वैत की वृत्ति पैदा होती है, जो चित्त को नियंत्रण में रखती है। इसके अभाव में संकल्प अनियंत्रित रूप से स्फुरित होते रहते हैं, जिससे क्षणिक व अनावश्यक भौतिक विकास होता है, और साथ में पापकर्म भी होते हैं। अनियंत्रित चित्त से कुण्डलिनी का पतन भी होता है। इस बात से अनभिज्ञ पुरुष अज्ञान की महिमा का गायन करते हैं। शंकालु पुरुष यह वितर्क भी करते हैं कि जैव रसायन ही देहपुरुषों से कर्म करवाते हैं, और उनकी अपनी बुद्धि नहीं होती, परन्तु वे स्वयं भी तो किसी न किसी की प्रेरणा या आदेश से ही कर्म करते हैं। शब्द भी तो कर्मप्रेरक वायु ही है, दृश्य भी कर्मप्रेरक प्रकाश ही है, तथा संकल्प भी तो कर्मप्रेरक विद्युत-स्पंद ही है। जिस प्रकार दैहिक समस्याएँ देहपुरुषों को कर्म करने के लिए प्रेरित करती हैं, उसी प्रकार स्थूल समाज की समस्याएं पुरुष को। जैसे देहपुरुष समस्याओं से मुंह नहीं मोड़ते, परन्तु उनका हल करते हैं, उसी प्रकार जीवन्मुक्त पुरुष भी। देहपुरुषों की अद्वैतयुक्त क्रियाशीलता नवजात पुरुषों में सर्वाधिक होती है, इसीलिए वे शरीरविज्ञानदर्शन के जीवंत रूप होते हैं, तभी तो परम प्रिय लगते हैं। इन सभी बातों से सिद्ध होता है कि जिस तरह देहपुरुष के सञ्चालन के लिए बंधनयुक्त जीवात्मा की आवश्यकता नहीं होती, उसी प्रकार स्थूल पुरुष के लिए भी नहीं होती। अल्प बुद्धि वाले लोग इस बात को मानते हैं कि आत्मज्ञान की अवस्था में कर्म नहीं हो सकते। अगर ऐसा है तो देहपुरुष इतने कर्मठ क्यों होते हैं, क्योंकि वे तो सदैव आत्मज्ञान से सम्पन्न होते हैं। वास्तव में रजोगुण से केवल पुरुष ही बद्ध होते हैं, क्योंकि रजोगुण के बवंडर में अद्वैतज्ञान की वृत्ति गायब हो जाती है। इसीलिए सुबह-साँय के शाँत समय में साधना करने के लिए कहा जाता है। चूंकि देहपुरुष संकल्पों को अनुभव ही नहीं करते हैं, अतः उन्हें ज्ञानवृत्ति की भी आवश्यकता नहीं होती।

देहपुरुष अपने देहसमाज के हित के लिए देहदेश की सभी समस्याओं का चक्षु आदि इन्द्रियों से गहनता से अनुभव करते हैं, फिर मन से उसके निराकरण की रूपरेखा बनाते हैं। अपनी बुद्धि से उसका विश्लेषण करके एक निर्णय पर पहुँचते हैं, फिर निर्णय के अनुसार सबसे उपयुक्त योजना बनाते हैं। अंत में, योजना को अपनी अद्वितीय कर्मठता व हस्त-पाद आदि कर्मेन्द्रियों के सहयोग से क्रियान्वित करते हैं। अपनी कर्तव्यपरायणता में वे पुरुषों से कहीं ज्यादा कुशल होते हैं, क्योंकि उनकी शक्ति व्यर्थ संकल्पों के रूप में बर्बाद नहीं होती, क्योंकि वे आत्मानंद से पूर्ण होते हैं।

आत्मज्ञान से रहित पुरुष व्यर्थ संकल्पों का उपयोग आनंद प्राप्ति के लिए करते रहते हैं। देहपुरुष कर्तव्यपूरक संकल्पों को ईश्वर की सृष्टि-विकास की दिव्य इच्छा को पूर्ण करने के लिए ही धारण करते हैं, स्वार्थपूर्ति के लिए नहीं, अतः वे महान प्रभुभक्त भी सिद्ध होते हैं।

देहपुरुष पुरुषों द्वारा किए जाने वाले सभी कर्मों को करते हैं। उदाहरण के लिए, वे बोलते हैं, लिखते हैं, पढ़ते हैं, चलते हैं, बढ़ते हैं, खेलते हैं, अभ्यास करते हैं, स्मरण रखते हैं; आदेश देते हैं, व पालन करते हैं; विवाह करते हैं, युद्ध करते हैं, स्पर्धा करते हैं; गठजोड़ बनाते हैं, व तोड़ते हैं; खाते हैं, पीते हैं, साँस लेते हैं, मलोत्सर्जन करते हैं, घुमते-फिरते हैं, बीमार होते हैं; आसक्त व अनासक्त होते हैं; मरते हैं, व पुनर्जन्म ग्रहण करते हैं; परिवर्तित होते हैं, संगठन बनाते हैं, आत्मदाह करते हैं, एकांतवास करते हैं, विद्रोह करते हैं, सोते हैं, योग करते हैं, और संगदोष से भी प्रभावित होते हैं। उनकी जीवनचर्या पूरी तरह से पुरुष के ही सदृश है। देहपुरुष अवश्य ही पूर्ण हैं। यदि वे पुरुषों की तरह अपूर्ण होते, तो उन्हीं की तरह आनंद के लिए संकल्पों पर आश्रित होते, जिससे कि देहजगत के कार्य अत्यंत सटीकता से नहीं होते और देहदेश अर्थात जीवों का अस्तित्व ही संभव नहीं होता। देहजगत के सञ्चालन के लिए स्थूलजगत की अपेक्षा कहीं ज्यादा सटीकता व अनुशासन की जरुरत होती है, जो कि संकल्पों के प्रति आसक्ति से कतई भी संभव नहीं है।

देहपुरुष के द्वारा बात करना भी संकेत करने का ही एक रूप है। वे विभिन्न प्रकार के संकेतों से आपस में बात करते हैं। जिस प्रकार एक विशेष प्रकार के शब्द एक विशेष प्रकार का कर्म करने के लिए प्रेरित करते हैं, उसी प्रकार संकेत भी। उदाहरण के लिए, उग्र देहपुरुषों से त्रस्त नागरिक देहपुरुष उनको मरवाने के लिए उनकी गुप्त सूचना संकेतों के द्वारा रक्षा विभाग को भेजते हैं। इसी प्रकार संकेतों से ही क्षुधापीड़ित देहपुरुष देहराजा के समक्ष अन्न हेतु संकेतरूपी प्रार्थनापत्र भेजते हैं, जो कि उसे पाकर फिर अपनी मंत्री परिषद् में वह प्रस्ताव रखता है। खाद्यान्न से सम्बंधित मंत्री फिर अनेक अधिकारी पुरुषों की उचित श्रृंखला के माध्यम से कृषक देहपुरुषों को अन्न के उत्पादन हेतु संकेतरूप में आदेश देता है। केवल मुख्य आदेश ही राजा के द्वारा दिया जाता है, इससे सम्बंधित अन्य सभी व्यवस्थाएं मंत्रियों व अधिकारियों के विभिन्न स्तर व श्रेणी के समूहों द्वारा सम्पन्न की जाती हैं। यही प्रणाली स्थूलदेश में भी दिखाई देती है। यह विचित्र है कि देहदेश का मंत्रीदल अपने कर्मों का अनुभव नहीं करता, परन्तु देहदेश का राजा, जो पुरुष या जीवात्मा नाम से संबोधित किया जा रहा है, वह उन सभी कर्मों का अनुभव करता है, जिनके प्रति आसक्ति से वह बद्ध हो जाता है। यह प्रत्यक्ष है कि पुरुष उस अनुभव का निवारण नहीं कर सकता, परन्तु वह

उसके प्रति आसक्ति का निवारण तो कर ही सकता है। आसक्ति का निवारण देहपुरुष के ध्यान से होता है।

अब देहपुरुष के लेखन के बारे में कहते हैं। देहदेश के सैनिकों की एक विशिष्ट श्रेणी एक विशेष प्रकार की स्याही का प्रयोग करके एक गुप्त व सूक्ष्म प्रार्थना पत्र को बड़ी चतुराई से आक्रमणकारी शत्रु के ऊपर चिपका देती है, जिसको पढ़कर निशानेबाज देहसैनिकों की एक अन्य विशिष्ट श्रेणी उन उग्रवादियों को पहचानकर मार देती है। वाहक देहपुरुष और सैनिकदेहपुरुष वैसे ही भ्रमणशील होते हैं, जैसे कि उनके समकक्ष पुरुष, क्योंकि उनके कर्मों का स्वभाव तीव्रता वाला होता है। सैनिकदेहपुरुष संपूर्ण देहदेश को बाहरी शत्रुओं और भीतरी देशद्रोहियों से बचाने के लिए हर समय व सर्वत्र विचरण करते रहते हैं। उनकी छोटी सी भी असावधानी से समग्र देहदेश नष्ट भी हो सकता है, अतः उनके शारीरिक व मानसिक अंग पूर्णतया स्वस्थ होते हैं। उनकी व्यावसायिक कार्यप्रणालियाँ भी बहुत जटिल होती हैं। उनका आपसी संवाद भी लाजवाब होता है। उनके साथ-साथ ही शिल्पकार वर्ग के देहपुरुष भी अनेक कामगार देहपुरुषों के साथ चले रहते हैं, जो कि दुर्घटना के दौरान मौके पर पहुँच कर मुरम्मत वगैरह का काम करते रहते हैं। यह नहीं भूलना चाहिए कि देहपुरुष उपरोक्त सभी काम अनासक्ति व अद्वैत के साथ सम्पन्न होकर करते हैं। शुद्ध आत्मस्वरूप में स्थित रहकर भी देहपुरुष सर्वोत्तम कर्मठता दिखाते हैं। इससे सिद्ध होता है कि वे महान कर्मयोगी होते हैं। जो-जो काम देहपुरुष करते हैं, वो-वो सभी काम पुरुष भी वैसे ही करते हैं। जो-जो अवस्थाएँ देहपुरुष धारण करते हैं, वो-वो सभी अवस्थाएँ पुरुष भी वैसी-वैसी ही धारण करते हैं, फिर केवल पुरुष ही अपने को कर्ता-भोक्ता क्यों मानते हैं? देहपुरुष तो मानते नहीं।

देहपुरुष भी पुरुष की तरह ही बढ़ते भी हैं। उनके नवजात सबसे तेजी से बढ़ते हैं। उन्हें अत्यधिक आहार की आवश्यकता होती है, इस कारण से, परन्तु उनके पेट का आकार बहुत छोटा होता है। इसलिए वे अपने पिता आदि वयोवृद्ध देहपुरुषों की भांति सामाजिक कार्य नहीं कर सकते। वे तो केवल अपने भारी भरकम भोजन को दिन में कई बार थोड़ा-थोड़ा करके खाते रहते हैं। कर्म करने के लिए उनके द्वारा की जाने वाली बार-बार की चेष्टा क्रीड़ा ही कही जाएगी, क्योंकि वे चेष्टाएं अधिकाँशतः निष्प्रभावी ही होती हैं। व्यस्क पुरुष उनका पालन-पोषण उत्तम विधि से करते हैं। उनको समस्त सुख-सुविधाओं से संपन्न, अन्न-जल से पूर्ण व उग्रपंथियों से मुक्त अन्तःपुरों में सुरक्षित रखा जाता है। वहाँ पर बाहरी क्लेषप्रद वातावरण का प्रभाव नहीं होता।

इस प्रकार ऐसे गुप्त व सुरक्षित स्थानों पर उनका अति स्नेह से लालन-पालन किया जाता है। ज्यादातर व्यस्क देहपुरुष काम के दबाव के कारण कुछ कलिष्ट जैसे रहते हैं। वे भोजन के प्रति उतने उत्सुक नहीं रहते, क्योंकि उनके शरीर पूर्ण विकसित अवस्था में होते हैं, जिन्हें भोजन केवल क्षति-पूर्ति व कर्म-शक्ति की प्राप्ति के लिए ही चाहिए होता है। यद्यपि सैनिकदेहपुरुष बहुभक्षी होते हैं, युद्धादि के समय तो और भी ज्यादा, अतः उनके लिए अत्यधिक मात्रा में अन्न-भंडारण की विशेष व्यवस्था रखनी पड़ती है।

देहपुरुष के शरीर में भी पुरुष की ही तरह निरंतर क्षति होती रहती है, जैसे कि विभिन्न अंगों की दुर्बलता, उनका भंग होना और उनमें कमजोरी आना आदि-आदि। खाए हुए अन्न से वे अपनी समस्त जीवन प्रणालियों को जीवित व गतिमान रखते हैं, जैसे कि श्वास-प्रश्वास, बोलना, लिखना, चलना, पढ़ना आदि-आदि।

देहसमाज के शत्रु बने हुए कुछ सूक्ष्मपुरुष कम बलशाली होते हैं, अतः देहसमाज की हानि करने में अस्मर्थ होते हैं। वे समाजबाह्य पुरुषों की तरह, देहदेश के बाहर अकेले में जीवनयापन करते रहते हैं। जब वे देहसमाज में अवैध रूप से प्रविष्ट होते हैं, तब देहदेशसैनिक उनको मारने वाला युद्धाभ्यास करते हैं। इससे वे भविष्य में महान बलशाली शत्रुओं को भी खदेड़ देते हैं। सूक्ष्मपुरुष यहाँ पर देहपुरुष का पर्यायवाची है, क्योंकि उसे नंगी आँख से नहीं पर विशेष यन्त्र से देखा जा सकता है। इसी प्रकार सूक्ष्म समाज देहसमाज का पर्यायवाची है। वास्तव में देहपुरुष के सभी काम क्रीड़ारूप ही हैं, अनासक्ति के कारण।

सूक्ष्मपुरुष के शरीर में भी पुरुषशरीर की ही तरह विभिन्न अंग भी होते हैं, जो कि उसी की तरह उसके मस्तिष्क के द्वारा नियंत्रित होते हैं। उसके देहसमाज के अन्दर भी बहुत से देहपुरुष निवास करते हैं, जिनके बीच में कुछ शरणार्थी भी होते हैं, जो कि उग्रपन्थियों के द्वारा भगाए हुए होते हैं। वे शरणार्थी कृतज्ञता दर्शाने के लिए कई कठिन कार्य करते हैं, जैसे कि अग्निकुंड का सञ्चालन। कइयों ने किसानों को अपने देश में शरण दी हुई होती है। वे किसान अपने स्वामीदेश के लिए खाद्यान्नों का भरपूर उत्पादन करते हैं। ये सभी देहपुरुषांतरपुरुष भी देहपुरुष की ही तरह अद्वैतनिष्ठा के साथ कर्म में लगे रहते हैं। इनके देहसमाज के अन्दर भी एक अन्य जनसमूह विद्यमान होता है, जिसके लोग भी देहपुरुष की तरह ही अपने अधिष्ठाता देहपुरुष की प्रीति के लिए अनासक्ति के साथ कर्म व व्यवहार में लगे रहते हैं। इन सभी प्रकार के पुरुषों में केवलमात्र स्थूलपुरुष ही अनेकरूप, आसक्त, अपूर्ण व चिदाकाशांशरूप होते हैं। अन्य सभी पुरुष तो

अद्वैतरूप, अनासक्त, पूर्ण व चिदाकाशरूप होते हैं। इन सभी पुरुषों में देहपुरुष ही हमारे निकटतम व सर्वश्रेष्ठ भी है, क्योंकि स्थूल दृष्टि से वह हम पुरुषों के सर्वाधिक समकक्ष होता है, तथा आत्मदृष्टि से अन्य सभी पुरुषों के।

सौरमंडलदेह में भी ग्रह-नक्षत्र आदि देहपुरुष विद्यमान रहते हैं, जो सदैव सूर्यरूपी हृदय की या मस्तिष्क की परिक्रमा, अर्थात आज्ञापालन करते रहते हैं, क्योंकि यदि वे परिक्रमा का अपना दायित्व त्यागते हैं, तो स्वयं सूर्य के द्वारा क्रोधरूपी गुरुत्वाकर्षण शक्ति से दण्डित किए जाने का डर उन्हें सताता रहता है। यदि वे यह कर्म छोड़कर, दंड से बचते हुए दूर भाग जाएं, तो सूर्य के बिना वैसे ही अव्यवस्थित, निरर्थक व निर्जीव हो जाएंगे, जैसे दिमाग के बिना शरीर।

अब पृथ्वीदेह के बारे में कहते हैं। नदियाँ इसकी रक्तवाहिनियाँ हैं, जो अपने देहदेश की वृद्धि के लिए समस्त पोशकतत्त्वों को लाती हैं, तथा अपशिष्टों को ले जाती हैं। पृथ्वी-देहदेश के पशु इन अपशिष्टों से अपने व अन्य समस्त पुरुषों के लिए पोशकतत्त्वों व खाद्यान्नों का संश्लेषण करते हैं। इसके गंध, रूप, शब्द अदि संदेशवाहक गुण, इसके स्नायुतंत्ररूप और उसमें कार्य करने वाले घटक, उसके देहपुरुष हैं; जिस तरह से सृष्टिदेह के संदेशवाहक, नारदमुनि हैं। इसके सभी जीव भी इसके देहपुरुष हैं। पर्वत आदि उच्च भूमियाँ व पत्थर आदि पदार्थ इसकी अस्थियाँ हैं। मिट्टी इसका माँस है। इसके वृक्ष व जीवाणु, देहपुरुष के अन्दर विद्यमान उन शरणार्थी पुरुषों की तरह हैं, जो कि उद्योगों में अनेक महत्त्वपूर्ण पदार्थों का निर्माण करते हैं। इसकी वायु का स्पंदन इसका श्वास-प्रश्वास है, जिससे कि इसके अंतर्गत विद्यमान सभी पुरुषों को ऑक्सीजन मिलती है। सूर्य, अग्नि व इसके अपने देहपुरुषों के क्रियाकलापों से इसमें गर्मी उत्पन्न होती है। इससे इस स्वस्थ पृथ्वीदेह का तापमान स्वस्थ पुरुष की भांति स्थिर बना रहता है। इससे इसके देहपुरुष स्फूर्ति व दक्षता के साथ कार्य करते रहते हैं। आजकल विभिन्न प्रदूषणों से क्लिष्ट भूदेह ज्वर की हालत में है। अपनी अत्यधिक क्रियाशीलता से इसके देहपुरुष इसका शारीरिक तापमान बढ़ा रहे हैं। यदि समय रहते इस ज्वर की चिकित्सा नहीं की गई, तो शीघ्र ही इसके देहपुरुषों का जीवन दूभर हो जाएगा। वैसे तो थोड़े समय के लिए उत्पन्न ज्वर जरूरी होता है, क्योंकि यह आक्रान्ता शत्रुओं को हतोत्साहित करता है। परन्तु ज्वर का लगातार बने रहना हानिकारक होता है। पृथ्वीदेह के सिंह आदि व अन्य मूढ़ पुरुष इसकी पुरुषसंख्या को नियंत्रण में रखते हैं, तथा साथ में महामारियों को भी रोकते हैं। जिस प्रकार स्थूलदेह के स्वास्थ्य के लिए वातपित्तकफ़ आदि का संतुलन आवश्यक है, उसी प्रकार पृथ्वीदेह के लिए भी। पृथ्वीदेह में इसको संतुलित करने वाले वैद्य समाजसुधारक कहलाते हैं।

अब मानवीय स्थूलदेह पर लौटते हैं। देहपुरुषों की सभाएं भी होती हैं। उनका अतितीव्रता से आपसी संवाद ही उनकी सभा है। एक सभा में देहकिसान पानी की कमी का मुद्दा उठाते हैं। उनके साथ ही दुसरे देहपुरुष भी जल की कमी से उत्पन्न शक्तिहीनता; पाचन, मलनिष्कासन, श्वसन और परिवहन आदि सभी कार्यप्रणालियों में रूकावट का बखान करते हैं। सभी पुरुषों ने इन बातों का अनुमोदन किया। जलमंत्री ने यह बात राजा के समक्ष रखी। फिर राजा ने बड़े देश से जल को आयात करने का आदेश दिया। जल से भरी गाड़ियाँ देहदेश को पानी उपलब्ध करा कर लौट गईं। ऐसा तब तक किया गया, जब तक कि वर्षा नहीं हो गई। वर्षा होने पर वर्षा का जल सीधे तौर पर ही देहदेश को उपलब्ध हो गया। फिर जल का दूर देशों से आयात रुकवा दिया गया। सिंचाई एवं जनस्वास्थ्य विभाग द्वारा निर्मित नालियों व जलकुंडों में पर्याप्त जल प्रवाहित होने लगा, जिससे सभी देहपुरुष जलस्रोतों से भरपूर व तुष्ट हो गए। कभी-कभी अतिवृष्टि होने पर जलविभाग के देहपुरुष पूरी दक्षता से जल को नदियों के रास्ते देहदेश से बाहर कर देते हैं, जिससे बाढ़ जैसी हालत पैदा नहीं होती। इसी प्रकार अनावृष्टि के दौरान नदी-नालों के जल को शोधन करने के उपरांत यन्त्र आदि की शक्ति से देहदेश के पुनः उपयोग हेतु चढ़ाया जाता है। जिस प्रकार देहसमाज की सभी क्रियाएं व अवस्थाएँ ईश्वरेच्छा के साथ होती हैं, उसी प्रकार स्थूलसमाज की भी होती हैं। स्थूलपुरुष यदि इस बात को समझें, तो उन्हें बंधन होने का कोई भी कारण नहीं है।

देहपुरुषों में स्मरण की वृत्ति यही है, जो वे मानवीय कर्मों को दक्षता के साथ पुनः-पुनः करते रहते हैं, यद्यपि अनासक्ति के साथ। कर्मविधि के स्मरण से ही देहपुरुष आवश्यकता के अनुसार भिन्न-भिन्न उत्पादों का उत्पादन करते रहते हैं, तथा भिन्न-भिन्न कार्यों को पहले की तरह ही करते रहते हैं। एक देहसैनिकों की श्रेणी तीव्र स्मरणशक्ति से संपन्न होती है। इसके सैनिक पुराने दुश्मनों को और उनको परास्त करने की नीति को जीवनपर्यंत स्मरण रखते हैं।

देहदेश में शासनपरंपरा अति उत्तम होती है। वहाँ पर प्रत्येक विभाग के ऊपर एक विभागाध्यक्ष पुरुषों का समूह नियंत्रण रखता है। वातानुकूलित कक्ष में काम करने वाले, यातायात विभाग के अध्यक्ष पुरुष, ऊर्जाचालित वाहकयंत्रों को चलाने व नियंत्रित करने के लिए वाहनचालक देहपुरुषों को आदेश देते हैं। यन्त्र में दोष उत्पन्न होने पर अभियंता देहपुरुष शीघ्रता से वहाँ पहुँचते हैं, और उन दोषों का निराकरण करते हैं। देहदेश में कार्यकर्ताओं का समूह इसीलिए बनाया जाता है, ताकि संगठित शक्ति प्राप्त हो, एक पुरुष के द्वारा की जा सकने वाली मनमानी का निवारण हो और लोकतंत्र स्थापित हो। उसी विभाग के कुछ पुरुष स्थानीय जनता के

सहयोग से, वहाँ की सड़कों व अन्य मार्गों को आवश्यकता पड़ने पर चौड़ा भी करते रहते हैं, खासकर तब, जब देहदेश के उस भाग से अन्न, वस्त्र आदि वस्तुओं व विभिन्न कार्यकर्ता पुरुषों की अधिक आपूर्ति के लिए सत्यापित मांगपत्र प्राप्त होता है। ऐसा तब भी होता है, जब उस क्षेत्र में यन्त्र आदि अन्तःसंरचनाओं का तथा उद्योग, भवन आदि बाह्यसंरचनाओं का काम तीव्रगति से चल रहा होता है। ऐसा युद्ध आदि के समय भी होता है। देहदेश के नीतिनिर्माता व नीतिनियंता देहपुरुषों के समूह, अपने-अपने कार्यों के अनुसार, पृथक-पृथक भवनों में रहते हैं। ये भवन शाँत, मनोरम व स्वच्छ स्थान पर बने होते हैं। ये भवन वातानुकूलित, स्वच्छ व विविध साधनों से सम्पन्न होते हैं। देहदेश के अधिकारी व मंत्री लोग यहाँ पर वातावरणीय व पारिवारिक विघ्नों से अछूते रहते हुए, शान्ति के साथ निवास करते हैं। सभी भवन साथ-साथ व एक ही सीमांकित क्षेत्र में बने होते हैं। इससे इनमें आपसी संवाद बेहतर होता है, जिससे देहदेश को सुचारु रूप से चलाने में मदद मिलती है। स्थूलदेश में भी तो ऐसा ही होता है, अधिकाँशतः। वास्तव में सभी देहपुरुष अनासक्ति के कारण आत्मरूप से सदैव अद्वयचिदाकाशरूप ही हैं, अतः आत्मरूप से सदैव शाँत हैं। देहदेश के अधिकारियों व मंत्रियों में उपलक्षित उपरोक्त शाँति तो केवल उनके शरीर और मन के संदर्भ में ही है।

स्थूलदेश की वाहकलौहश्रृंखला की तरह ही देहदेश में भी यन्त्रशक्ति से चलने वाली एक विशेष प्रकार की द्रवश्रृंखला विद्यमान होती है। इसके द्रवनदी के द्रव के धीमा होने पर तथा इसके मार्ग के संकरा होने पर इसके अन्दर तैरते हुए जीवनतत्त्व स्वतः रूप से बाहर निकलते रहते हैं, तथा देहदेश के अपशिष्ट पदार्थ अन्दर घुसते रहते हैं। वे जीवनतत्त्व देहदेश में सर्वत्र फैलते हुए, देहदेश को जीवित व चलायमान रखते हैं। पदार्थबहुल क्षेत्रों से जीवनतत्त्व पदार्थ नदी के अन्दर भी प्रविष्ट होते रहते हैं। इस नदी के अन्दर देहदेशसैनिक भी बहाकर ढोए जाते रहते हैं, जो युद्धग्रस्त क्षेत्रों में आवश्यकतानुसार बाहर कूदते रहते हैं। उग्रपन्थियों को निपटाकर वे सैनिक दूसरे स्थानीय मार्गों से उग्रपन्थियों को ढूँढते व मारते हुए, प्रवेश वाले मार्ग से अलग एक अन्य राजमार्ग से लौटते हुए, वापिस मुख्य राजमार्ग में पहुँच जाते हैं।

देहदेश में एक पृथक ऊर्जाविभाग भी विद्यमान होता है। इसके ऊर्जागृह, नियामक यन्त्र व कर्मचारी संपूर्ण देश में प्रचुरता से व्याप्त होते हैं। पृथ्वीदेश से ईंधन को आयात करके देहदेश के असंख्य अग्निकुंड रात-दिन नियंत्रित रूप से जलते रहते हैं। ये अग्निकुंड स्थूलदेश के तापविद्युतयंत्रों की तरह ही होते हैं। इनसे प्राप्त ऊष्मा व शक्ति से देहदेश के संपूर्ण क्रियाकलाप चलायमान रहते

हैं। आवश्यकता से अधिक ऊर्जा ऊर्जाभंडारण करने वाले यन्त्र में इकट्ठी कर ली जाती है, ताकि भविष्य में काम आए। वास्तव में देहसमाज की सभी क्रियाएं भंडारित करके रखी गई स्वच्छ ऊर्जा से ही संपन्न होती हैं, सीधी ऊर्जा से नहीं। यद्यपि स्थूलदेश में भी ऐसा ही होता है, पर वहाँ पर भंडारित ऊर्जा करोड़ों वर्ष पुरानी है, इसलिए अस्वच्छ है। वहाँ पर कुछ स्वच्छ ऊर्जा भी भंडारित की जाती है, यद्यपि बहुत सीमित मात्रा में। ऐसा ऊर्जा-भंडारण स्थूलदेश को देहदेश से सीखना चाहिए।

सभी देहपुरुष अपने प्रति किए गए सभी उच्च आदेशों को भली भांति पालते हैं, यद्यपि कई बार जो देहपुरुष देहदेशद्रोही हो जाते हैं, वे पालन नहीं करते, अथवा गलत ढंग से पालन करते हैं। यदि देहदेश-हानिकर आदेश उन्हें प्राप्त हो जाए, तो कुछ सभ्य देहपुरुष कई बार उनका पालन नहीं भी करते। कई बार बुद्धिभ्रम से भी वे सभी हानिकारक आदेशों का भी पालन करते हैं।

कई बार देहपुरुष कमजोर व बीमार हो जाते हैं। कई बार युद्ध की स्थिति होती है। कई बार देहदेश बहुत तेजी से प्रगति कर रहा होता है। इन सभी अवस्थाओं में अन्न की अत्यधिक आवश्यकता पड़ती है। अतः राष्ट्रपति की आज्ञानुसार, कृषि व पशुपालन विभाग का प्रबंधनिदेशालय देहदेशकृषकों को प्रचुर मात्रा में अन्न के उत्पादन का आदेश जारी करता है। साथ में, राष्ट्रपति या राजा के द्वारा अन्य पदार्थों को छोड़कर विदेशों से प्रचुर मात्रा में खाद्यान्न ही खरीदा जाता है, बेशक उसके लिए अधिक मूल्य ही क्यों न चुकाया जाए। खाद्यान्न के लिए आयात शुल्क भी घटा लिया जाता है। देहदेश के राष्ट्रपति अर्थात जीवात्मा का काम तो केवल विशेष परिस्थितियों को अनुभव करना ही है, जैसे कि आयात-निर्यात, विदेशनीति तथा अपने देश के विकास-पतन के सम्बन्ध में आदि-आदि। राष्ट्राध्यक्ष का विकास तभी होता है, यदि वह अनासक्तिपूर्ण दृष्टिकोण धारण करे व देहदेश के हित में काम करे। राजा का पतन तब अवश्यम्भावी है, जब वह आसक्तिमय दृष्टिकोण को धारण करता है, तथा देहदेश के विरुद्ध आचरण करता है। स्थूलदेश में भी तो ऐसा ही होता है। उसका कार्य केवल यही है कि वह अपने देहदेश के कर्मचारियों व जनता के सहयोग से विदेशरूपी अन्य देहदेशों से वस्तु-सेवायें प्राप्त करे तथा बदले में उन्हें भी ये प्रदान करे। विदेहदेशों से आयात की गई साधारण वस्तुएँ देहदेश द्वारा विकसित की जाती हैं, और उसके अपने परिचालन के लिए उपयोग में लाई जाती हैं।

देहदेश की अन्तरंग कार्यप्रणालियाँ तो मंत्रियों व अधिकारियों के द्वारा स्वतः चलाई जाती हैं, राष्ट्राध्यक्ष तो केवल उनकी गति ही बढ़ा सकता है। वह ऐसा प्रेम से भी कर सकता है, और दंड

देकर भी, यद्यपि प्रेम वाली विधि बेहतर होती है। देहदेश में केवल राजा ही आत्मबंधन को प्राप्त होता है, आसक्ति के साथ देहदेश की परिस्थितियों को अपने अन्दर अनुभव करने के कारण। देहदेश के अन्य सभी पुरुष सदामुक्त होते हैं।

जब देहदेश में शीतऋतु आती है, तब सीमा पर तैनात शीतसंवेदी पुरुष इसकी सूचना विशेष अधिकारीगणों को देते हैं, जो कि फिर तापकयंत्रों को प्रज्वलित करने का व ठंडी हवाओं को अन्दर प्रविष्ट कराने वाले सीमाक्षेत्रों को दीवार आदि से ढकने का आदेश देकर देहपुरुषों की रक्षा करते हैं। अत्यधिक शीत होने पर राजा को भी सूचित कर दिया जाता है, जो फिर खाद्यान्न के आयात को बढ़ाता है, जिससे देहपुरुष अधिक अन्न खाकर, शारीरिक श्रम व व्यायाम के द्वारा अपने शरीर के तापमान को बनाए रखते हैं। राजा जी सीमा की दीवारों को, और अधिक ऊंचा व पक्का करवा देते हैं। पुरुषों की तरह ही देहपुरुष भी ऋतु के अनुसार अपने वस्त्र आदि बदलते रहते हैं, ताकि अपने शरीर का तापमान आरामदायक बना कर रख सकें। पुरुष की तरह ही देहपुरुष भी देहदेश के सभी कार्य करने में स्मर्थ होते हैं, परन्तु वे केवल एक काम में ही विशेषज्ञता अर्जित करते हैं, जिससे कि कार्य में दक्षता आए। वे विशेषज्ञता को आवश्यकता, स्थान, समय व समस्या के अनुसार हासिल करते हैं; यद्यपि एक बार विशेषज्ञ हो जाने पर, विशेषज्ञता का विषय अधिकाँशतः नहीं बदलते। वे यह विशेषज्ञता पुरुषों की तरह ही, उच्चतर सत्ता के लोभ में ही हासिल करते हैं।

यदि देहपुरुष बद्धपुरुष की तरह प्रवृत्ति में भाव व निवृत्ति में अभाव महसूस करते, तो वे प्रवृत्ति में आसक्त हो जाते, जिससे देहसमाज में नियमबद्ध सुव्यवस्था नहीं होती। प्रकारांतर से यह भी कह सकते हैं कि देहपुरुष आत्मा के स्थिर आनंद को काल्पनिक लहरें प्रदान करने के लिए ही मन को स्वीकार करते हैं, यद्यपि वे मन में आसक्त नहीं हो जाते। इससे वे न तो अभाव के कुँए में गिरते हैं, और न ही अपनी कर्तव्यपरायणता का परित्याग करते हैं। पुरुष भी कभी ऐसा ही था, पर कालान्तर में आसक्ति के कारण वह अभाव के गर्त में गिर गया और खाली कर्तव्यपरायणता ही उसकी झोली में बची रही।

लोभ व मोह के निर्वचन में, देहदेश की राजकुमारी के साथ विवाह के लिए, बहुत से देहवीरपुरुष राजमहल के सैनिकों से युद्ध करते हैं, और मारे जाते हैं। केवल एक ही वीर विवाह करने में स्मर्थ होता है। जीवित बचे हुए कुछ वीर राजकुमारी के दिव्य रूप-सौन्दर्य को भुला नहीं पाते और मोहजनित ग्लानि से आत्महत्या कर लेते हैं। कुछ वीर देहदेश से बाहर खदेड़ दिए जाते

हैं। कुछेक अपरिचित देहदेश में अपने को जीवित रखने में अक्षम पाते हैं, और बाहर भाग जाते हैं। फिर बाहर के जंगली इलाके में असामाजिक व हिंसक सूक्ष्मपुरुषों के द्वारा मारे व खा लिए जाते हैं।

किसी समय देहदेश के सैनिक चतुर सूक्ष्मशत्रुओं के द्वारा गुमराह कर दिए जाते हैं। इससे वे मदोन्मत्त होकर देहदेशभक्तों व नैष्ठिक पुरुषों को मारने लग जाते हैं। यह तब तक चलता रहता है, जब तक कि देहदेश के महाराजा संघर्षस्थान पर प्रचुर संसाधनों व मध्यस्थों को भेजकर संघर्षविराम नहीं करवा देते। कई बार ईर्ष्या के वशीभूत होकर, कोई देहपुरुषों का संगठन देशहितकारी कर्म नहीं करता, अपितु संपूर्ण देहदेश के लिए आबंटित भोगों का स्वयं ही प्रचुरता से उपभोग करने लग जाता है, और साथ में बर्बाद भी बहुत करता है। ऐसे आलसी देहपुरुष अपने वंश को तीव्रता से बढ़ाते हैं। इससे असंख्य सामाजिक देहपुरुष कमजोर व रोगी हो जाते हैं, और बहुत से मर भी जाते हैं।

जिस प्रकार स्थूल समाज में महिलाएँ कार्यदक्षता और स्फूर्ति के मामले में पुरुषों से कमजोर होती हैं, उसी प्रकार देहसमाज में भी होती हैं। वहाँ भी इनका मुख्य कार्य प्रजनन से सम्बंधित ही होता है। जब देहदेश के किसी भाग में कार्यक्षम पुरुषों की कमी महसूस होती है, तभी उस भाग की स्त्रियाँ उस क्षेत्र के पुरुषों के द्वारा प्रजनन के लिए उत्तेजित की जाती हैं। तब उत्तम, सुरक्षित व बहुत से भोगों से भरे-पूरे अन्तःप्रकोष्ठों में पाली गई वे महिलाएँ नवजातों को जन्म देती हैं।

देहसंसार में प्रतिदिन संघर्ष चला रहता है, यद्यपि कई बार भीषण संग्राम भी हो जाता है। देहदेश को दूसरे देशों से विभाजित करने वाली सीमा कान्टेदार तारों से बंधी होती है। जब प्रतिकूल वातावरण से या प्रचंड उग्रवादियों के द्वारा यह तार किसी स्थान पर तोड़-मरोड़ कर या काट कर नष्ट कर दी जाती है, तब अनेक उग्रवादी वहाँ से अन्तःक्षेत्र में प्रवेश कर जाते हैं। गृहयुद्ध के समय व देहदेश में फैली अव्यवस्था के समय, बाहरी शत्रुओं के आक्रमण अक्सर सफल भी हो जाते हैं। देहदेश में एक सैनिकश्रेणी उन सूक्ष्मशत्रुओं को बन्दूक आदि अस्त्रों से मारती है, फिर उसके सैनिक शत्रुओं के शवों में से कुछेक को त्रितीयश्रेणी के देहसैनिकों के समक्ष प्रस्तुत करती है, पोस्टमोरटम व अन्य निरीक्षणों के लिए। फिर परीक्षणों से प्राप्त जानकारियों के अनुसार, त्रितीय श्रेणी के सैनिक उस विशेष जाति के उग्रवादियों के लिए, विशेष संकेतों से युक्त विशेष वस्त्रों व कवचों का उत्पादन करते हैं। ये वस्त्र व कवच उग्रवादियों के लिए हितकारी, आरामदायक व अतिप्रिय होते हैं, इसलिए वे इन्हें सहर्ष पहन लेते हैं। उन संकेतों को लक्ष्य बनाकर ही द्वितीय

श्रेणी के सैनिक उनको अपनी बंदूकों का निशाना बनाते हैं। इस प्रकार की क्रिया व संरचना बहुत ज्यादा त्रुटिरहित होती है, क्योंकि इससे निर्दोष देहजनता का बचाव हो जाता है। यह व्यवस्था स्थूलदेश की गुप्तचरव्यवस्था की तरह ही होती है। तब तक काश्तकार देहपुरुष भी तेजी से वहाँ पहुँच जाते हैं, जो नई तारें लगाकर, तार की बाड़ को पहले के जैसा अखंड बना देते हैं, यद्यपि वह तार-तंतु पहले वाले मूलतंतु के जैसा व उच्च कोटि का नहीं होता है, फिर भी काम चल पड़ता है। स्थूलदेश में भी तो ऐसा ही देखा जाता है, अक्सर। स्थूलसंग्राम की तरह ही सूक्ष्मसंग्राम में भी महान जनहानि, विशेषतः सैनिकहानि होती है, जिसे पूरा करने के लिए सूक्ष्म सैनिकस्त्रियाँ सैनिकगुणसंपन्न पुत्रों को तीव्र वेग से पैदा करती हैं। बाल्यकाल में वे भी बालसुलभ चंचलता, कोमलता व अनुभवहीनता के कारण युद्ध करने में अक्षम जैसे ही होते हैं। देहराष्ट्रीयसेना में युवावस्था के उपरांत नवनियुक्त सैनिकपुत्रों के लिए, सैनिकप्रशिक्षण की व्यवस्था की जाती है। अनुभवी, सेवानिवृत्त व वृद्ध सैनिकों के द्वारा भी विकट परिस्थितियों में अपना योगदान दिया जाता है। देहदेश में कमांडो नामक, अति त्वरित कार्यवाही करने वाले सैनिक भी होते हैं, जो छोटे व हल्के शरीर वाले होते हैं, यद्यपि हृष्ट-पुष्ट व फुर्तीले बहुत होते हैं।

वास्तव में, देहदेश में कोई भी पुरुष बेरोजगार नहीं होता, क्योंकि वहाँ पर जनसंख्यापूरक पुरुषों के लिए भी बेरोजगारी भत्ता, अर्थात सभी जीवनयापन की सुविधाएँ उपलब्ध करवाई जाती हैं। इससे किसी भी देशवासी को, पेट के लिए असामाजिक कार्य नहीं करने पड़ते, जिससे देशव्यवस्था सर्वोत्तम बनी रहती है। वहाँ पर कुछ भी काम न करने वाले और सिर्फ खाना खाने वाले पुरुषों को भी कर्मठ माना जाता है, क्योंकि वे भी तो उपभोग के द्वारा देहदेश की व्यवस्था को चला रहे होते हैं। ऐसा केवल अनासक्ति से ही संभव है, अन्यथा मेहनती पुरुष उनके विरुद्ध विद्रोह करने लग जाते। काश कि ऐसी अनासक्ति और अहंकारहीनता स्थूलपुरुषों में भी होती। जिन देहपुरुषों को बेरोजगारी भत्ता (unemployment allowance) मिलता है, वे देहदेश के साथ सदैव जुड़े हुए रहते हैं, और तप, योग, भक्ति आदि के अभ्यास से अपनी आत्मा में ही संतुष्ट रहते हैं। परन्तु दूसरी ओर बहुत से बेरोजगारी भत्ता पाने वाले स्थूलपुरुष, कई बार अपनी आत्मा से संतुष्ट न होकर अपने राष्ट्र के विरुद्ध हो जाते हैं, और बहुत से असामाजिक कार्यों के साथ जुड़ जाते हैं।

कई बार उग्र आक्रमण के समय, संपूर्ण देहदेश में व खासकर युद्ध-प्रभावित क्षेत्रों में अग्नि जला दी जाती है। इससे ठण्ड व अन्धकार के आदी सूक्ष्मशत्रु हतोत्साहित हो जाते हैं। देहसैनिक

परमवीर होते हैं, ठीक भगवान हनुमान की तरह, क्योंकि वे अपने नाश के भय से युद्ध से कभी पीछे नहीं हटते। ऐसा इसलिए होता है, क्योंकि अनासक्ति के कारण वे अपनी देह के नष्ट होने पर भी मृत्यु को प्राप्त नहीं होते, अपितु उन्हें स्वर्ग अर्थात मोक्ष ही प्राप्त होता है। स्थूलवीरसैनिकों को भी तो इसी तरह मोक्ष या स्वर्ग का मिलना बताया गया है।

देहपुरुषों का चिंतन सर्वश्रेष्ठ चिंतन है, क्योंकि यह अनासक्ति को उत्पन्न करता है। पूर्वोक्त आक्रान्ता शत्रु देहदेश के औद्योगिक, जनसंख्याबहुल, अतिक्रियाशील, समृद्ध व सुकोमल अन्तःस्थानों पर कब्ज़ा करना चाहते हैं। ऐसा करने के लिए वे अनेक मार्गों का विध्वंस करते हुए आगे बढ़ते हैं। इससे उन मार्गों से वस्तु-सेवा प्राप्त करने वाले क्षेत्रनिवासियों, वहाँ पर पहुंचे सैनिकों व स्थानीय सुरक्षाबलों की खाद्यजल-आपूर्ति बाधित हो जाती है। वे लघु मार्गों से चहुँ ओर फैलते हुए, असंख्य निर्दोष देहपुरुषों को मारते हैं। देहदेशवासियों के लिए निर्दिष्ट भोगों को वे स्वयं भोगते हुए, अपनी जनसँख्या को तीव्रता से बढ़ाते रहते हैं, तथा उन अपनी नवजात संतानों को भी युद्ध के लिए प्रशिक्षित करते रहते हैं। आगे बढ़ते हुए वे असंख्य भवन, सरोवर, उद्योग आदि संरचनाओं को नष्ट करते जाते हैं। इस तरह वे दुष्ट सूक्ष्म आक्रमणकारी पुरुष पूरे देश को व मुख्यतया प्रभावित क्षेत्र के जनजीवन को नष्ट करने में कोई कोर-कसर बाकी नहीं छोड़ते।

इस तरह का देवासुर संग्राम हर स्थान पर प्रतिक्षण चला रहता है। और तो और, पुरुष के मस्तिष्क में विद्यमान भावों के बीच में भी यह युद्ध निरंतर जारी रहता है। एक ही अनुभव कभी राक्षस, तो कभी देवता बन जाता है। जब वह अनुभव भौतिक रूप में होता है, तो वह राक्षस होता है, क्योंकि वह पुरुष को देहपुरुष-रूपी परमात्मा से दूर ले जाता है। वही अनुभव जब शुद्ध मानसिक बन जाता है, तो वही देवता बन जाता है, क्योंकि वह देहपुरुष की ओर ले जाता है। योगी लोग अनुभव को देवरूप बनाने के लिए योग, समाधि आदि का आश्रय लेते हैं। भोले लोग अनुभव को राक्षसरूप में ही स्वीकार करते हैं। अनुभव के ये दोनों रूप एक-दूसरे से घृणा करते हैं। यही हर स्थान पर होने वाले देवासुर संग्राम का मुख्य कारण है। इसीलिए भौतिक व आध्यात्मिक, दोनों पक्षों को एकसाथ सिद्ध करने के लिए और उनके बीच के संघर्ष से बचने के लिए शविद का द्वैताद्वैत का मध्यमार्ग ही सर्वोत्तम है।

कुछ चालाक सूक्ष्मशत्रु देहदेश को एकदम से नष्ट नहीं करते, बल्कि बड़ी चतुराई से उसका लम्बे समय तक उपभोग करते रहते हैं। अत्यंत मूर्ख व पापपूर्ण शत्रु तो बड़ी तेजी से ब्रम्हास्त्रों या परमाणु अस्त्रों के साथ पर्वतों को तोड़ते हुए, जलाशयों व अन्नभंडारों को अपने अपशिष्ट पदार्थों से

भरकर दुर्गन्धयुक्त करते हुए आगे बढ़ते हैं। जो कुछ भी धन-जन उन्हें दिख जाए, वे उसे नष्ट कर देते हैं। इससे संपूर्ण देहदेश शीघ्र ही नष्ट हो जाता है। वास्तव में, ऐसे सूक्ष्मशत्रु बहुत तेज, बहुत निष्ठुर व मायावी होते हैं; अतः देहसैनिक उनका प्रतिकार नहीं कर सकते और शीघ्र ही घुटने टेक देते हैं। प्रायः ऐसे मौकों पर उच्च तकनीकी से युक्त विदेशी सहायता प्राप्त की जाती है। यह सहायता भी तभी कारगर रहती है, यदि अत्यधिक विनाश से पहले व प्रारम्भ में ही, बिना देरी किए प्रयोग में लाई जाए।

देहपुरुष ही ब्रम्हा होता है। वह अकेला ही संपूर्ण देहब्रम्हांड को रचता है, जिसमें विविध प्रकार के पर्वत, मार्ग, सरोवर, जीव, उद्यान, खेत, वन, नदियाँ व समुद्र विद्यमान होते हैं। वह इसके वायु, अग्नि आदि पांच महाभूतों की रचना करता है। वह इसके अन्दर विद्यमान रूप आदि पञ्चतन्मात्राओं, हस्त आदि पञ्चकर्मेन्द्रियों तथा चक्षु आदि पञ्चज्ञानेन्द्रियों की रचना करता है। उसके मन में अनेक रूपाकारों से युक्त विविध देहब्रम्हांडों के सूक्ष्मरूप विद्यमान रहते हैं, जिनके अनुसार ही वह उनके चित्र-विचित्र स्थूल रूपों की रचना करता है। वही उस देहब्रम्हांड का पालन करते हुए नारायण बन जाता है, सभी देहपुरुष जिसके अवताररूप ही हैं। इस देहब्रम्हांड के मध्य भाग में महान यज्ञ प्रतिक्षण चलता रहता है, जिसकी विशाल अग्नि में समर्पित की गई आहुतियों से इसके सभी देवी-देवता सदैव तृप्त होते रहते हैं। सभी देहपुरुष इस देहब्रम्हांड के देवरूप ही होते हैं, उनकी जीवनमुक्तता के कारण। जब इस देहब्रम्हांड की आयु पूरी होने पर यह कृषकाय हो जाता है, तब वही परमपुरुष, महादेव के रूप में प्रकट होकर, अपने रुद्रगणों के साथ अपनी क्षुधानिवृत्ति के लिए इसका संहार व भक्षण करने लग जाते हैं। अंत में वे भी इसके साथ ही चिदाकाश में विलीन हो जाते हैं। जैसे ईश्वर अन्दर से एकरूप होकर भी, बाहर से देशकाल के अनुसार भिन्न-भिन्न देवी-देवताओं का रूप ग्रहण करते हैं, उसी प्रकार देहपुरुष भी अन्दर से एक ही पुरुषोत्तमरूप हैं, परन्तु बाहर से देशकाल के अनुसार विभिन्न आश्चर्यमय रूपों को ग्रहण करके, अपने कर्तव्यों का निर्वहन पूरी निष्ठा व लगन के साथ करते रहते हैं, और जीवों को जीवन प्रदान करते रहते हैं। अतः देहपुरुष, सूक्ष्मदेव व देहदेव आदि सभी शब्द पर्यायवाची हैं। देहपुरुष देवताओं की तरह ही कर्मप्रधान, अनासक्त, अद्वैतमय व जीवन्मुक्त होते हैं। वेदों में भी इसी तरह से सम्पूर्ण शरीर में, विशेषतः धेनु-शरीर में देवों का वास बताया गया है। हिन्दू लोकधारणा में यह भी आता है कि हनुमान जी ने अपनी छाती को फाड़कर, वहाँ पर श्रीराम व माता सीता के दर्शन कराकर, संसार को अपनी भक्ति का प्रमाण दिया था। वास्तव में, वह आख्यान भी देहपुरुष की सत्ता को ही

प्रमाणित करता है। देवों की तरह ही देहपुरुष भी जीवों को जीने का आधार प्रदान करते रहते हैं। श्वसनतंत्र में उपस्थित देहपुरुष वायुदेवरूप ही हैं। इसी तरह देहजल का नियमन करने वाले देहपुरुष वरुणदेवरूप ही हैं। नेत्रस्थित देहपुरुष सूर्यदेवरूप ही हैं।

पुराणों में अनेक स्थानों पर देहब्रम्हांड का वर्णन किया गया है। वहाँ पर ब्रम्हांड का, समकेंद्रीय व वलयाकार द्वीपों के समूह के रूप में जो वर्णन आता है, वह वास्तव में हमारे शरीर का ही वर्णन होता है, क्योंकि "यत्पिण्डे तत्ब्रम्हान्डे" के अनुसार, जो कुछ भी ब्रम्हांड में है, वह सभी कुछ इस शरीर में भी उसी रूप में विद्यमान है। उन्हीं वलयाकार द्वीपों की तरह ही, हमारे शरीर में भी जैव-तत्त्वों की विभिन्न परतें (चर्म, मज्जा, झिल्ली, अंग आदि) होती हैं। सभी द्वीपों के केंद्र में, ऊंचा उठा हुआ जो सुमेरु पर्वत है, वह हमारा मस्तिष्क ही है। उस पर्वत पर, जिन सृष्टि-नियंत्रक देवताओं का वास बताया गया है, वे इस शरीर के मस्तिष्क में स्थित, देहनियंत्रक देहपुरुष ही तो हैं।

स्थूलपुरुष की तरह ही सभी देहपुरुष भी अपनी भलाई व विकास के लिए ही सदैव संलग्न रहते हैं, अतः देहदेश की भलाई व विकास स्वयं ही होता रहता है, क्योंकि एक स्वस्थ समाज में सभी की उन्नति एक-दूसरे से जुड़ी हुई होती है। अंतर बस इतना सा ही है कि ज्यादातर स्थूलपुरुष अपनी-पराई तरक्की व भलाई को देहपुरुषों की तरह भली भांति नहीं समझ पाते, अर्थात अहंकार-ईर्ष्या कर बैठते हैं।

समाजबाह्य सज्जनपुरुषों की तरह या पाले गए पशुओं की तरह ही, देहपुरुषों के बहुत से मित्रगण भी देहदेश के बाहर सुखपूर्वक घूमते रहते हैं, और वे अपनी भलाई के साथ ही देहदेश की भी भलाई करते रहते हैं। विपरीततः, कुछेक असामाजिक व दुष्ट सूक्ष्मपुरुष तो केवल अपनी ही भलाई में लगे रहते हैं। कुछ तो देहदेश को हानि पहुंचाने का भी काम कर देते हैं। ऐसे सूक्ष्मपुरुष भी अनेक स्थूलपुरुषों की तरह ही, अपनी पूर्ण व वास्तविक भलाई से अनभिज्ञ होते हैं। वे ज्यादातर दुर्जन, कुपोषित, अनियमित, स्वछतारहित, कुप्रबन्धी व फिजूलखर्ची करने वाले देहदेशों को ही परेशान करते हैं। यह उसी प्रकार घटित होता है, जिस प्रकार स्थूलशत्रु भी संसाधनविहीन, कुप्रबन्धी, अस्त-व्यस्त, अपव्ययी, अनियंत्रित, अनियमित, गृहयुद्ध/समस्याओं से घिरे हुए स्थूलराष्ट्रों को ही ज्यादातर रूप से अपना निशाना बनाते हैं।

देहदेश में वर्णित युद्ध में, देहशत्रुओं के प्रतिकार के लिए देहरक्षक भी अपने हाथों में अस्त्र-शस्त्र धारण करके; अश्व, रथ आदि जीववाहनों पर व स्वचालितयन्त्ररूपी वाहनों पर आरूढ़ होकर;

अपने सुरक्षित व भोगविलास से संपन्न अन्तःस्थानों से बाहर निकलकर, विभिन्न मार्गों का आश्रय लेकर, शत्रुओं द्वारा अधिगृहीत सीमाक्षेत्रों की ओर प्रस्थान कर देते हैं। उनके साथ अनेक प्रकार की खाद्य, पेय, अस्त्र, शस्त्र, औषधि आदि वस्तुएँ; पाचक, वैद्य, नाई, सफाईकर्ता आदि सभी सेवक-सहायक भी उन्हीं की तरह, अनेकविध वाहनों पर आरूढ़ कराए जाकर साथ ले जाए जाते हैं। घने जंगलों के बीच में शत्रुओं को देखकर बहुत से सैनिक छोटे-छोटे रास्तों से होकर, खुले जंगलों के समीप पहुँच जाते हैं, और गाड़ियों से उतरकर पैदल ही अन्दर घुस जाते हैं, क्योंकि वहाँ गाड़ियों को चलाने के लिए चौड़े रास्ते नहीं होते। बीहड़ सीमावर्ती क्षेत्र होने के कारण वहाँ चौड़े रास्ते बनाना मुश्किल होता है। वहाँ पर बेलों, वृक्षों, घास, चट्टानों, गुफाओं, पर्वतों, सरोवरों व नदी-तटों पर डर के मारे छिपे हुए शत्रुओं को ढूंढकर, उनके साथ अनेक युक्तियों से युद्ध करते हैं। वे एक दूसरों को मुष्टिका, गदा, तलवार, डंडे, पत्थर, आग, रसायन, बन्दूक, तोप आदि अस्त्र-शस्त्रों से और अन्य किन्हीं भी उपलब्ध घातक सामग्रियों से मारने लग जाते हैं। देहपुरुषों के प्रहार से मरे हुए शत्रुओं को निकटस्थ की ही किसी दाहसंस्कार-भूमि में ले जाया जाता है, और यथाप्रचलित लौकिक रीति के अनुसार भस्म कर दिया जाता है। उनके सूक्ष्म अवशेष भूमि में मिलकर देहदेश की मिट्टी की पोषकता को बढ़ाते हैं। देहदेशयुद्ध में जीवित बचे हुए सैनिक कुछ समय के लिए संघर्ष को भुलाते हुए व थकान को मिटाते हुए, दूसरे ही आनंदमय व मनोहर मार्गों से आनंद उठाते हुए, वापिस अन्तःपुर को लौट जाते हैं। सीमासुरक्षाबल के जवान वहीं ठहरे रहते हैं, ताकि वे छोटे-मोटे शत्रुओं को चुनौती देते रहें व आवश्यकता पड़ने पर केंद्रीय सुरक्षा बल को अपनी मदद के लिए बुला सकें।

कभी-कभार बहुत से सूक्ष्मशत्रु छद्मवेष धारण करके, थके हुए देहसैनिकों को ठगते हुए, उनके प्रहार से बच निकलते हैं। वे फिर जंगल के बीच तेजी से भागते हुए छोटे-छोटे मार्गों के अन्दर घुस जाते हैं, और फिर आगे का रास्ता आसानी से ढूंढ लेते हैं। इस तरह से वे राजमार्गों में प्रविष्ट हो जाते हैं। वहाँ पर भी शत्रुओं की टोह लेने के लिए घूमते हुए सैनिकों के समूहों द्वारा, उनमें से बहुत से मार दिए जाते हैं। कई बार कुछेक शत्रु उनसे भी भाग निकलते हैं, और अन्तःपुरों में प्रवेश कर बैठते हैं। वहाँ पर पैनी नजर रखने वाले द्वारपालों की लम्बी-चौड़ी श्रृंखलाओं व प्रचंड सुरक्षा व्यवस्था के द्वारा भस्मीभूत कर दिए जाते हैं, अन्यथा वे अन्तःपुरों को भीषण हानि पहुंचाते हैं, जिससे कि देहदेश के अस्तित्व पर ही खतरा पैदा हो जाता है।

देहदेश की तरह ही, स्थूलसृष्टि के अंतर्गत, स्थूलदेशों के अन्दर भी घुसपैठ होती रहती है। उदाहरण के लिए, कई बार पड़ौसी आकाशगंगादेहदेशों से अनेक देहपुरुष, अपने मूलदेहदेशों में फैली अव्यवस्था से परेशान होकर, नई आकाशगंगादेहदेश में प्रविष्ट होकर शरण लेते रहते हैं।

वास्तव में जब बहुत सारे देहपुरुष संसाधनों के अभाव से अशाँत व क्लांत हो जाते हैं, अथवा उनका राजा अपने देहदेश के प्रति समुचित ध्यान नहीं दे पाता, तभी देहसैनिकों में उतना दम-ख़म नहीं रहता कि वे पूरी सतर्कता बरते, जिससे फिर सीमा के निकट घूमते हुए शत्रुओं को अन्दर घुसने का मौका मिल जाता है। कई बार छद्मयोद्धा जाति के शत्रु सैनिकों के जैसी ही वेशभूषा धारण करके, देहदेश में सुरक्षित टिके रहते हैं। वे लम्बे समय तक देहदेश को धीरे-धीरे हानि पहुंचाते रहते हैं। देहपुरुष उनसे नाराज होते हुए भी, स्वजनमोह की तरह ही उनके प्रति मोह से ग्रस्त हो जाते हैं, और उन्हें बहिष्कृत नहीं कर पाते। अपने शरणदायक देहदेश के संसाधनों से सुसज्जित होकर उन शत्रुओं की संतानें, स्वामी देहदेश से बाहर निकलकर भी लम्बे समय तक दूसरे देहदेश पर आक्रमण करने का अवसर ढूंढती रहती हैं। कई बार बाहर के दुर्गम इलाकों में भोजन-पानी की कमी से वे शीघ्र ही मर भी जाते हैं। कुछ देशद्रोही देहपुरुष भी उन असामाजिक व पापी, विदेशी सूक्ष्मपुरुषों का पोषण व रक्षण करते रहते हैं। वे छद्मशत्रु देहदेश के संसाधनों से तृप्त होते हुए, अपनी जनसँख्या को तीव्रता से बढ़ाते हैं, और कई बार देहदेश के बाहर घूमते हुए शत्रुओं के लिए भी उन संसाधनों को प्रेषित करवाते हैं। जब इस प्रकार से व अन्य अनेक कारणों से देहदेश के संसाधन और देहपुरुष दोनों ही क्षीण हो जाते हैं, तब दुरस्त मौकों का फायदा उठाने वाले उन ऊटपटांग देहपुरुषों की संख्या एकदम से बढ़ जाती है। वे फिर पूर्वोक्त रीति के अनुसार ही प्रचंड युद्ध का ऐलान कर देते हैं, जिससे कि अनेक देहपुरुष भी मारे जाते हैं। ऐसी अवस्था में महान क्रांति या गृहयुद्ध पूरे देश में फैल जाता है, जिसमें सभी देहसैनिक अपनी पूरी शक्ति के साथ निर्मम बन चुके उन मित्रवेषधारी शत्रुओं से युद्ध करते हैं, और अंत में उनको मार देते हैं। बचे-खुचे देहशत्रुओं को देहदेश से बाहर निकाल देते हैं। उनका पोषण करने वाले बहुत से स्वदेशी देहपुरुष भी मृत्युदंड से दण्डित किए जाते हैं।

कई बार इसका उल्टा घटित हो जाता है, अर्थात देहदेश के अत्यधिक कमजोर हो जाने पर शत्रु सम्पूर्ण देश को नष्ट कर देते हैं, जिसके बाद नए देहदेश के निर्माण का मार्ग प्रशस्त हो जाता है। अनगिनत यन्त्र, उद्योग व महल-चौबारे बनाए जाते हैं। नए मार्ग व जल-नियमन के लिए नहरें-तालाब आदि खोदे जाते हैं। जंगल पुनः से विकसित हो जाते हैं। भूमियों को आकार व प्रकार दिया

जाता है। कहीं पर पर्वत तो कहीं पर समुद्र जैसी संरचनाएँ विकसित हो जाती हैं। विद्युत, संचार, ऊर्जा आदि सभी प्रकार के प्रशासन-विभाग पुनः प्रतिष्ठित कर दिए जाते हैं। अपशिष्टों का शोधन व निष्कासन करने वाली प्रणाली पुनः विकसित हो जाती है। इसी तरह, गृहोपयोग के बाद बचे हुए दूषितजल का पुनः प्रयोग करने वाली प्रणाली भी विकसित की जाती है। नए कुँए व बावलियां भी खोदी जाती हैं। दूसरे देशों से नए पालतु पशु मंगवाए जाते हैं, और जीवनयापन हेतु पाले जाते हैं। देहदेश का सारा सामाजिक ताना-बाना शुरु में ही पूरी तरह से विकसित हो जाता है, बाद में तो वह जनसँख्या वृद्धि के अनुसार आकार व विस्तार में ही बढ़ोत्तरी करता है, बस। नया राष्ट्राध्यक्ष शासन-बुद्धि से अपरिपक्व होता है, अतः वह राष्ट्रसंचालन की विधियाँ पड़ौसी राष्ट्राध्यक्षों से सीखता है, मात्र देखकर ही, अथवा विधिपूर्वक भी। कभी-कभार राजा की बुद्धिहीनता व अनुभवहीनता से समग्र सूक्ष्मराष्ट्र ही नाश के प्रति अग्रसर हो जाता है। पूर्ववत, विभिन्न श्रेणियों के साथ नई सेना बनाई जाती है, जिसमें विभिन्न नौजवान उपयुक्तता के अनुसार नियुक्त व प्रशिक्षित किए जाते हैं। मंत्रीगणों व सभासदों के साथ विचार-विमर्श के उपरांत ही नई विदेशनीति निर्धारित की जाती है। पड़ौसी देहराष्ट्रों के साथ मधुर सम्बन्ध बनाए जाते हैं। साथ में, पड़ौसी देहदेशों से सावधान भी रहना पड़ता है, क्योंकि वे अधिक शक्तिशाली व परिपक्व होते हैं। विभिन्न विभागों में कर्मचारियों की नई नियुक्तियां देश, काल व योग्यता के अनुसार, तीव्रता के साथ की जाती हैं। लोगों की कमी को पूरा करने के लिए जनसँख्या तेजी से बढ़ाई जाती है। नए व कम अनुभवी लोगों की बहुलता के कारण नया देहदेश सुकोमल व अस्थिर होता है। देहदेश के पुनर्विकास के लिए देहपुरुषों की उत्पादकता व कर्मठता चरम पर होती है, और साथ में लोक-लुभाविनीं भी। ऐसी जनव्यस्तता के कारण देहदेश कई बार शत्रुओं से आसानी से ग्रस्त हो जाता है। शत्रुओं का मुकाबला करते हुए देहदेश का विकास कुछ समय के लिए ठहर सा भी जाता है। कई बार देहदेश की व्यस्तता, प्रतिकूल वातावरण, तनाव आदि हालातों के अनुरूप उसे समुचित पोषण, व्यायाम व जीवनचर्या आदि जरूरी जीवनतत्त्व नहीं मिल पाते। इससे शत्रु और अधिक प्रबल हो जाते हैं, तथा उस के विभिन्न भागों को क्षति पहुँचाने लग जाते हैं। विशेषतया सीमाक्षेत्र के भूभाग अधिक दुष्प्रभावित होते हैं। कभी सूक्ष्मशत्रु समुद्रमार्ग से आक्रमण कर देते हैं, और देहदेश की नदी के प्रवाह के विरुद्ध तैरकर या सूक्ष्म जलयानों में सवार होकर, देहदेश के मुख्य दूषितजलशोधक यन्त्र तक पहुँच बना लेते हैं, तथा उसे दुष्प्रभावित करते हैं। इससे समस्त देहदेश जहरीले पानी से विषाक्त हो जाता है, और वहाँ की जनता त्राहि-त्राहि करने लग जाती है। साथ

में, जल में घुले हुए खनिज आदि लाभदायक पदार्थों को भी वे त्रुटियुक्त शोधकयन्त्र बचा नहीं पाते, जिससे वे नदी से होते हुए, देहदेश के बाहर निकलकर बर्बाद हो जाते हैं। कुछ सूक्ष्मशत्रु हाईटेक (hightech) होते हैं, जो वायुयान में सवार होकर, आकाशमार्ग में मंडराते हुए, विमानसहित ही मुख्य राजद्वारों से देहदेश के अन्दर प्रविष्ट हो जाते हैं। वे दूसरे देहदेश के जेट-यान (jet-plane) को बंधक बना लेते हैं, और विमानचालकों का अपहरण करके, उनसे विमान को मनोवांछित दिशा में उड़वा कर, उससे शत्रुदेश की तबाही प्रारम्भ कर देते हैं।

इसी तरह, कई बार देहदेश की सीमाओं के मुख्यद्वारों पर भ्रष्ट पहरेदारों की लापरवाही व अन्य कारणों से सूक्ष्मशत्रु देहदेश के अन्दर प्रविष्ट हो जाते हैं। फिर देहसैनिकों की निगाहों से बचकर या उन्हें युद्ध में हराकर, वे देहदेश का विनाश करना शुरु कर देते हैं। कभी समुद्रतट पर आक्रमण करके जलयानों के मार्ग में रुकावट पैदा करते हैं, जिससे देहदेश का आयात-निर्यात बाधित व दुष्प्रभावित हो जाता है। कई बार कोयला, पैट्रोल आदि ऊर्जा के स्रोतों के आयात-निर्यात का मुख्य द्वार खुला रह जाता है। यह स्थिति देहदेश के पुरुषों के तनाव में होने से अक्सर पैदा होती है। ऐसी हालत में वे सूक्ष्मशत्रु सीमा के निकट स्थित ऊर्जासंयंत्रों को भयंकर क्षति पहुंचाते हैं। वे ऐसा धूम्रविस्फोटकों से करते हैं, या ऑक्सीजन के प्रवाह में रुकावट डालकर। कई बार वे अन्य मुख्य द्वारों से प्रविष्ट होकर, सीमा के निकट स्थापित दूरसंचारयंत्रों को अपना निशाना बनाते हैं। इससे प्रभावित देहदेश अन्य देहदेशों व स्थूलदेश से अलग-थलग पड़ जाता है, जिसके कारण सूचनाओं की कमी से महान हानि भी कई बार हो जाती है। कई बार अग्नि, जल, वायु व पशु आदि के द्वारा भग्न सीमाभित्ति की लम्बे समय तक भी मुरम्मत नहीं की जाती, जिससे शत्रु आसानी से अन्दर प्रवेश कर जाते हैं। कई बार ठोक-मरम्मत करने में स्वदेशी तकनीकों के असफल होने पर, विदेशों से भी तकनीकें आयात की जाती हैं। कई बार देहदेशप्रेमी पुरुषों के द्वारा प्रारम्भ में उनका विरोध किया जाता है, परन्तु कालान्तर में लाभ प्रकट हो जाने पर मान भी जाते हैं, यद्यपि तनिक संकोच के साथ। छोटी-मोटी मुरम्मतों के असफल होने पर कई बार संपूर्ण प्रणाली ही, जैसे कि अन्नभंडारणप्रणाली या जलशोधनप्रणाली आदि भी आयातित की जाती है। देहपुरुषों के द्वारा वह विदेशी प्रणाली पूर्णतया बहिष्कृत कर दी जाती है। आन्दोलन के अति उग्र हो जाने पर देहपुरुषों को खासकर देहसैनिकों को शाँत करने का काम किया जाता है। बैठकों के दौर चलते हैं। देहपुरुषों के नेताओं के साथ राष्ट्राध्यक्ष के द्वारा गुप्त मंत्रणाएं करवाई जाती हैं। कई बार विदेशियों की मध्यस्थता भी स्वीकार की जाती है, यद्यपि उसके दुष्प्रभाव अलग होते है, वैसे

विद्रोह से तो कम ही होते हैं। दोनों पक्ष संतुष्ट हो जाने पर शाँत हो जाते हैं, और राष्ट्राध्यक्ष भी चैन की साँस लेता है। कई बार अपनी अत्यधिक दीन-हीन दशा में, देहदेश किसी विदेशी को अपने देश का शासन चलाने के लिए आमंत्रित भी करता है, यद्यपि देश की कमान वास्तविक राजा के पास ही रहती है। वैसे धीरे-धीरे बढ़ते हुए जनविद्रोह के कारण वह विदेशी शासन अस्थायी ही होता है।

कुछ सूक्ष्मशत्रुओं की गहरी चालाकी को देखिए कि कैसे वे देहदेश को धीरे-धीरे हानि पहुंचाते हुए, उसकी प्रचंड सुरक्षापंक्तियों को उत्तेजित नहीं करते। जिस प्रकार स्थूलदेश के जमाखोर प्रकार के असामाजिक लोग अपने समाज को वंचित रखते हुए, भारी मात्रा में खाद्य पदार्थों को छिपाकर रख लेते हैं; उसी प्रकार असामाजिक सूक्ष्मपुरुष भी अन्नभंडारों में विष फैलाकर सारे अन्न को अपने भविष्य के प्रयोग के लिए सुरक्षित कर देते हैं। आदि दैवीयगुण स्वतः ही उत्पन्न हो जाते हैं।

कई बार देहदेश शत्रुदेशों से कुछेक उदार, कम आक्रामक व धार्मिक सूक्ष्मशत्रुओं को अपने देश में बहला-फुसला कर ले आता है, और उनकी खूब सेवा करता है। वे लोग शत्रु की युद्धनीति को जानने वाले होते हैं, अतः सेवा से प्रसन्न होकर देहसैनिकों के साथ सम्मिलित युद्धाभ्यास के लिए उकसावे में आ जाते हैं। ये सभी सूक्ष्म-उग्रवादी वैसे तो व्यवस्थित देहदेशों के स्थायी निवासी नहीं होते, अपितु असामाजिक जनजातीय समूहों से सम्बंधित होते हैं। फिर एक गूढ़ युद्ध-नीति के तहत इन सूक्ष्मशत्रुओं को पूरे देहदेश पर आक्रमण करने का अवसर प्रदान किया जाता है। वे अपने शरणदायक देहदेश के खिलाफ खुलकर लड़ भी नहीं पाते। इसी तरह के मौके व बहाने की उम्मीद में बैठे देहदेशसैनिक उन्हें शीघ्र ही अपने चक्रव्यूह में फंसाकर नष्ट कर देते हैं, वह भी बिना किसी जन-धन की स्पष्ट हानि के। ऐसा करके देहदेशसैनिक उस विशेष जाति के देहदेशशत्रु की पूरी युद्धनीति को व्यावहारिकता के साथ समझ जाते हैं, और भविष्य में हमेशा के लिए या कुछ समय के लिए उनसे निश्चिन्त हो जाते हैं। कुछ देहासुर अर्थात देहदेशशत्रु बहुत चालाक होते हैं। वे अपनी संभावित हार को देखकर देहदेवों अर्थात देहपुरुषों के समक्ष नतमस्तक होकर युद्ध को टाल देते हैं। वे झूठ-मूठ ही देहदेवों की प्रशंसा करते हुए घोर तपस्या का ढोंग करने लग जाते हैं। जैसे ही देहदेवता कुछ शिथिल पड़ जाते हैं, वैसे ही वे छल से देवताओं को मारना शुरु कर देते हैं। देहदेव तब तक मार खाते रहते हैं, जब तक कि देहस्वर्ग का इंद्र मिथ्या अहंकार को छोड़कर देहसृष्टि के नारायण की शरण नहीं ले लेता। तब नारायण के सान्निध्य से प्राप्त शक्ति-स्फूर्ति से अनासक्त,

अनुशासित व स्वस्थ हो जाता है, जिससे संपूर्ण देहस्वर्ग भी वैसा ही हो जाता है। उसकी देवसेना भी फिर शीघ्र ही असुरों पर विजय प्राप्त कर लेती है।

वैसे तो देहराजा के अनुभव के बिना व उच्चाधिकारियों के हस्तक्षेप के बिना ही निम्न स्तर की गतिविधियाँ व मुठभेड़ें देहदेश में हमेशा ही चलती रहती हैं, परन्तु इन सीमित क्षेत्रों की गतिविधियों से शत्रु के खिलाफ वह महान व स्थायी प्रतिरोध उत्पन्न नहीं होता, जो योजनानिर्मित व संपूर्णदेशीय युद्ध से होता है। प्रबल शत्रुओं के साथ युद्ध में अधिकाँश देश नष्ट हो जाते हैं, यदि उनके पास विदेशी अस्त्र न हों तो। उच्च तकनीकों से युक्त विदेशी अस्त्रों से सुसज्जित, कुछेक देहदेश ही उन्हें जीत सकते हैं। विरले देश ही बाहरी सहायता के बिना ही अपनी दृढ़ता व अदम्य साहस से जीत हासिल कर पाते हैं। स्थूलदेशों में भी तो प्रायः ऐसा-वैसा ही कुछ देखा जाता है।

देहदेश की सुरक्षा के लिए मुख्यतः तीन प्रणालियाँ कार्य करती हैं। प्रथम स्तर की प्रणाली में सामान्य-साधारण शत्रु-अवरोधक वस्तुएँ जैसे कि सीमा-भित्ति, शत्रु की सूचना देने वाले यंत्र व शत्रु को मारने वाले साधारण सुरक्षाकर्मी मुख्यतया विद्यमान होते हैं। यह सभी कुछ, स्थूलदेश की सीमा-बाड़ व पहरेदारों की तरह ही है। दूसरे स्तर की सुरक्षा-पंक्ति में संपूर्ण देहदेश में साधारण सैनिक घूमते रहते हैं, जो वक्त पड़ने पर आक्रमण वाले स्थान पर इकट्ठा होकर, मद से भरे हुए सूक्ष्मशत्रुओं का पल भर में ही, बड़ी सटीकता व तेजी से वध कर देते हैं। स्वदेशी पुरुषों को वे उस समय तनिक भी हानि नहीं पहुँचने देते। क्योंकि स्थूलपुरुष आत्मपूर्ण नहीं होते, इसीलिए निर्दोष देहपुरुषों के रक्षण में कई बार उतने स्मर्थ नहीं हो पाते, अतः कई बार उन्हें सिर्फ शत्रुओं को कैद करने का ही आदेश प्राप्त होता है। मृत्युदंड देने या न देने का फैंसला लम्बे सोच-विचार के बाद न्यायालय द्वारा दिया जाता है। स्थूलदेश की ही तरह, देहदेश में भी प्रथम रक्षापंक्ति के अर्धसुरक्षाकर्मी व सीमासुरक्षाकर्मी कम शक्ति वाले होते हैं, अतः छल करते हुए, शत्रुनाशक विषैले खाद्य व पेय पदार्थों को उनके समक्ष फैलाते रहते हैं। कवच या बुलेटप्रूफ जैकेट धारण करने वाले सीमारक्षक, कवचों आदि की सहायता से, शत्रुओं के अस्त्र-शस्त्रों से अपनी रक्षा करते हैं। वे सीधे चलाए जाने वाले डंडों, कोड़ों आदि से शत्रुओं को पीछे धकेलते रहते हैं। साथ में वे आंसूगैस, पत्थरों, जल की बौच्छारों आदि दूर से चलाए जाने वाले व कम शक्ति के अस्त्रों से भी उन्हें सीमा से दूर हटाते रहते हैं। इससे अनेक शत्रु मर जाते हैं, और अनेक भाग जाते हैं। ऐसे सैनिक सबसे अधिक वीर होते हैं, क्योंकि वे तब तक घातक अस्त्र-शस्त्रों के बिना ही अपने शरीर पर उद्दंड

शत्रुओं के वार झेलते रहते हैं, जब तक कि सूचना देकर बुलाए गए व पूरी तरह से तैयार सैनिक वहाँ नहीं पहुँच जाते। स्थूलदेश में भी तो रक्षा व्यवस्था पूर्णतया इसके समान ही होती है। वास्तव में हम सभी स्थूलपुरुष आत्मभ्रमित देहपुरुष ही तो हैं। यह आत्मविभ्रम शविद के अनवरत सान्निध्य से अनायास ही धीरे-धीरे नष्ट हो जाता है।

जब कोई विशिष्ट, प्रबल व उत्साही शत्रुसेनापति अपनी सेना के साथ पूर्वोक्त दोनों प्रकार की रक्षापंक्तियों को चकमा देकर देहदेश के काफी अन्दर प्रवेश कर जाता है, तब उनमें से बंदी बनाए गए शत्रु गुप्तचरसैनिकों की तीसरी श्रेणी के पास ले जाए जाते हैं। फिर वे सैनिक उन शत्रुओं के वस्त्रों में छिपाई हुई, उनकी अपनी अतिप्रिय वस्तुओं (जैसे कि चाय, कॉफ़ी, तम्बाकू, भांग आदि, लत पैदा करने वाली) को पहचान लेते हैं, और अपने उद्योगों में प्रचुरता से उनका उत्पादन करने लग जाते हैं। नए नियुक्त किए गए गुप्तचर सैनिकों को भी वे उनका उत्पादन करना सिखा देते हैं, ताकि कार्य में तेजी आए। इस सारे जटिल क्रियाकलाप को शुरु करने के लिए कुछ ज्यादा ही समय चाहिए होता है। इस तरह कई प्रचंड शक्ति वाले शत्रु तो क्रियाकलाप के शुरु होने से पहले ही देहदेश का विध्वंस कर देते हैं। कई तीक्ष्ण बुद्धि वाले देहदेशशत्रु इस तीसरी रक्षाप्रणाली के जागृत होने से पहले ही संघर्षमुक्त प्रकोष्ठों में अपने को छिपा लेते हैं, जैसे कि अधिकारियों के वातानुकूलित कक्षों में, अतिस्वच्छतायुक्त उत्पादन क्षेत्रों में; पर्वत, नदी, वन आदि विकट मार्गों व पहुँच वाले क्षेत्रों में आदि-आदि। जो शत्रु अपने को छिपाने में अस्मर्थ रहते हैं, वे अपने हाथों में अपनी अतिप्रियवस्तुओं को उठाए हुए इधर-उधर शिकार की तलाश में घूमते फिरते रहते हैं, यद्यपि गुप्तचर सैनिकों के द्वारा दूर से ही पहचाने जाने के कारण खुद ही उनका शिकार बन जाते हैं। कुछ विशालकाय देहदेशसैनिक तो पौराणिक काली माता की तरह ही होते हैं, जो कि शत्रुओं को समेत वाहन व अस्त्र-शस्त्रों के निगल जाते हैं।

यह तृतीय श्रेणी की सुरक्षा व्यवस्था इसलिए बनी है ताकि देहशत्रुओं के साथ प्रबल संघर्ष के बीच में, देहसैनिकों के द्वारा कोई स्वदेशी नागरिक हताहत न हो जाए। कुछ चतुर जाति के देहशत्रु देहदेशसैनिकों के बीच में होने वाली उस आपसी व जटिल संवाद प्रक्रिया का अवरोधन करते हैं, जो उनके सफाए के लिए जरूरी होती है। कई बार नागरिक देहपुरुषों और देहसैनिकों के बीच की संवाद प्रणालियों, जैसे कि दूरभाष-यंत्रों की तारों आदि को काट दिया जाता है। इससे सैनिकों को नागरिकों के ऊपर किए गए हमले की सूचना ही नहीं मिल पाती है। कई बार यदि सूचना मिलती है, तो संक्षिप्त व अपूर्ण रूप से, जिससे सैनिक, देहपुरुषों के कष्टों का सही ढंग से आकलन नहीं कर

पाते। यह इसी तरह होता है, जैसे कि हिटलरनामकपुरुष ने गुप-चुप तरीके से यातना शिविरों में निर्दोष पुरुषों को मरवाया था। संपूर्ण देहदेश के सहयोग से निर्मित, स्वदेशी सुरक्षा के उपकरण व प्रणालियां ही बेहतर होती हैं, क्योंकि आयात किए गए विदेशी उपकरणों व प्रणालियों के तोड़ को शत्रु शीघ्र ही ढूंढ लेते हैं, क्योंकि वे वैश्विक तकनीकें खुले रूप में विद्यमान होती हैं, जिन्हें वे आसानी से चुरा लेते हैं। साथ में, विदेशी तकनीकों के खराब होने पर उनको दुरस्त भी आसानी से नहीं किया जा सकता। सैनिकदेहपुरुष आश्चर्यमयी जीवनलीला दर्शाने वाले देहपुरुषों में उत्कृष्ट होते हैं, व उनकी इन्द्रियाँ आदि भी बहुत संवेदनशील होती हैं। वे अपने शत्रुओं को पैनी नजर से देखकर, कानों से उनका कोलाहल सुनकर, नाक से उनकी गंध को ग्रहण करके, जीभ से उनके झूठे खाद्य-पेय पदार्थों के स्वाद को पहचानकर और त्वचा से उनको स्पर्श करके, उनकी उपस्थिति का पूरा ब्यौरा इकट्ठा करते हैं। फिर उनकी शक्तियों व दुस्सहास का मन में अंदाजा लगाकर या पुराने अनुभव को याद करके, अपनी तीव्र बुद्धि से कुछ निश्चय-निर्णय पर पहुँचते हैं। उस निर्णय के अनुसार ही वे अपने हाथों में अनेक प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों को उठाकर, उन मतवाले शत्रुओं की ओर आगे बढ़ते हैं, तथा मुंह से शत्रु के उत्साह का नाश करने वाली भयंकर गर्जना के साथ, हृदयविदारक शंखनाद भी करते हैं। भीषण युद्ध के परिश्रम से उत्पन्न तेज भूख-प्यास के कारण वे लगातार भोजन खाते व पानी पीते रहते हैं, और अपशिष्टों का उत्सर्जन करते रहते हैं। खाद्य व पेय पदार्थों की आपूर्ति देहदेश के राजा द्वारा भारी मात्रा में विदेशों से आयात करके की जाती है। संक्षेप में कहें तो उस युद्ध में देहदेश को भारी कीमत चुकानी पड़ती है, और कई महीनों तक चलने वाले संसाधनों का उपयोग चंद दिनों में ही हो जाता है। वहीं पर अन्तःपुरों में विद्यमान क्षत्रिय-देहपुरुष सभी सुख-सुविधाओं से संपन्न होकर, खाते-पीते हुए, काम-क्रीड़ा में संलग्न रहते हैं। प्रशिक्षण, व्यायाम, खेल आदि के सिवाय और काम तो वहाँ होता नहीं उनके लिए, अतः सीमा पर चल रहे युद्ध में देहसैनिकों की भारी क्षति की सूचना पाकर, वे तीव्रता से संतानों को उत्पन्न करके, अपनी आवश्यक जनसंख्या को स्थिर बनाए रखते हैं। उनके लिए खाद्य-पेयादि की आपूर्ति व प्रशिक्षण आदि का इंतजाम भी बढ़ा दिया जाता है।

देहदेश की स्वयंवर प्रथा भी बहुत प्रसिद्ध है। विशेष बात यह है कि उस प्रथा में खेल-कूद आदि के मुकाबले भी शामिल होते हैं। नए देश के विकास के लिए पितृदेश में सर्वगुणसंपन्न एक कन्या वृद्धि-विकास को प्राप्त होती है। हिरन के समान ही उसकी आँखें गंभीर, गहरी व खुली हुई होती हैं। कमर उसकी पतली होती है। उसकी नजर मधुर व शान्तिदायक हास्य से भरपूर होती है, खिले

हुए कमल की तरह। हथिनी के जैसी मदमस्त व भोली-भाली चाल से वह सबका मन मोह लेती है। उसके परिधानों से इत्र की खुशबू चहुँ ओर दूर-दूर तक फैलती रहती है। उत्तम रेशम की सुर्ख लाल रंग की साड़ी में वह दूर से अग्नि-शिखा की भाँति प्रतीत होती है। उसके घुंघराले व लम्बे -लम्बे बाल बड़े सुन्दर सलीके से उसके कन्धों, कपोलों व पीठ पर फैले होते हैं। उनका रंग सुनहरा होने के कारण वे स्वर्ण के तंतु जैसे जान पड़ते हैं, जिन पर चोर-उचक्कों की नजर पड़ते ही ठहर सी जाती है, और वे भी मंत्रमुग्ध से होकर चोरी करना ही भूल जाते हैं। उसके कपोल आदि जो अंग वस्त्रों से बाहर निकले होते हैं, वे पर्वत के श्वेत शिखरों व बर्फ से भरी हुई नालियों-खाइयों की तरह प्रतीत होते हैं। लाल रंग के निशान उसके कपोलों पर चुम्बन का आभास करवाते हैं। उसकी लज्जायुक्त मुस्कान मातृत्वगुण से भी सम्पन्न होती है। श्वेत वर्ण के वक्ष पर ढके हुए स्तन ऐसा प्रतीत करवाते हैं, जैसे कि चांदी से निर्मित भूमि को चोर-उचक्कों से बचाने के लिए उसके शिखरों को वृक्षादि से ढक दिया गया हो। उसके स्वर्णिम केशों में गूंथे हुए विभिन्न प्रकार के पुष्पों से मनमोहक खुशबू आती रहती है। वह अपने केशों को उच्च कोटि की काम कला के प्रयोग से बांधे रखती है। उसकी देह स्वस्थ व यथोचित होती है। वह न तो मोटी प्रतीत होती है, और न ही कमजोर। हाथों में लाल रंग के चमकते हुए स्वर्णिम कंगन ऐसे प्रतीत होते हैं, जैसे कि दो-दो सूर्य एक साथ उग आए हों। उसके पैरों में सुनहरी पायजेबें ऐसी भली जान पड़ती हैं, जैसे कि मंदिर में सोने की घंटियां बज रही हों। वह मधुर व कोयल जैसी आवाज में कुछ गुनगुना रही होती है, जैसे कि भंवरे बोरियत से बचने के लिए गुंजायमान हो रहे हों। वह शानपूर्ण, कलापूर्ण व सौन्दर्यपूर्ण ढंग से ऐसे चल रही होती है, जैसे कि अपनी ही गुनगुनाहट के संगीत पर लयबद्ध रूप से नृत्य कर रही हो। कई बार उसके ढके हुए स्तन ऐसे डोलने लगते हैं, जैसे कि पर्वत शिखरों पर भूकंप सा आ गया हो। वह सोलह श्रृंगारों से सजी-धजी होती है। वास्तव में, हम कला, संगीत, नृत्य, साधना आदि विधाओं को इसलिए अपनाते हैं, ताकि हमारी कार्यक्षमता बढ़े। क्योंकि देहपुरुष सदैव पूर्णतः कार्यक्षम होते हैं, इसलिए इसका अर्थ यह है कि वे इन जैसी सभी विधाओं में भी पूर्णतया निपुण होते हैं।

वह राजकन्या असंख्य कन्याओं के बीच में तब उभर कर सामने आती है, जब परीक्षक-दल के द्वारा उन सबकी परीक्षा कराई जाती है। यह स्वाभाविक ही है कि उपरोक्त सर्वगुणसंपन्न कन्या ही विजयी घोषित होती है। वैसे तो देहदेश की सभी कन्याएं सर्वगुणसंपन्न होती हैं, परीक्षा तो केवल औपचारिकता मात्र ही होती है। जो कन्या बाल्यावस्था से ही सर्वोत्तम प्रकार की तुष्टिपुष्टिवर्धक

परिस्थितियाँ प्राप्त करती है, वही परीक्षा में विजयी होती है। हर पल अंगरक्षक दल के साथ अनेक सहेलियाँ उसके साथ विद्यमान रहती हैं। जब वह विवाहयोग्य हो जाती है, तब देहदेश के महाराजा अपने मनचाहे गुणों से संपन्न, किसी एक देहदेश से, अनेक सर्वगुणसंपन्न राजकुमारों को अपनी कन्या के स्वयंवर के लिए आमंत्रित करते हैं। वास्तव में, नवदेश केवल दो देशों के सहयोग से ही, इसलिए बना होता है, ताकि उसमें दोनों देशों के गुणों के साथ, उन गुणों के आपसी मेल से नए गुण भी विकसित हो सकें। उसमें बहुत से देशों का साझापन इसलिए नहीं करवाया जाता, क्योंकि दो से अधिक के बीच में कड़वाहट व तनातनी उत्पन्न हो ही जाती है, जैसे कि कहा भी है कि "तीन तिगाड़ा, काम बिगाड़ा"। उपरोक्त राजकुमारों ने अपने शीश पर त्रिलोकशोभनीय स्वर्णमुकुट पहने होते हैं। उनके बुद्धि, शौर्य आदि गुणों की परीक्षा हेतु, उनके मार्ग में भी अनेक प्रकार की रुकावटें पैदा कर दी गई होती हैं, जिस वजह से बहुत से वीर राजकुमार वीरगति को प्राप्त हो जाते हैं, तथा बहुत सारे चोट, दुर्घटना आदि के कारण विकलांग हो जाते हैं, जिससे वे मुख्य प्रतिस्पर्धा के प्रारम्भ में ही हार जाते हैं। कुछ कुमार लम्बी यात्रा के कारण ज्यादा ही कमजोरी, थकान, बेचैनी व भूख-प्यास महसूस करते हैं। कई राजकुमार जो तैरना नहीं जानते, वे रास्ते में लगने वाली नदी में डूब कर मर जाते हैं। कुछेक घने जंगलों में लुटेरों के द्वारा मार दिए जाते हैं। कुछ नौजवान भूख के मारे जल्दबाजी में ही जंगल के जहरीले कंद-मूल खाकर मर जाते हैं, तो कुछ पहाड़ से गिरकर काल-कवलित हो जाते हैं। कुछ नौसखिये तो रास्ते के पहाड़ को भी नहीं लांघ पाते। कुछ कुमार दौड़ प्रतियोगिता जीतने के लिए एक-दूसरे को रोकते हैं, पीछे धकेलते हैं, तथा आपस में झगड़ा करते हैं। कई गबरू जवान रास्ता ही भटक जाते हैं, जिन्हें देहदेश के सुरक्षाबल डाकू-लुटेरा समझकर मार गिराते हैं।

अंततः वधुपक्षीय देहदेश के रनिवास में, अपेक्षित थोड़ी सी संख्या में ही विवाहार्थी कुमार पहुँच पाते हैं। वे अनेक बाधाएँ पार करके आए हुए कुमार बल, बुद्धि, धैर्य आदि गुणों में सर्वोत्तम होते हैं। वहाँ पर परीक्षा अपने अंतिम पड़ाव पर पहुँच जाती है। वह परीक्षा मानसिक ज्ञान व कौशल पर आधारित होती है। उस परीक्षा के अंत में वह राजकुमारी मंद- २ चाल से व चंचल-हँसमुख नजर से चारों ओर देखती हुई परीक्षाकक्ष में पहुंचती है। वह सभी कुमारों के पास बारी-बारी से, हँसमुख दृष्टि के साथ, कुछ समय के लिए रुकती है, और आँखों में आँखें डालकर देखती है। उस समय उत्तेजना, जोश व आनंद आदि कामरस के गुण कुमारों के मुख पर स्पष्ट दिखाई देते हैं। अंत में वह चयनित राजकुमार के पास ठहरती है, और उसके गले में वरमाला डाल देती है।

फिर वह विवाहोत्सव अति हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है। उसमें सभी प्रकार के दिव्य व्यंजन व पकवान बनाए जाते हैं। अन्य जो भी भोग-विलास की वस्तुएँ व सेवाएं सृष्टि में उपलब्ध हैं, वे सभी उस विवाह में आए हुए अतिथियों व स्थानीय निवासियों को उपलब्ध करवाई जाती हैं। विविध साज-सज्जाओं व रौणकों से भरपूर भवनों में सभी देहपुरुष मनोवांछित भोग भोगते हैं। कुछ तो लालच के कारण ज्यादा भी खा लेते हैं, और फिर बीमार पड़ जाते हैं। विवाहमहोत्सव के शाँत हो जाने पर बारात को विदा कर दिया जाता है। वह बारात वापसी के दौरान, रास्ते में एक शाँतियुक्त स्थान पर बनाए गए, सुन्दर व सभी सुख-सुविधाओं से संपन्न एक विश्रामगृह में, कुछ समय के लिए ठहराई जाती है। वह विश्रामगृह पितृदेहदेश ने ही अपनी सीमा के अन्दर, सीमा से तनिक दूरी पर बनाया होता है। कुछ समय के बाद महाराजा के जामाता उनकी राजकन्या के साथ एक अति मनोहर पुत्र को पैदा करते हैं। वह पुत्र बालचन्द्रमा की तरह ही चमकीला व गोल-मटोल होता है। उसके पालन-पोषण आदि की व्यस्तता, उसके प्रति लार-दुलार आदि व अन्य आपसी संसर्ग से होने वाले सुखों से मोहित होकर, वे दोनों ही नए देहदेश की स्थापना के अपने उत्तरदायित्व को भूल जाते हैं, और उस छोटे से विश्रामगृह में ही लम्बा वक्त बिता देते हैं। वे वहाँ पर पूरी तरह से वधुपक्षीय देहदेश पर ही निर्भर रहते हैं, और अयाचित दहेज़ में मिली हुई विभिन्न वस्तुओं/सेवाओं, जैसे कि वस्त्र, आभूषण, विभिन्न साजो-सामान, पशु, वाहन, सखी-सहेली, नौकर-चाकर आदि से गुजारा चलाते हैं। फिर जब संसाधन सीमित पड़ने लगते हैं, तब उन्हें होश आता है, अतः वे आगे के सफर पर निकल पड़ते हैं। वधुदेश के सीमान्त भाग में व वरदेश के निकट, एक निर्जन, परन्तु प्राकृतिक संसाधनों से भरपूर छोटा सा प्रदेश होता है, जहाँ पर उस युवराज-परिवार के लिए एक अति सुन्दर व वातानुकूलित भवन बनाया हुआ होता है। वहाँ पर राजकन्या के पितृदेश के द्वारा भेजे गए भोगों से आनंदित होता हुआ वह युगलपरिवार अनेक प्रकार के वनों, उपवनों, पर्वतों, सागरों, नदीतटों, आश्रमों, तीर्थों व अन्य मनोरम स्थानों में सुखपूर्वक भ्रमण करता हुआ पहुंचता है। उस दौरान वह आपस में हास्य-विनोद आदि के साथ-साथ अठखेलियाँ करता हुआ, लताओं के झूलों में झूलता हुआ, पवित्र जलों में स्नान करता हुआ, सुगन्धित पुष्पों को सूंघता हुआ, पुष्प-क्रीड़ा करता हुआ, पर्वतों पर चढ़ता हुआ, टेढ़े-मेढ़े बर्फ के मैदानों पर फिसलता हुआ, विविध प्रकार के चित्र-विचित्र विमानों में बैठकर सुदूर आकाश में उड़ता हुआ तथा चाँदनी भरी रातों में रास-लीलाएं करता हुआ बहुत ही आनंदित होता है।

इस प्रकार वह राजपरिवार असीमित उल्लास के साथ उस पूर्वनिर्दिष्ट भवन में पहुंचता है। कुछ दिवस विश्राम के उपरान्त, उस परिवार के नवविवाहित किशोर, सुगन्धित व पुष्पाच्छादित स्वर्णशय्याओं के आश्रय से, सर्वगुणसम्पन्न संतानों की प्राप्ति के लिए गर्भाधान संस्कार का आयोजन करते हैं। कुछ समय पश्चात उस निर्जन प्रदेश में, अनेक सुरों से सजे हुए, बालसुलभ संगीत के बोल गुंजायमान हो उठते हैं। राजसुलभ भोग-विलासों के साथ; महल में समस्त महिलाओं के अधर रूपी भंवरों द्वारा छुए जाते हुए कमल जैसे मुख वाले व स्त्रीरूपी निर्मल जलाशय द्वारा गोद में उठाए जाते हुए कमल जैसे शरीर वाले वे राजबालक, अति सुखपूर्वक तरीके से जल्दी ही किशोरावस्था में प्रवेश कर जाते हैं। इसके साथ ही वे भी अपने वयोवृद्धों की तरह ही, देशकाल से अतीत आनंद देने वाले गृहस्थ धर्म का पालन पूरी तत्परता व तन्मयता के साथ करने लग जाते हैं। इससे वह राजवंश दिन दुगुने और रात चौगुने ढंग से बढ़ता हुआ संपूर्ण प्रदेश में व्याप्त हो जाता है।

नया देहदेश बनने के समय, जैसे ही सारे विभाग बन कर तैयार हो जाते हैं, वैसे ही नए देश को सुचारू रूप से चलाने के लिए एक राजा को भी चुन लिया जाता है। उपयुक्त जीवात्मा को ही राजा के रूप में बैठाया जाता है,क्योंकि देहदेश की तेज व बड़ी भारी भौतिक तरक्की के लिए, उसे प्रचंड व मूर्खतापूर्ण तरीके से चलाने की जरूरत होती है। इसके लिए आत्मबद्ध व अहंकारी शासक की जरूरत होती है, जो कि जीवात्मा के रूप में उपलब्ध हो जाता है। इसके लिए अनेक जीवात्माओं की आपस में परीक्षा कराई जाती है। जो जीवात्मा नए देहदेश के अनुसार सभी योग्यताओं से सम्पन्न हो, उसे ही राज्याभिषेक कराकर राजगद्दी पर बैठाया जाता है। मुक्त और साधु लोग कभी भी राजपद की इच्छा नहीं रखते, क्योंकि उन्हें इस पर बैठकर बद्ध जीवात्माओं की तरह बंधन में पड़ने का कोई शौक नहीं होता। यद्यपि वे गुरु के रूप में नए राजा को सुशासन व सन्मार्ग की शिक्षा देने के लिए, कभी-कभार देहदेश के राज-काज को अपनी इच्छा से चलाते भी हैं।

जब अहंकार से रहित व निर्लिप्त रहते हुए भी, पुत्रदेश पितादेश द्वारा उपलब्ध कराए हुए सारे खाली स्थान को भर देता है; तब वह भूमि, साधनों व संसाधनों का और अधिक विस्तार चाहता है। राज्यों के विस्तार की यह प्रवृत्ति स्थूलसृष्टि में भी समान रूप में नजर आती रही है। यद्यपि राजा पुत्रमोह से बंधा होता है, परन्तु फिर भी वह उससे ज्यादा स्थान पुत्रदेश को विस्तार करने के लिए नहीं दे सकता, क्योंकि यदि वह ऐसा करता है, तो उसकी अपनी सत्ता के लिए भी खतरा

पैदा हो सकता है। तभी नई जिस्म-सल्तनत में दबाव व घुटन में जी रहे देहपुरुष एक महान जन-आन्दोलन शुरु कर देते हैं। इससे परेशान होकर नया सुल्तान अपने शरणदायक सुल्तान के समक्ष अपनी महान पीड़ा का बखान करता है। उसकी उस पीड़ा से क्षुब्ध होकर, महाराजा अपने देश के बाहर व अपने निकट ही एक कम जनसंख्या वाले क्षेत्र में उसके लिए समुचित जमीन का प्रबंध करता है। राजा इस बात का पूरा ध्यान जरूर रखता है कि उसे वहाँ पर मनचाहे विस्तार व स्वतन्त्र जीवनयापन का भरपूर मौक़ा मिले। तब महाराजा विशाल जनसैलाब को स्थानांतरित करने के लिए, अपने देहदेश के सीमाक्षेत्र से गुजरते हुए राजमार्ग के अंतिम छोर के निकट बने हुए आतंरिक मुख्यद्वार को खोलने का आदेश देते हैं। वास्तव में यह आदेश नहीं, अपितु राजा की इच्छा होती है। देहदेश के मुख्यालय में स्थित सम्बंधित मंत्री, उनकी इस इच्छा को ही उनका आदेश समझ लेता है। फिर वह मुख्यालय में ही अपने निकट तैनात सम्बंधित विभाग के सर्वोच्च अधिकारी को आदेश अग्रसारित करता है। सर्वोच्च अधिकारी उस आदेश पर तीव्र संज्ञान लेते हुए उसे जरूरी टिप्पणियों के साथ समस्याग्रस्त क्षेत्र के स्थानीय अधिकारी को अग्रसारित करता है। वह स्थानीय अधिकारी फिर उपरोक्त उच्च अधिकारियों व मंत्रियों के सहयोग से विभिन्न कर्मचारियों को तैनात करता है, और समस्त गतिविधियों का सही ढंग से सञ्चालन करता है। उस मुख्यद्वार से परे व अंतिम छोर पर बने हुए बाहरी मुख्यद्वार तक अनेक प्रकार के सुरक्षाबलों को तैनात कर दिया जाता है, ताकि दूसरे देहदेशों से व निर्जन क्षेत्रों से ऊटपटांग किस्म के सूक्ष्मपुरुषों के अवैध प्रवेश को रोका जा सके। जब देहपुरुषों के कारवाँ बाहरी मुख्यद्वार के निकट पहुँच जाते हैं, तो वह द्वार भी खोल दिया जाता है। शास्त्रों-पुराणों आदि में जो नौ द्वारों वाली पुरी आदि के रूप में शरीर का वर्णन आता है, वह शविद के अनुसार ही तो है।

दोनों मुख्यद्वारों के बीच में तैनात सुरक्षाबलों की प्रचंड क्रियाशीलता के लिए तथा देहपुरुषों के सैलाब को उनके साजो-सामान के साथ दूर इलाके में स्थानांतरित करने के लिए काफी ज्यादा शक्ति व ऊर्जा की आवश्यकता पड़ती है। इसके लिए पर्याप्त मात्रा में भोजन, पानी, वस्त्र आदि जरूरी वस्तुएँ व सेवादारी करने वाले स्थानीय देहपुरुषों की फौज वहाँ पर भेजी जा रही होती है। इन वस्तु-सेवाओं की निर्विघ्न आपूर्ति के लिए सड़कें व अन्य मार्ग यथासंभव रूप से चौड़े कर दिए जाते हैं, तथा उनपर जमे मलबे, बर्फ, घास-फूस आदि बाधाओं को हटा दिया जाता है। उन मुरम्मत किए गए मार्गों पर तब अनेक प्रकार के वाहन; विभिन्न वस्तुओं, सैनिक-देहपुरुषों व अन्य कर्मचारी-देहपुरुषों को उठाकर आसानी व तेजी से दौड़ रहे होते हैं। उस देहराष्ट्रविभाजन के

कारण दोनों देशों के लोगों को बहुत ज्यादा पीड़ा झेलनी पड़ती है। दोनों देशों की शक्ति व संसाधनों को गंभीर क्षति पहुंचती है। ऊटपटांग लोगों, दुर्घटनाओं व अन्य अनेक वजहों से दोनों ही देशों का, विशेषकर नवजात देहदेश का जीवन संकट में पड़ जाता है। अनगिनत देहपुरुष अपने दोगले मन की चपेट में आ जाते हैं। वे न तो इस देहदेश के हो पाते हैं, और न ही उस देहदेश के। इस प्रकार से उस विकट परिस्थिति में, दोनों ही पक्षों के देहपुरुष काफी ज्यादा संख्या में हताहत हो जाते हैं।

कई बार बाहर की ओर कूच कर रहे देहपुरुषों की भीड़ बहुत अधिक होती है, व उनकी गाड़ियां भी बड़ी-बड़ी होती हैं। कई बार निर्दिष्ट राजमार्ग व राजद्वार अवरुद्ध होते हैं, तो कई बार द्वाररक्षकों की अक्षमता व अन्य सम्बंधित कमियों के कारण, भिन्न-भिन्न आकार-प्रकार के राजद्वार ठीक ढंग से नहीं खुल पाते। ऐसे में, देहपुरुष उस सीमाक्षेत्र के, खाद्य-पेय की कमी वाले व चोर-उचक्कों से भरे हुए, उजाड़ स्थानों पर ही फंसे रह जाते हैं। उनका जीवन संकट में पड़ जाता है। ऐसे में, राजा को तीव्रता से सूचित कर दिया जाता है। वह बहुत दुखी होते हुए, देहपुरुषों की दर्द को महसूस करता है। पड़ौसी देशों की सलाह के अनुसार, उसके द्वारा द्वारों व मार्गों को चौड़ा करने का निर्णय लिया जाता है। उन्हें चौड़ा करने के लिए व उन पर गाड़ियों-काफिलों को गुजारने की खातिर ऊर्जा के लिए, पड़ौसीदेशों की सहायता ली जाती है। यदि कठोर व चट्टानी भूभाग के कारण, मार्गों को चौड़ा न किया जा पा रहा हो, तो उचित पैमाइश (survey) के बाद, नए मार्ग का निर्माण किया जाता है। कई बार, तंग मार्गों व द्वारों में से ही, देहपुरुषों की गाड़ियों को, उच्च शक्ति के इंजनों वाली मशीनों से बलपूर्वक खिंचवाया जाता है। इसमें सावधानी बरतनी पड़ती है, क्योंकि अत्यधिक बलप्रयोग से देहपुरुषों की गाड़ियां टूट सकती हैं, और उन्हें गंभीर रूप से चोटें भी लग सकती हैं। साथ में, यदि बीच के तंग रास्ते में ही फँस जाएं, तो उनका दम भी घुट सकता है। ऐसे में भी, नए मार्ग के निर्माण को ही अधिक अहमियत दी जाती है। वह फिर पड़ौसी राजाओं की सहायता से, एक सुगम जैसे दिख रहे पहाड़ को खुदवा कर, एक नया राजमार्ग बनवा लेता है। उस नए निर्गमन-मार्ग पर सुरक्षा व्यवस्था ज्यादा अच्छी नहीं होती है, व अनेक कारणों से, एकदम से बढ़ाई भी नहीं जा सकती। वास्तविक व विशिष्टकार्यसमर्पित राजद्वारों पर तो बहुत लम्बे समय से सुरक्षा-व्यवस्था विकसित हो रही होती है। अतः उनकी बराबरी नवनिर्मित व कामचलाऊ राजद्वार नहीं कर सकते। इसी कारण से, देहपुरुषों के काफिलों के गुजर जाने के एकदम बाद, उस खोदे गए मार्ग को, हटाए गए मिट्टी-मलबे से पुनः भरना पड़ता है, ताकि वह

स्थान पूर्ववत स्थिति में लौट आए, अन्यथा शत्रु अन्दर घुस सकते हैं। बहुत से शत्रु तो वैसे भी अन्दर घुस ही जाते हैं, जिनके सफाए के लिए विदेशी शस्त्रास्त्र पहले से ही सुसज्जित करके रखने पड़ते हैं। यदि देहपुरुषों को निकलने के लिए शीघ्रता से नया मार्ग न बनवाया जाए, तो उनको चोर-लुटेरे तबाह कर देते हैं। फिर अपनी विजय से उत्साहित वे शत्रु, मूलदेहदेश पर ही हमला बोल देते हैं। इस तरह से, देहदेश को उन शत्रुओं से निपटने में काफी मुश्किलों का सामना करना पड़ता है। कई बार तो वे शत्रु देहदेश पर अपनी सत्ता कायम कर लेते हैं।

एक बार लेखक ने देखा कि नवदेश के नागरिक, अपने साजो-सामान के साथ, किसी भी प्रयास से, मूलदेश से बाहर ही नहीं निकल पा रहे थे, और कुछ समय बाद, मुख्यद्वार भी शत्रुओं के भय से बंद करवा दिया गया था। वैसी हालत में, नवदेशनागरिकों के पास अपने को बचा कर रखने का कोई भी विकल्प शेष नहीं था। मूलदेश ने भी उन्हें अपने देश से बाहर निकला हुआ मानकर, उनके लिए की जा रही सारी आपूर्ति बंद करवा दी थी। नवदेश का सभी कुछ नष्ट हो गया था, और अनेक प्रकार के वातावरणीय प्रकोपों से, धीरे-धीरे करके वह अवशेषमात्र ही रह गया था। जब कभी कालान्तर में, आसपास रहने वाले लोगों की दृष्टि उन अवशेषों पर पड़ी, तब राजा ने उनको बाहर फिंकवाने का प्रबंध करवाया, ताकि उनसे उसके देश के नागरिकों पर भावनात्मक दुष्प्रभाव न पड़ता।

नए देश में कई किस्म के विशेषज्ञ, खासकर के जंग के हुनरमंद देहपुरुष विकसित ही नहीं हुए होते हैं। इससे विशेष व जरूरी विद्याओं की कमी से वह देहदेश कई बार पैदा होने से पहले ही नष्ट हो जाता है, खासकर अगर वालिद देहदेश के द्वारा वह ढंग से सम्भाला न जाए। सही ढंग से संभाले जाने पर भी, कई बार नवजात देश ज्यादा दिनों तक टिक नहीं पाता। कई बार कुछ विकसित होकर के वह नया देश अपने अब्बादेश के साथ ही शत्रु की तरह बर्ताव करने लग जाता है। वह ज्यादातर समय गंदा रहता है, जिसके कारण उसके अन्दर ऊटपटांग किस्म के लोग डेरा डाले रहते हैं। पितृदेश स्वाभाविक पुत्रमोह के कारण जब-जब उससे मिलने का प्रयास करता है, तब-तब वह भी उन उग्रपंथियों की चपेट में आ जाता है। ऐसे मिलन के मौकों पर पितृदेश की थोड़ी सी भी असावधानी से, यदि उसकी अपनी सीमा तानिकमात्र भी क्षतिग्रस्त हो जाए, तो वे सूक्ष्म उग्रपंथी उसके अन्दर भी प्रविष्ट हो जाते हैं। वे हिंसक, पापी व आत्मघाती सूक्ष्मपुरुष पितृदेश के अन्दर महान उत्पात करते हैं; निर्दोष देहपुरुषों का कत्लेआम करते हैं, सैनिकों के ऊपर छलपूर्वक आक्रमण करते हैं, देहराष्ट्रीय संपत्ति को भारी नुकसान पहुंचाते हैं, तथा अनेकविध मार्गों

व संरचनाओं का विध्वंस करते हैं। कई बार वह पुत्रदेश शत्रु-देहराष्ट्र के साथ मिलकर, अपने पितृदेहराष्ट्र के लिए नित नई समस्याएँ खड़ी कर देता है। कई बार उसके उग्रपंथी लोग पितृराष्ट्र में घुसकर, वहाँ के स्थायी नागरिकों के मन में देशद्रोह व विद्रोह की चिंगारी को भड़का देते हैं।

वास्तव में देहदेश में जड़ें जमा चुके वे सूक्ष्म उग्रपंथी दिमाग से बहुत तेज और शरीर से काफी फुर्तीले होते हैं, यद्यपि गलत काम ही उन्हें ठीक दिखाई देते हैं। अधर्म उन्हें धर्म की तरह प्रतीत होता है। वे अधर्म का पालन अनासक्ति व अद्वैत के साथ वैसे ही करते हैं, जैसे सामाजिक देहपुरुष अपने धर्म का करते हैं। वैसे तो वे अधर्मीदेहपुरुष भी मुक्त व ईश्वररूप ही होते हैं, क्योंकि देहदेश में कोई भी पुरुष बद्ध नहीं होता, राजा के सिवाय। यद्यपि जब स्थूल उग्रपंथी उनका चिंतन करके उनके जैसा बनने का प्रयास करते हैं, तो सदैव असफल होते हैं, क्योंकि देहपुरुष कभी नहीं चाहते कि स्थूलदेश में भी कोई पुरुष उग्रपंथी हो। दूसरे तरीके से यह भी कह सकते हैं कि स्थूल उग्रपंथी ईश्वर अर्थात देहपुरुष के नाम पर गलत काम कर रहे होते हैं। इस प्रकार से उग्रदेहपुरुषों का ध्यान करके उनके जैसा बनने की कोशिश करने वाले उग्रपंथी तो साधारण उग्रपन्थियों से भी बुरे होते हैं, क्योंकि साधारण उग्रपंथी तो अपनी उग्रता को स्वीकार करता है, और इस कारण समय आने पर सुधर भी जाता है, लेकिन देहपुरुषचिन्तक उग्रपंथी कभी नहीं सुधरते, क्योंकि उन्हें अपना गलत काम सही लगता रहता है। हाँ, आत्मरक्षा के लिए उन उग्रदेहपुरुषों का नहीं, अपितु सैनिकदेहपुरुषों का चिंतन जरूर किया जा सकता है।

देहदेश के उन सूक्ष्म उग्रपन्थियों ने अपना उग्रता से भरा हुआ एक कथा-साहित्य बनाया होता है, जिसे हर कोई उग्रपंथी पढ़ता रहता है, और अपने पास हमेशा सहेज कर रखता है। नई औलादों को भी वह किताब मुहैया करवा दी जाती है। इस तरह से उनकी उग्र परम्परा कभी खत्म होने को नहीं आती। उनको नष्ट करने के लिए कई कोशिशें की जाती हैं, जैसे कि देहदेश का प्रबंधन सुधारना व विदेशी तकनीकों की मदद लेना आदि-आदि; पर उनका बीज ख़त्म न हो कर बना रहता है। कभी-कभार जब देहदेशराजा या देहलोक-इंद्र शुद्ध व स्वस्थ आचार-विचाररूपी तप के साथ, लम्बे समय तक द्वैताद्वैतसंपन्नदेहपुरुषरूपी देहनारायण का ध्यान करता है, तो वे चमत्कारी देहपुरुषों के रूप में अवतार लेकर देहदेश से उनके बीज का सफाया कर भी देते हैं, या फिर उनसे बचाव की कोई शाश्वत युक्ति उपलब्ध करा जाते हैं। उस उग्र साहित्य की रचना किसी अवतारी पुरुष ने की होती है, जिसे वे राक्षसप्रकृतिपुरुष अपना आदिग्रन्थ मानते हुए, उसका भरपूर दुरुपयोग करते हैं। वास्तव में, वह ग्रन्थ बुरे लोगों को सही रास्ते पर लाने के लिए बना होता है,

परन्तु वे उससे भले लोगों को परेशान करते रहते हैं। उसी तरह, विभिन्न अवतारी देहपुरुष विभिन्न प्रकार के आचार-शास्त्रों की रचना करते हैं, जो धीरे-धीरे पूरे देश में फैल जाते हैं, और देहदेश की व्यवस्था को मानवतापूर्ण विधि से चलाते हुए, उसे सुचारू बना कर रखने में योगदान देते हैं। उनको पूरे विश्व में फैलाने का सबसे अच्छा अवसर तो नए देश के निर्माण के समय होता है। नए देश के निर्माता लोगों को उनकी भली भांति शिक्षा दी जाती है, जिनसे प्रभावित होकर वे उन नए शास्त्रों को नए देश के संविधान में शामिल कर देते हैं। इस तरह से, वे नवीन व उपयोगी आचार-शास्त्र नए-नए देशों में प्रसारित होते हुए, पूरे विश्व में फैल जाते हैं। यद्यपि कई बार, बुद्धि-भ्रम या व्यवस्था की खामियों के कारण, इस तरह से बुरे शास्त्र भी फैल जाते हैं, परन्तु उनकी संख्या अच्छे शास्त्रों की अपेक्षा नगण्य ही होती है।

कई बार पितृदेश के द्वारा किए गए अनेक प्रकार के संधि-प्रस्ताओं से भी वह कुपुत्रदेश नहीं सुधरता। पितृदेश पुत्रमोह के कारण उसे छोड़ भी नहीं सकता। ज्यादातर मामलों में वह कुदेहदेश या तो अपने अन्दर पल रहे उग्रपंथियों के द्वारा स्वयं ही नष्ट हो जाता है, या फिर उसके शत्रुदेहदेश उसे नष्ट कर देते हैं। परन्तु कभी-कभार ऐसा भी होता है, विशेषकर पितृदेहदेश के राजा की लापरवाही से, जब उस पुत्रदेश की मूर्खता से केवल पितृदेश को ही लगातार नुकसान उठाना पड़ता है। बहुत विरले मामलों में पुराना देहदेश इस तरह से नष्ट भी हो सकता है। पुत्रदेहदेश के जन्म से ही लेकर अगर मातृदेश की ओर से उसका समुचित ध्यान रखा जाए तथा उसके अपने पैरों पर खुद खड़ा होने तक उसको जरूरत के हिसाब से सहारा व पालन-पोषण उपलब्ध करवाया जाए, तो ऐसी नौबत से बचा भी जा सकता है। स्थूल उग्रवादियों को यह जरूर जान लेना चाहिए कि सूक्ष्म उग्रवादियों का अनुकरण कभी नहीं करना चाहिए, क्योंकि सूक्ष्म उग्रपंथी तो सदामुक्त होते हैं, इसलिए उन्हें कोई पाप नहीं लगता, परन्तु स्थूल उग्रपंथी सदाबद्ध होते हैं, अतः वे अपने बुरे कामों के अंजाम से कभी भी बच नहीं सकते। इस प्रकार से अनेक देहदेश पैदा हो जाते हैं, जिनमें देहपुरुषों के पूर्णसमाज, ईश्वरीय लीला करते हुए विस्तार को प्राप्त होते हैं।

स्थूलसैनिकों के झुंडों की तरह ही, देहसैनिक भी इकट्ठे होकर चित्र-विचित्र व्यूहों की रचना करते हैं; जिससे वे प्रबल व बड़े भारी शरीर/आकार वाले शत्रुओं को भी आसानी से परास्त कर देते हैं। स्थूल पुरुष की तरह ही वे तहे दिल से दोस्ती भी करते हैं, जिससे वे एक दूसरों का हाथ पकड़ कर, लम्बी-लम्बी कतारों में खड़े हो जाते हैं, और एक-दूसरे को ढाढस बंधाते हुए विशाल शत्रुओं

को भी डरा-धमका देते हैं। इससे वे अपनी विशाल सत्ता को दिखाते हुए, वाग्बाणों से अपने सत्ता-गौरव के वर्णन को शत्रुओं की तरफ फेंकते रहते हैं, जिससे शत्रुओं के दिल लड़ाई से पहले ही टूट जाते हैं। फिर तो वे उन्हें आसानी से मार देते हैं, और कई बार खा भी लेते हैं। बड़े सूक्ष्मशत्रु को खाने के लिए वे वैसे ही इकट्ठे हो जाते हैं, जैसे कि फसल को नुकसान करने वाले बड़े जानवर को खाने के लिए बहुत से स्थूल पुरुष।

कई बार सख्त चमड़े वाले शत्रु के टुकड़े देहपुरुष के पेट में बिना पचे हुए ही लम्बे समय तक पड़े रहते हैं, और अंत में उसे भी ले ही डूबते हैं; ठीक उसी तरह जैसे कई बार माँस के अन्दर के विषमय कीट, कांटे या हड्डियाँ उसे खाने वाले पुरुष को ही खा डालते हैं। कई बार कोई देहसैनिक विरले स्थूल पुरुष की ही तरह, रिश्वत आदि लेकर देहशत्रु से मिल जाता है, और उसे किसी भी हालत में मरने नहीं देता। ऐसी स्थिति में अन्य देहसैनिक देहदेश के हित में उसे ही उसी तरह मार डालते हैं, जिस तरह से लड़ाई के बीच में भ्रष्ट स्थूल सैनिक को अन्य सैनिक। मजबूत शारीरिक व मानसिक गठजोड़ बनाकर, समाजबाह्य-सूक्ष्मपशु, देहदेश से बाहर रहकर भी बड़े-बड़े कारनामे कर डालते हैं। वे अन्न-जल को आपस में बाँटकर बर्बादी को रोकते हैं। एक दूसरे के सहयोग से वे व्यूह-रचना बना कर रहते हैं, जिससे शत्रु उन पर आसानी से हमला न कर सके। क्योंकि बड़े देश के झमेलों से वे दूर रहते हैं, इसलिए वे एक-दूसरे से प्यार के साथ वक्त बिताने के मौके का भरपूर फ़ायदा उठाते हैं। इसी प्यार-मोहब्बत की बदौलत वे शत्रु का नाश करने के लिए, एक से बढ़कर एक प्रचंड अस्त्रों का भी निर्माण कर पाते हैं, जिन्हें खरीदने के लिए देहदेशों के राजाओं के बीच भी होड़ सी लगी रहती है। अगर ज़रा गौर से सोचें, तो स्थूल देश में भी तो ऐसा-वैसा ही कुछ नजारा दिखाई देता है।

अब देहपुरुषों के बीच में सहयोग-भावना का निरूपण करते हैं। एक विशेष वंश व जाति से सम्बंधित, देहपुरुषों के मित्र, देहदेशों से बाहर, सुनसान इलाकों में स्वतंत्रतापूर्वक जीवन बिता रहे होते हैं। वे स्वतंत्रता व प्रकृति के पुजारी होते हैं, इसलिए अपने छोटे से कुटुंब को छोड़कर किसी बड़ी सामाजिक या राष्ट्रीय व्यवस्था को स्वीकार नहीं करते। वे ऐसी व्यवस्था को आत्मबंधक समझते हैं। वे सामाजिक देहपुरुषों को गुलाम और बद्ध मानते हुए उनके ऊपर फब्तियां कसते रहते हैं। बदले में उनके मित्र देहपुरुष भी उन्हें अपने समाज में रहने के लिए व खुद स्थिति को देखने-समझने के लिए न्यौता देते रहते हैं। वे जंगली सूक्ष्मपुरुष एक दुर्लभ व सोने के जैसा पदार्थ पैदा करते रहते हैं, जिसकी जरूरत देहसमाज को भी काफी पड़ी रहती है, अतः उनको बुलाने के

पीछे का दूसरा मकसद यह भी होता है। देहपुरुषों के कुछ मित्र उनके बहकावे में आकर उनके वहाँ चले जाते हैं। देहसमाज अपने मित्रों की, मेहमानों की तरह आवाभगत करता है, तथा उन्हें भरपूर राजकीय सुरक्षा, आवास व पोषण आदि सुविधाएँ उपलब्ध करवाता है। खुश होकर बदले में वे मित्र भी, अपनी गूढ़ विद्या से, देहसमाज के लिए उस दुर्लभ पदार्थ को तैयार करते रहते हैं। स्थूलभारतवर्ष ने भी स्थूलपारसीपुरुषों को मित्रवत शरण दी थी, जिसके फलस्वरूप उन्होंने भी स्थूलभारत के विकास में अप्रतिम योगदान दिया।

कई बार पुरुष की ही तरह, देहपुरुष के मस्तिष्क में भी संवेदन अणुओं के दोष से मनोरोग पैदा हो जाते हैं। इससे विकृत संवेदना वाले देहपुरुष देहदेश के विरुद्ध आचरण करने लग जाते हैं। हम यहाँ संवेदना को साधारण मन कह कर पुकारेंगे। अब पुरुषों के जैसी ही, देहपुरुषों की चिंतन व निश्चय करने की योग्यता का विस्तार से वर्णन करते हैं। देहपुरुष के द्वारा चक्षु आदि पञ्चज्ञानेन्द्रियों की मदद से सभी बाहरी परिस्थितियाँ महसूस की जाती हैं। ऐसी हालत में साधारण मन ज्ञानेन्द्रियों का रूप ले लेता है। फिर उन परिस्थितियों के अनुसार ही उनके दिमाग में संवेदक अणु कुछ ज्यादा ही क्रियाशील हो जाते हैं, जिन्हें हम वास्तविक या सोच-विचार करने वाला मन कहते हैं। इससे बाहरी हालातों का अनुमान लगाया जाता है। अन्न को महसूस करके उनका मन ललचाने लगता है, पर बुद्धि के निर्णय का इंतज़ार करने के लिए रुक जाता है। अब वह मन ही मन उस अन्न के फायदे व नुकसान के बारे में सोचने लगता है। इससे बुद्धि को निर्णय करने में मदद मिलती है। अगर वह अन्न फायदेमंद होता है, तो उसका मन उसको खाने के निर्णय पर पहुँचता है। यही निश्चयात्मक मन, बुद्धि कहलाता है। फिर वह मन उसके पैरों, हाथों और मुख को उस अन्न को ग्रहण करने के लिए उकसाता है। उस हालत में वही साधारण मन कर्मेन्द्रियों के रूप को ग्रहण कर लेता है। संक्षेप में कहें तो सबसे पहले मन ज्ञानेन्द्रियों के रूप में अन्न के सूक्ष्म रूप को ग्रहण करता है। फिर सोच-विचार करने वाला मन पुराने तजुर्बों/अनुभवों (स्मरण के रूप में साधारण मन) व वर्तमान हालत (ज्ञानेन्द्रियों से प्राप्त) का जायजा लेकर इस बात का पता लगाता है कि क्या वह अन्न उसके मालिक देहपुरुष की सत्ता को बढ़ाने वाला है, या घटाने वाला। यदि वह अन्न जहर की तरह है, व देहपुरुष की सत्ता घटाने वाला है, तो उसका मन पैरों को उससे उल्टी दिशा में चलाने के व मुंह को बंद करने के निर्णय पर पहुंचता है। अन्न तो यहाँ केवल उदाहरण के तौर पर बताया गया है, ऐसी प्रक्रिया तो हरेक वस्तु-सेवा के मामले में समान ही है। इस प्रकार एक ही प्रकार के संवेदक अणु अलग-अलग वक्त पर अलग-अलग रूप धारण कर लेते हैं। इन

संवेदक अणुओं से निर्मित सभी संवेदनाओं (sensations) को हम चित्त व उस चित्त की चित्र-विचित्र लहरों को उसकी चित्तवृत्तियाँ कहते हैं।

कई बार देहपुरुषों में स्थूलपुरुषों की तरह ही बुद्धिभ्रम भी उत्पन्न हो जाता है। इससे हानिकारक वस्तु लाभदायक लगती है, जैसे कि मछली को कांटे पर लगा अन्न लाभकारी लगता है, पर वह कांटे में फँस जाती है। इसी तरह से देहदेश में भी कई बार सशस्त्र विद्रोह के वक्त, विद्रोह करने वाले देहपुरुष वहाँ के कुछ प्रभावशाली देहनागरिकों को फायदेमंद नजर आते हैं, जिससे देहसैनिकों के द्वारा वे विद्रोही सैनिक मारे नहीं जाते, बल्कि इसके उलट, लोगों के द्वारा उनकी खूब सेवा की जाती है। कई बार बुद्धिभ्रम से फायदेमंद चीज नुकसानदायक भी लगती है, जैसा कि किसी विरले देहदेश में होता है। उस देहदेश के सैनिकों को वहाँ के विशेष जाति-धर्म के सज्जन देहपुरुष नुकसानदायक दिखने लगते हैं, और वे उन्हें प्रताड़ित करने लग जाते हैं। इन सब बातों से सिद्ध होता है कि देहपुरुष पूरी तरह से एक ज़िंदा मशीन की तरह ही काम करते हैं। शास्त्रों में भी तो यन्त्र की तरह ही आचरण करने को कहा गया है। इस मामले में तो ये देहपुरुष निर्जीव यंत्रों से भी ज्यादा बढ़िया हैं, क्योंकि ये मशीन की तरह व्यवहार करते हुए, जीवित भी हैं, और पूरी तरह से जीवित पुरुषों की तरह बर्ताव भी करते हैं।

जिस प्रकार से स्थूल समाज का अध्यक्ष, समाज के आम स्थूल पुरुषों के द्वारा बनाई न जा सकने वाली चीजों; जैसे कि यन्त्रों, उपकरणों आदि को दूसरे समाज से मंगवा कर अपने पुरुषों को उपलब्ध करवाता है; ठीक उसी प्रकार से देहसमाज का अध्यक्ष भी देहसमाज में न बनाई जा सकने वाली चीजों; जैसे कि स्थूल अन्न-पदार्थों, स्थूल वस्त्रों, स्थूल जूतों आदि को स्थूल समाज से मंगाकर अपने देहपुरुषों के लिए उपलब्ध करवाता है। दोनों ही जगह समाजाध्यक्ष का यही काम होता है, मुख्यतया। दोनों ही जगह, समाज के अन्दर के काम तो निचले दर्जे के मुंशी, कर्मचारी आदि लोग ही निपटा देते हैं। विशेष अंदरूनी समस्या प्रकट होने पर ही समाजाध्यक्ष को सूचना दी जाती है।

अब देहदेश में साँस लेने के काम आने वाली हवा के बहाव के बारे में चर्चा करते हैं। उससे जुड़ी कुछ अन्य कार्यप्रणालियों का भी संक्षेप में पुनः वर्णन करेंगे। देहदेश में हर जगह, आपस में जुड़े हुए गुफाओं के जाल होते हैं। उनकी कुल लम्बाई हजारों किलोमीटर की होती है। उन गुफाओं में एक विशेष द्रव-पदार्थ मशीनों, पम्पों आदि की मदद से मजदूर देहपुरुषों के द्वारा धकेला जाता रहता है, जिससे कि वह हर पल बहता ही रहता है। उस तरल पदार्थ में वायु-आपूर्तिकर्ताओं की एक

कूरियर कंपनी के कर्मचारी, अपनी पीठ पर हवा से भरे हुई थैले लाद कर बहते रहते हैं, जो कि यहाँ से वहाँ हवा की निर्बाध आपूर्ति करते रहते हैं। वे कर्मचारी लाल रंग की वर्दी पहने हुए होते हैं। शुरु में वे गुफाएँ खुली-डुली होती हैं, पर धीरे-धीरे व दूरी बढ़ने के साथ-साथ, तंग-तंग होती जाती हैं। सुदूर के क्षेत्रों में तो वे अत्यंत तंग हो जाती हैं, क्योंकि सुदूर के जनजातीय व शहरों से दूर के क्षेत्रों में गुफाओं को खोदना काफी महँगा पड़ता है। उन संकरी गुफाओं में वे कर्मचारी खुले-डुले रहकर नहीं बह सकते, इसलिए उन्हें उनके द्वारों पर ही एक पंक्ति (लाईन) में खड़े होना पड़ता है, और बारी-बारी से अन्दर घुसना पड़ता है। यहाँ पर देहपुरुषों की अनुशासनप्रियता की भी एक झलक दिखाई देती है। वह देहपुरुष-नागरिकों को सीधा वितरण करने वाली गुफा इतनी तंग होती है कि उनमें बह रहे कर्मचारियों के हवा से भरे हुए बैग बार-बार गुफाओं की दीवारों से टकराकर उन्हें परेशान करते रहते हैं। खीझ व थकान के मारे वे सारी हवा को थैले से बाहर उड़ेल देते हैं। वहाँ पर गुफा की दीवारें बहुत पतली होती हैं, जिससे हवा दीवार के सूक्ष्म छिद्रों से बाहर निकल जाती है। फिर वह देहदेश के इलाकों में चारों ओर प्रवाहित होकर फैल जाती है, जिससे देहपुरुष जी भर कर साँस ले पाते हैं। उस साफ हवा के बदले में देहदेश की गन्दी हवा गुफा के अन्दर घुस जाती है, जिसे राज-दंड के डर से वे कर्मचारी अपने थैलों में दुबारा भर लेते हैं। उस तंग गुफा से देहदेश के लिए जरूरी भोजन-पानी समेत, बाकी की सभी चीजें; सेवा से सम्बंधित देहसैनिक, विभिन्न काम करने वाले देहपुरुष-कार्यकर्ता व कर्मचारी आदि भी बाहर निकलकर देहदेश के रखरखाव, वृद्धि व विकास में मदद करते हैं। उन सामानों के बदले में, देहदेश के समस्त अपशिष्ट पदार्थ व औद्योगिक उत्पाद आदि, उनकी जगह भरने के लिए अन्दर प्रवेश कर जाते हैं । उस गुफा का द्रव फिर एक हवा के प्रचंड झंझावात व झोंकों से भरपूर, एक जलाशय में पहुंचता है। वहाँ पर उसके वे कर्मचारी साफ हवा के लालच में आकर अपनी गन्दी हवा के थैले को उल्टा देते हैं, और साफ हवा उसमें भर लेते हैं। इससे वे लापरवाही के दंड से भी बच जाते हैं। देहदेश से इकट्ठी की गई उस गन्दी हवा को बड़े-बड़े पम्पों के द्वारा देहदेश से बाहर फ़ेंक दिया जाता है। फिर से वह द्रव पूरे देहदेश में घूम-फिर कर उन संकरी गुफाओं में पुनः पहुँच जाता है, और यह प्रक्रिया चक्र की भाँति निरंतर चलती रहती है। द्रव एक अपशिष्ट-शुद्धिकरण यन्त्र से होकर भी गुजरता है, जहाँ पर अपशिष्ट पदार्थ साफ व सुरक्षित कर दिए जाते हैं, ताकि वे देहनालियों, देहगुफाओं आदि को खराब न कर सकें और धीरे-धीरे उनकी दीवारों पर जमते हुए उन्हें अवरुद्ध न कर सकें। देहदेश में हर तरफ घूमता हुवा वो द्रव अपशिष्ट-छनन-यंत्रों से होकर भी गुजरता है। वहाँ पर देहदेश से

इकट्ठा किया गया द्रव छान लिया जाता है। फिर अपशिष्ट बाहर निकाल दिए जाते हैं, और एक विशाल टैंक में थोड़े समय के लिए भंडारित (स्टोर) कर दिए जाते हैं। उन अपशिष्टों को फिर नालियों के रास्ते से, नीचे स्थित नदी की ओर बहा दिया जाता है। वह नदी फिर नीचे-नीचे जाते हुए, देहदेश की सीमा लांघ कर सूक्ष्मसमुद्र में मिल जाती है।

देहगुफाओं से बाहर निकला हुआ वह शुद्ध जल फिर छोटी-छोटी नालियों से होकर सारे देहदेश में फैल जाता है। वह सभी देहपुरुषों व देहपशुओं के पीने के काम आता है। देहकिसान उससे खूब फसल पैदा करते हैं, और मोटा मुनाफ़ा कमाते हैं। जो अनाज वे कृषक पैदा करते हैं, उन्हें खाद्य-परिष्करण-उद्योगों में भेजा जाता है। उन उद्योगों में उन मोटे-मोटे अनाजों को छोटे, जल में घुलने वाले व पौष्टिक तत्त्वों में बदल दिया जाता है। यह इसलिए किया जाता है ताकि देहश्रमिकपुरुष आसानी से उपरोक्त यातायात-गुफाओं में उनका प्रवेश करा सके। कई बार देहदेश में जरूरत से ज्यादा बम्पर फसल हो जाती है। उसको परिष्कृत करने में व इधर-उधर पहुंचाने में बहुत ज्यादा ऊर्जा व शक्ति खर्च होती है, क्योंकि उसके लिए विशेष आरक्षित व कम गुणवत्ता (ऐफ़िशिऐन्सी) की, अतः खर्चीली आपूर्ति प्रणाली को चालू करना पड़ता है; ऐसे ही जैसे स्थूलदेश में बिजली कम पड़ने पर कोयले का इस्तेमाल किया जाता है। अतिरिक्त तत्त्वों को हानिकारक वातावरण से सुरक्षित भंडारगृहों में रखा जाता है।

अनेक ब्रम्हांड मिल कर जब अपनी सत्ता बढ़ाने का प्रयास करते हैं, तो एक सृष्टि का निर्माण होता है। अनेक आकाशगंगाओं की सत्ता के प्रति भूख, एक ब्रम्हांड को जन्म देती है। अनेक सौरमंडलों के द्वारा एक आकाशगंगा का निर्माण होता है। सूर्य के साथ अनेक ग्रहों व उपग्रहों के सम्मिलित प्रयास से एक सौरमंडल वजूद में आता है। अनेक देश जब अपनी सल्तनत बढ़ाने के लिए ललायित हो जाते हैं, तब एक विश्व उभरकर सामने आता है। अनेक राज्यों के, सत्ता के लिए सम्मिलित प्रयास से एक देश बनता है। अनेक जनपदों से एक राज्य बनता है। अनेक विकासखंड इकट्ठे होकर एक जनपद का निर्माण करते हैं। इसी प्रकार अनेक पंचायतों से एक विकासखंड, अनेक गाँवों से एक पंचायत, अनेक परिवारों से एक गाँव तथा अनेक स्थूल पुरुषों से एक परिवार निर्मित होता है। असंख्य देहपुरुषों के द्वारा जब इकट्ठे होकर, एक-दूसरे की सत्ता बढ़ाने का प्रयास किया जाता है, तब एक स्थूल पुरुष अर्थात एक देहदेश बनता है। वह देश देहपुरुषों का एक भरा-पूरा समाज होता है। इसी प्रकार अनेक प्रकार के बड़े-बड़े अणु जब मिलकर अपनी जागीर बढ़ाने का फैंसला करते हैं, तब एक देहपुरुष का निर्माण शुरु हो जाता है, और धीरे-धीरे करके पूरा भी

हो जाता है। असंख्य छोटे-छोटे अणु अपनी सुरक्षा के लिए इकट्ठे होकर जब एक झुण्ड बना लेते हैं, तब एक बड़ा अणु अस्तित्व में आता है। परमाणु बहुत छोटे होते हैं। वे भी बड़ा बनना चाहते हैं। जब कुछ परमाणु गठजोड़ बनाकर एक-दूसरे के लिए जीना शुरु करते हैं, तब यह प्रणाली लघु अणु के नाम से विख्यात हो जाती है। ब्रम्हांड बनने के शुरुआती दौर में, अनेक मूलभूत कण आपस में मिल जाते हैं। फिर समन्वित व नियंत्रित रूप वाली सामूहिक क्रियाशीलता से, वे एक सुव्यवस्थित समाज की रचना करते हैं, जिसे परमाणु नाम से पुकारा जाता है। असंख्य व विभिन्न देहों से भरे हुए इस सारे जीवन-प्रपंच की शुरुआत तब होती है, जब चिदाकाश अपनी दिव्य माया शक्ति से, असंख्य मूलभूत कणों के रूप में अपने आप को टुकड़ों में बंटता हुआ सा दिखा देता है।

देहपुरुष के द्वारा खाना-पीना भी बिल्कुल स्थूल पुरुष के जैसा ही नजर आता है। असामाजिक और अकेली-गुमनाम बस्तियों में जीने वाले भले सूक्ष्मपुरुष, देहदेश से बाहर रहते हुए, खुले में विचरण करते रहते हैं, और साधु-फकीरों जैसे जान पड़ते हैं। वे दूर से ही अनाज के दानों को पहचान कर, वहाँ तक अपने पैरों से चलकर पहुँचते हैं। फिर उस अनाज की अच्छी तरह से जांच-पड़ताल करके आराम से बैठ जाते हैं, अपने हाथों से एक-एकनिवाला उठाकर मुंह में डालते हैं, और फिर अच्छी तरह से चबा कर निगल जाते हैं। कुछ किस्म के सूक्ष्मपुरुष अनाज को कच्चा ही और कुछ दूसरे, पकाकर खाते हैं। फिर उनकी जठराग्नि से जले-टूटे अनाज के दानों में मौजूद सूक्ष्मपोषक तत्त्व, उनके पेट से होते हुए, उनके शरीर के द्वारा अन्दर की ओर सोख लिए जाते हैं। बिना पचे हुए व शरीर के लिए नुकसानदायक अपशिष्ट पदार्थों को वे मलद्वार से बाहर की ओर धकेलते हुए, खुले में, सीधे ही रूप में त्यागते रहते हैं; क्योंकि बाहर के खुले-डुले माहौल में, भीड़-भाड़ वाले देहसमाज के अन्दर बनी हुई, जटिल रूपों वाली मलशोधन व निष्कासन प्रणालियों के जैसी प्रणालियों की जरूरत नहीं होती। साथ में, बाहरी समाज की अपेक्षा, देहदेश का समाज बहुत ज्यादा जटिल व विकसित होता है। वहाँ पर अनाज को पकाने के लिए एक अलग ही विभाग खोला गया है। फिर अनाज का पका हुआ और पौष्टिक रस पूरे देहदेश में, हरेक देहपुरुष तक, यातायात की विकसित प्रणालियों के माध्यम से पहुंचाया जाता रहता है। देहपुरुषों को भोजन समेत सभी जरूरी चीजों के लिए कहीं चल कर जाने की जरूरत नहीं होती। इसी तरह से, अपने शरीर के अपशिष्ट पदार्थों का उत्सर्जन करने के लिए उन्हें खुली जगह की तरफ दौड़ नहीं लगानी पड़ती, बल्कि अपशिष्ट इकट्ठा करने व उन्हें उठाकर शोधक यन्त्र तक ले जाने की प्रणाली देहदेश में हर जगह विद्यमान होती है। सूक्ष्मपुरुष कुछ किस्म के अनाज सूखे रूप में भी खाते हैं, पर

ज्यादातर मामलों में वे जल में घुले हुए अनाज को ही घोल के रूप में पीते हैं। इससे उनमें पानी की कमी भी साथ-साथ पूरी होती रहती है। स्थूलदेश की ही तरह, वे जल का प्रयोग अपने सूक्ष्मदेहदेश में स्थित सभी वस्तुओं के परिवहन के लिए व अपशिष्ट पदार्थों को बाहर निकालने के लिए करते हैं, यद्यपि कई बार अघुलनशील अपशिष्टों को ठोस रूप में भी बाहर निकालते हैं। वे जल का प्रयोग अपने शरीर का तापमान नियंत्रित करने व उसे हरेक भाग में समान रखने के लिए; अपने शरीररूपी सूक्ष्मदेहदेश को स्थिरता व लचीलापन प्रदान करने के लिए तथा दूसरे कई कार्यों के लिए भी करते हैं। जल के बिना वे मृत हो जाते हैं। उन्नत प्रणालियों के कारण देहपुरुषों की ताकत के बेवजह व जरूरत से ज्यादा इस्तेमाल अर्थात दुरुपयोग पर रोक लगती है, जिससे देहदेश तेजी के साथ विकास को प्राप्त करता है। स्थूलसमाज में भी तो ऐसा-वैसा ही कुछ स्पष्ट नजर आता है। जब देहपुरुष इतने ज्यादा विकसित ढाँचे के बीच भी अनासक्त रह सकते हैं, तो हूबहू उनके जैसे स्थूलपुरुष, सामान्य से ढाँचे में जीते हुए भी क्यों नहीं।

देहपुरुष अपने नासिका छिद्रों से श्वास के रूप में प्राणवायु को भी आवश्यकता के अनुसार व अनायास ही ग्रहण करते रहते हैं, क्योंकि वे अनासक्त होते हैं। स्थूलपुरुषों की आसक्ति ही श्वास को अनियमित व बाधित करती है, जिससे फिर अनेक रोग व विकार पैदा हो जाते हैं। जिस प्रकार देहपुरुष के द्वैताद्वैत स्वरूप के ध्यान से पर्याप्त, गहरे व उदर-चालित श्वास-प्रश्वास का तीव्रता से संचार शुरु हो जाता है, उसी प्रकार यौगिक श्वास-प्रश्वास अर्थात प्राणायाम आदि से देहपुरुष के द्वैताद्वैत स्वरूप की प्राप्ति अनायास ही हो जाती है। कई बार वायु प्रदूषण के कारण देहपुरुषों को पर्याप्त शुद्ध वायु नहीं मिल पाती। यह प्रदूषण कभी-कभी कुदरती तौर पर पैदा हो जाता है, पर ज्यादातर मामलों में देहदेश के राजा के गलत निर्णयों से ही ऐसा होता है। कई बार वह राजा अपने देश के क्षणिक लाभ के लिए धुंआ छोड़ने वाले बड़े-बड़े उद्योगों का जाल बिछा देता है, जिससे पूरे देहदेश का वातावरण दूषित हो जाता है। इससे बहुत से देहपुरुष कैंसर, हृदयरोग आदि बिमारियों से ग्रस्त होकर मर जाते हैं। महामारी की तरह फैलने पर ये रोग कई बार पूरे देश को ही नष्ट कर डालते हैं। उस बिगड़े हुए देहदेश के नजदीक के दूसरे देश भी उससे खुद ही प्रभावित हो जाते हैं, क्योंकि जहरीली हवा चारों ओर फैल जाती है। कई बार तो देखा-देखी में भी दूसरे देश यह गलत तरीका सीख जाते हैं। इसी तरह देहदेश की अत्यधिक क्रियाशीलता व विकृत कृत्रिमता के कारण जल प्रदूषण भी फैल जाता है। वह विषैला जल जब देहदेश के नदी-नालों में प्रवाहित होने लगता है, तो शोधन के उपरान्त भी वह अपना जहरीला असर दिखा ही देता है।

ध्वनिप्रदूषण से देहदेश के अधिकारी तनावग्रस्त हो जाते हैं, और अपना काम मन लगाकर नहीं कर पाते। इसके परिणामस्वरूप देहदेश को सुचारू रूप से चलाने वाली नीतियाँ नहीं बन पातीं। देहदेश में देहपुरुषों की अतिक्रियाशीलता व उनके द्वारा कृत्रिम रसायनों-पदार्थों आदि के प्रयोग से कई बार भूमिप्रदूषण भी फैल जाता है। ऐसा मलनिष्कासन प्रणाली के उचित शोधन व रखरखाव के बिना भी हो जाता है। ऐसे में देहदेश के अन्दर गन्दगी के अम्बार लग जाते हैं। इस तरह की प्रदूषणकारी अतिक्रियाशीलता भी शविद के समुचित परिशीलन से रोकी जा सकती है। शविद से निम्न क्रियाशीलता पर भी रोक लगती है, क्योंकि निम्न क्रियाशीलता से भी साफ-सफाई का समुचित ध्यान नहीं रह पाता। इस तरह से हम देख सकते हैं कि देहपुरुष की तरह ही हर घड़ी-हर पल जागरूक रहने से ही स्थूलपुरुष का हर प्रकार से भला हो सकता है। देहपुरुषों के स्मरण के प्रभाव से देहदेश की आवश्यकताओं की पूर्ति व समस्याओं के समुचित ढंग से निवारण की ओर खुद ही ध्यान चला जाता है।

जब ऊटपटांग किस्म के अतिक्रियाशील सूक्ष्मपुरुष देहदेश पर हमला कर देते हैं, तब देहदेश के लोग व सैनिक भी अतिक्रियाशील हो जाते हैं, ताकि उनका मुकाबला कर सकें। इससे तथा आग्नेय अस्त्रों से भी देहदेश का तापमान बढ़ जाता है। स्थूलदेश में भी तो ऐसा ही घटित होता है।

शिकारी-शिकार की परम्परा निर्जीव जगत में भी वैसी ही होती है, जैसी कि सजीव जगत में। जिस प्रकार अपने सभी देहपुरुषों के द्वारा अन्न खाए जाने पर, उनका स्वामी पुरुष भी अन्न से तृप्त हो जाता है, उसी प्रकार अपने सभी अणुओं के द्वारा अन्न खाए जाने पर, देहपुरुष भी अन्न खाने से मिलने वाली तृप्ति महसूस करता है। जैसे किसी समाज के सभी पुरुषों के द्वारा अपशिष्टों के उत्सर्जन को उस समाज का उत्सर्जन भी कह सकते हैं, उसी प्रकार किसी पुरुष के सभी देहपुरुषों के द्वारा उत्सर्जन करने को उस पुरुष का उत्सर्जन कहते हैं, तथा किसी देहपुरुष के अन्दर विद्यमान अणुओं के द्वारा अपशिष्ट-उत्सर्जन को उस देहपुरुष के द्वारा किया गया उत्सर्जन कहते हैं। देहपुरुष के शरीर प्रोटीन नामक बड़े-बड़े अणुओं को अपने शरीर के निर्माण के लिए कच्चे माल की तरह इस्तेमाल करते हैं, अर्थात उन्हें अपने मुख से उन्हें खाते हैं। इसी तरह प्रोटीन नाम का एक अणु अमीनो-अम्ल नामक अनेक सूक्ष्म-अणुओं को खाता है। अमीनो-अम्ल का एक अणु कार्बन (carbon), हाईड्रोजन (hydrogen), ऑक्सीजन (oxygen) व नत्रजन (nitrogen) नाम के चार किस्म के परमाणुओं को सैकड़ों-हजारों की संख्या में खाता है। एक परमाणु प्रोटोन (proton), न्यूट्रॉन (neutron) व इलैक्ट्रोन (electron) नाम के अनेक सूक्ष्म कणों को खा जाता है। ये सूक्ष्म

कण अपने से सूक्ष्म कणों को खाते ही रहते हैं, खाते ही रहते हैं। इस तरह से शिकारी-शिकार की यह परम्परा अनगिनत निचले स्तरों तक चलती रहती है, और चिदाकाश पर जाकर ख़त्म होती है, जो सबका शिकार भी है, और शिकारी भी।

अब सृष्टिदेह में शिकार-शिकारी की परम्परा का वर्णन करते हैं। सृष्टिदेह स्थूलजगत की सबसे बड़ी शिकारिन है। वह ब्रम्हांडदेहों को खाकर पुष्ट होती रहती है। एक ब्रम्हांडदेह असंख्य आकाशगंगादेहों को निगल जाती है। एक आकाशगंगादेह के अन्दर करोड़ों सौरमंडलदेहें समाई हुई हैं। एक सौरमंडलदेह सूर्यदेह, ग्रहदेहों, उपग्रहदेहों व अन्य छोटी-मोटी देहों से पुष्ट होती है, अर्थात वह सर्वभक्षी पुरुषों की तरह ही सर्वाहारी है। एक सूर्यदेह अनेक प्रकार की तत्त्वदेहों, यौगिकदेहों व मिश्रणदेहों को खाती है। एक यौगिकदेह अनेक प्रकार की तत्त्वदेहों को चट कर जाती है। एक तत्त्वदेह हाईड्रोजन नामक मूलतत्त्वदेह को खा जाती है। एक हाईड्रोजनदेह एक प्रोटोनदेह व एक इलैक्ट्रोनदेह की स्वतन्त्र जीवनलीला को समाप्त कर देती है। परम्परा के अंत में एक सूक्षमतमकणदेह आकाशदेह के किसी भाग में दांत मारकर वैसे ही चिपकी होती है, जैसे कि एक जोंक गाय के नाक में। आकाशदेह चिदाकाशदेह को खाती है, क्योंकि अज्ञान से चिदाकाशदेह ही आकाशदेह के रूप में प्रतीत होती है। वास्तव में यही चिदाकाशदेह सत्य है, क्योंकि यही सबकी देहों का निर्माण करती है। जैसे इमारत कोई नई चीज नहीं, अपितु ईंट ही है; उसी तरह सब कुछ चिदाकाश ही है। इसी तरह, जैसे गाय कोई विशेष व भिन्न वस्तु नहीं है, अपितु घास ही है, क्योंकि घास से ही निर्मित है। यह निर्विघ्न चिदाकाश निर्जीव जगत में हर जगह अपने मूलरूप में विद्यमान है, केवल जीवों ने ही इसे आसक्ति करके बिगाड़ा है। इस तरह से जब निर्जीव जगत सजीव जगत से भी ज्यादा ज्ञानी व स्वाभाविक है, तब उससे घृणा कैसी और उसकी पूजा पर बवाल क्यों? इसी तरह से, बड़ी देहों के लिए अपाच्य व हानिकारक छोटी देहें भी उन सभी देहों के द्वारा अपनी देह से मलरूप में बाहर निकाली जाती रहती हैं, जैसे कि सौरमंडलदेह के द्वारा खाए गए हानिकारक धूमकेतुदेह, तथा ब्लैकहोलदेह (black hole) के द्वारा खाए गए तारामंडलदेहों के हनिकारक अवशेष अपने शरीर से बाहर निकाले जाते रहते हैं।

सूक्ष्मपुरुषों की चालाकी भी बिल्कुल उनके हमशक्ल पुरुषों की तरह ही होती है। कुछ चतुर सूक्ष्मशत्रु देहपुरुषों की वर्दी पहन लेते हैं, जिससे कि वे देहसैनिकों के कोप से बच जाएं। कुछ शत्रु अपने कपड़ों व घरों आदि के चिन्हों को पूरे देहदेश में फैला देते हैं, ताकि देहसैनिकों को ठगा जा सके और खुद सुरक्षित जगहों पर छिप जाते हैं; ठीक वैसे ही जैसे एक छिपकलीदेह अपनी पूंछ

गिराकर अपने शत्रु से दूर भाग जाती है। देहसैनिक उन चिन्हों के पीछे भागते फिरते हैं, और खाली हाथ लौट जाते हैं। कुछ शत्रु शस्त्रास्त्ररोधी कवचों को धारण करते हैं। कुछ सूक्ष्मशत्रु देहपुरुषों के घरों में प्रविष्ट हो जाते हैं, और उन्हें डरा-धमका कर, सुरक्षा के साथ भोजन-पानी उनसे हासिल करते रहते हैं। परन्तु अंत में जब बेचारे देहपुरुष का खजाना खाली हो जाता है, और वह उन्हें सुरक्षा व भोजन देने में अस्मर्थ हो जाता है, तो वे उस देहपुरुष को घर के अन्दर बाँध कर घर में आग लगा देते हैं, और खुद भाग जाते हैं। भोजन के लिए घर से भागते हुए सूक्ष्मशत्रुओं को कई बार देहसैनिक देख लेते हैं, और मार गिरा देते हैं। कई बार किसी घर में शत्रु का पता लगने पर, जब उसको बाहर निकालने में सूक्ष्मसुरक्षाबल नाकाम हो जाते हैं, तो वे पूरे घर को ही उड़ा देते हैं। फिर क्षतिपूर्ति करने के लिए देहदेश के सभ्य सूक्ष्मकर्मचारी वहाँ पर पहुँच कर नया घर शीघ्र ही खड़ा कर देते हैं। इस तरह की मजबूरी की हालातों में, देहसैनिकों के अपने देश की जन-धन संपदा के प्रति किंचित हिंसक होने पर भी, वे देहदेश के द्वारा दण्डित नहीं किए जाते, क्योंकि उनकी उस मजबूरी में की गई छोटी-मोटी हिंसा के बीच में बड़े मायने में देहदेशसेवा की भावना छिपी होती है। परन्तु इसके ठीक उलट, देहदेश की प्रथा, व व्यवस्था से अलग-थलग रहने वाले सूक्ष्मदेहशत्रु शाँतिकाल में भी सहन नहीं किए जाते, क्योंकि भविष्य में उनके द्वारा विश्वासघात किए जाने की हरदम संभावना बनी ही रहती है। अतः यह स्पष्ट है कि देहपुरुषों में भी पुरुषों की तरह ही विश्वास व अविश्वास की भावनाएं भी विद्यमान होती हैं। इसके विपरीत, कई शत्रु इतने अधिक खुंखार होते हैं कि जब सुरक्षाबल उन्हें ढूँढते हुए, घर के अन्दर घुसने का प्रयत्न करते हैं, तब घर के सदस्य, उन राष्ट्रशत्रुओं के भय के कारण या उनके प्रति दया के कारण, उनको धूल-मिट्टी व टूटे-फूटे सामानों से भरे हुए तहखानों में छिपा लेते हैं। वे उन्हें जरा भी घर से बाहर नहीं जाने देते। उससे सुरक्षाबलों को उन छिपे हुए उग्रवादियों का पता ही नहीं चल पाता। अंततः वे देशद्रोहियों के घरों के अन्दर ही अन्दर, ऐशो-आराम की जिंदगी जीते हुए, विद्रोह की आग फैलाते रहते हैं, और कई दुस्साहसी शत्रु तो विद्रोही संतानों को भी पैदा कर देते हैं।

कुछ पकड़े गए शत्रु, अपनी अर्जित की गई विशेष विद्या के द्वारा, पुरुषदेहदेशस्थित कारावास में धकेले जाने से बच भागते हैं। लम्बे समय तक देहसैनिकों के नाजायज हस्तक्षेप के कारण कई बार स्थानीय देहपुरुष बगावत भी शुरु कर देते हैं, और देहदेश को नुकसान पहुंचाने लग जाते हैं। सम्बंधित क्षेत्र से वह बगावत धीरे-धीरे पूरे देश में फैल जाती है, जिसका विस्तार से वर्णन हम आगे भी करेंगे। देहदेशजेल में धकेले गए कुछ सूक्ष्मशत्रु अपनी विशेष विद्या से मृत्युदंड से भी बच

निकल जाते हैं। इसी तरह से, बहुत से विदेशी सूक्ष्म-शत्रु भी कारावास में बंद कर दिए जाते हैं, ताकि वे भाग न सके। फिर उन्हें फांसी वाले स्थान पर ले जाया जाता है, जहाँ उन्हें लटका दिया जाता है। स्थूलदेश की ही तरह सूक्ष्मदेश में भी मृत्युदंड के लिए अनेक विधियाँ उपयोग में लाई जाती हैं।

वे विद्रोही देहपुरुष भी देहसैनिकों के द्वारा सूक्ष्मशत्रुओं की तरह ही मारे जाते हैं। उन विद्रोहियों के मारे जाने पर देहदेश का राजा प्रसन्न हो जाता है, तथा भविष्य में निर्दोष प्रजा दुखी न हो, इसको पक्का करने के लिए वह अपने सैनिकों व कर्मचारियों को सतर्कता के साथ नियंत्रण में रखता है। परन्तु कई बार उनका आन्दोलन सफल भी हो जाता है, जिससे कि पूरे देहदेश में अराजकता फैल जाती है। ऊटपटांग बने हुए स्थानीय देहपुरुष पूरे देहदेश को बर्बाद करके रख देते हैं। फिर नए चिंतन के साथ नए नौजवान देहपुरुष बड़ी फूर्ति व लगन के साथ देहदेश को जल्दी ही विकास की बुलंदियों तक पुनः पहुंचा देते हैं।

देहदेश का सविनय अवज्ञा-आन्दोलन भी बड़ा दिलचस्प होता है। वह पूरी तरह से स्थूलदेश के जैसा ही होता है। जब देहपुरुषों को कई दिनों तक, किसी कारणवश, प्रशासन के द्वारा मूलभूत सुविधाएँ न उपलब्ध करवाई जाएं, तब वे प्रशासन से बहुत नाराज हो जाते हैं। ऐसा विशेषकर तब होता है, जब देहपुरुष आपातकाल जैसी अवस्था में, देहदेश को सुचारु रूप से चलाने के लिए जी तोड़ मेहनत कर रहे होते हैं। प्रशासन के ऊपर उनका क्रोध सविनय अवज्ञा-आन्दोलन के रूप में उतरता है। वे अपना काम तो करते रहते हैं, परन्तु स्वदेशीय प्रशासन द्वारा उपलब्ध कराई जा रही सुविधाओं को सामूहिक रूप से ठुकरा देते हैं। वे अपने पास संचित करके रखी गई चन्द वस्तुओं से ही अपना काम चलाते रहते हैं। ऐसे में उनके द्वारा किए गए कार्यों की गुणवत्ता क्षीण हो जाती है, और देहदेश बहुत कमजोर हो जाता है। देहदेशराजा के द्वारा आयात के लिए निर्दिष्ट की गई वस्तुओं का, देहदेशसीमा के निकट स्थित बंदरगाह पर ढेर लग जाता है। प्रजा के विमुख होने के कारण, राजा का मन भी नहीं करता कि वह उन वस्तुओं को देहदेश के अन्दर मंगवा कर, अपने समय व अपनी शक्ति, दोनों को व्यर्थ गंवाए। इधर-उधर बिखरी हुई कीमती वस्तुओं को देखकर, पड़ौसी राजाओं का मन भी ललचाने लगता है, और वे उन्हें हड़पना शुरु कर देते हैं। कुछ धर्मप्रिय राजा ऐसा नहीं करते, अपितु प्रभावित राजा के साथ मिलकर, प्रजा को मनाने का प्रयास करते हैं। कई बार प्रजा मान भी जाती है, और अपनी हड़ताल ख़त्म कर देती है। कई बार तो ऐसे विदेशी विशेषज्ञों की भी सहायता लेनी पड़ती है, जो कि संधि-समझौते करवाने में माहिर होते हैं।

अंत में प्रजा मान ही जाती है, यद्यपि कुछ शर्तों के साथ। इस तरह से, देहदेश धीरे-धीरे पुनः तरक्की करने लगता है, यद्यपि पहले के जैसी स्थिति वापिस आने में लम्बा समय लग जाता है। यदि प्रजा को मनाने के कोई उपाय न किए जाएं, तो प्रजा को अपने आन्दोलन को ख़त्म करने की सुध तब आती है, जब वह अपनी मृत्यु के निकट पहुँच जाती है, यद्यपि बहुत से देहपुरुष तो बीच में भी मरते रहते हैं। ऐसे में देहदेश भी अत्यधिक क्षीण हो चुका होता है, और वह पूर्वावस्था प्राप्त करने के लिए, और भी कहीं अधिक समय ले लेता है। कई बार तो वह बीच में ही दम तोड़ देता है। बहुत ही विरले मामलों में, ऐसे आपातकाल के बीच में युद्ध, महामारी आदि अन्य आपातकाल प्रवेश कर जाते हैं, जिससे देहदेश नष्ट भी हो जाता है।

देहपुरुष में संक्रामक रोग भी उत्पन्न हो जाते हैं। पुरुष की ही तरह; वे भी चमड़ी से, मुंह से व नासिका से जीवाणुओं व विषाणुओं के प्रवेश से संक्रमित हो जाते हैं। विषाणु उसके देहदेश में घुसकर उसके जीवनतत्त्वों से अपनी संख्या को बढ़ाते हुए उसके पूरे देहदेश में फैल जाते हैं, और उसे अपनी संततियों से भर देते हैं। ये विषाणु फिर उसके सभी आंतरिक अंगों को नष्ट करने लग जाते हैं। संख्या में बहुत ज्यादा हो जाने पर, अन्दर तंगी व भोजन-पानी की कमी से जूझते हुए, उसके शरीररूपी घर में चारों तरफ खिड़की-दरवाजे खोदकर पंक्तिबद्ध हो जाते हैं, और बाहर निकल जाते हैं। अगर इस तरह से वे रास्ता निकालने में कामयाब नहीं हो पाते, तो उसके शरीर को विस्फोट से उड़ा देते हैं, और खुद भाग कर निकल जाते हैं। फिर वे भोजन-पानी के लिए दूसरे देहपुरुषों के शरीर के अन्दर घुसते हैं। इस तरह यह संक्रमण फैलता रहता है। कई बार संक्रमित देहपुरुष अन्य स्वस्थ देहपुरुषों को सतर्क कर देते हैं, जिससे वे उन शत्रुओं से सावधान हो जाते हैं। स्थूलपुरुषदेह की ही तरह, देहपुरुषों के शरीर भी बहुत से जीवाणुओं को अपनी आतंरिक सुरक्षाप्रणाली से मार देते हैं, और इस तरह से वे खुद ही स्वस्थ हो जाते हैं। बाकी के बचे हुए बीमार देहपुरुषों का इलाज चिकित्सक देहपुरुष करते हैं। कई बार इलाज असफल हो जाने से या रिएक्शन (reaction) आदि से कुछेक देहपुरुष मर भी जाते हैं। भविष्य में सभी देहपुरुषों का विभिन्न रोगों से बचाव हो, इसके लिए सूक्ष्मचिकित्सक सभी देहपुरुषों को विभिन्न रोगों के खिलाफ टीके/वैक्सीन (vaccine) के इंजेक्शन भी लगाते रहते हैं।

कभी-कभार किन्हीं देहपुरुषों की अन्तरंग विकृति से, उनके हाथ-पैर भी विकृत हो जाते हैं, और वे अपंग हो जाते हैं। वास्तव में तो उपरोक्त रोगों को अनुभव करते हुए भी देहपुरुष

अप्रभावित रहते हैं, जिससे वे अपने शुद्ध आत्मस्वरूप में ही स्थित रहते हैं। अधिकाँश स्थूलपुरुष तो पूरे मोहल्ले को जगा देते हैं।

स्थूलपुरुषों की ही तरह, देहपुरुषों में भी बाँट-छाँट की भावना देखी जाती है। जैसे कि पुरुष कुछ ख़ास किस्म के पुरुषों से ही दुश्मनी निरंतर बनाए रखना पसंद करते हैं, उसी प्रकार अतिसूक्ष्मपुरुषों की एक विशेष आक्रमणकारी जनजाति एक ख़ास किस्म के देहपुरुषों पर ही हमला करती है। दूसरी किस्म के देहपुरुषों की तरफ वे देखते तक नहीं, चाहे वे कितने ही अच्छे क्यों न हों। इसी तरह देहदेश के राजकुमार भी अपनी ही जाति की कन्याओं के साथ, प्रबल आसक्ति के साथ विवाह रचाते हैं, दूसरी जाति की ज्यादा सुन्दर व गुणसम्पन्न कन्याओं को भी छोड़कर। देहपुरुषों को तो अनासक्तिपूर्ण बताया गया है, फिर यहाँ आसक्तिमय विवाह कैसे? यही तो देहपुरुषों की कलाकारी है कि वे आसक्ति भी अनासक्ति के साथ ही करते हैं। यह पुरुषों के लिए सीखने योग्य है।

पुरुषों की तरह ही देहपुरुषों की भी एक पूर्वनिश्चित आयुसीमा होती है, जिसे लांघ कर वे मर जाते हैं। जिस प्रकार विभिन्न श्रेणी के पुरुषों की आयुसीमा अलग-अलग होती है, उसी प्रकार देहपुरुषों की भी भिन्न-भिन्न होती है। पुरुषों के अंगों की तरह ही देहपुरुषों के अंग भी समय के साथ घिसते-पिटते रहते हैं, और साथ-साथ में भरते भी रहते हैं। यदि वे स्वतः भर सकने से ज्यादा ही क्षतिग्रस्त हो जाएं तो उनका इलाज विशेषज्ञ चिकित्सकों के द्वारा किया जाता है। असंख्य देहपुरुष रोगों, दुर्घटनाओं व हर पल चल रही बारीक जंगों के कारण पूरी आयु गुजारने से पहले ही नष्ट हो जाते हैं। वे बचपन, जवानी व बुढ़ापे के साथ, जीवन की बाकी सभी अवस्थाएँ पुरुषों की तरह ही बिताते हैं। बचपन में निकम्मे जैसे व खेल-कूद में मशगूल होकर, सेहतमंद भोजन खूब खाते रहते हैं, और अपने शरीर को बड़ा/विकसित कर रहे होते हैं। किशोरावस्था में वे विवाह करके अपनी वंश-परम्परा को बढ़ाने लग जाते हैं। जिस तरह बहुत से पुरुष आजीवन ब्रम्हचारी रहते हैं, उसी तरह से बहुत से देहपुरुष भी रहते हैं। युवावस्था में वे वंशपरम्परा से विरक्त हो जाते हैं, और विभिन्न विद्याओं में प्रशिक्षण लेने के उपरान्त अपनी-अपनी विशेषज्ञता से सम्बंधित कर्मों में तल्लीन होकर देहसमाज को उन्नत करते रहते हैं। वृद्धावस्था में पहुँच जाने पर, कर्मों से धीरे-धीरे करके विरक्त होने लग जाते हैं, और अंत में मर जाते हैं, जब देह-चांडालों के द्वारा दहन कर दिए जाते हैं। यह नहीं भूलना चाहिए कि देहपुरुषों में यह सबकुछ द्वैताद्वैत अर्थात अनासक्ति वाली भावनाओं के साथ चलता रहता है।

देहनियंत्रक चित्तवृत्तियों के नष्ट होने को ही मृत्यु कहते हैं। जब देहपुरुष प्रबल अनासक्ति के कारण, चित्तवृत्तियों के अस्तित्व को ही अहमियत नहीं देते हैं, तब वे उनके नाश को भी अहमियत क्यों कर देंगे भला? इससे जाहिर है कि वे मरने को भी अहमियत नहीं देते, अर्थात अमर होते हैं। इसी तरह से, फिर वे चित्त के दुबारा हकीकत बनने को भी अहमियत नहीं देते, अर्थात पुनर्जन्म को भी अहमियत न देकर, एक किस्म से उसे महसूस ही नहीं करते। पुरुषों की ही तरह, अधिकाँश देहपुरुष शाकाहारी होते हैं, परन्तु कुछेक मांसाहारी भी होते हैं। देहसैनिक ज्यादातर मांसाहारी होते हैं, क्योंकि उन्हें ज्यादा ताकत और चुस्ती की जरूरत होती है। वे अपने दुश्मनों तक का गोश्त खाते रहते हैं। पुरुषों ही की तरह मदिरा, भांग आदि नशे की चीजों का असर, देहपुरुषों पर भी साफ दिखाई देता है। नशे से उनके अन्दर, चित्त की गतिविधियाँ, शिथिल सी और कई बार तो स्थिर जैसी हो जाती हैं। तब वे सही-गलत का फैंसला नहीं कर पाते और एक तरह से जैसे अँधेरे में डूब से जाते हैं। यह बात अलग है कि वे अनासक्ति के कारण अँधेरे को भी अहमियत नहीं देते। महादेव भी तो इसी तरह भांग के नशे से अछूते रहते हैं। नशों से उनके पाचनतंत्र समेत पूरे शरीर पर बुरा असर पड़ता है। वेदों में विवाहावसर पर मद्यपान व यज्ञ आदि में देवार्पित माँसबलि आदि के भक्षण को स्वीकार किया गया है। इसका अर्थ यह नहीं है कि ऐसा अवश्य करना चाहिए, अपितु इसका यह अर्थ है कि यदि कोई पुरुष स्वभाववश व परिस्थितिवश इनका पूर्ण प्रयत्नोपरांत भी त्याग न कर सके, तो इनका प्रयोग कम व तांत्रिक विधि से किया जाए, जिससे स्वतः ही ज्ञान व सन्मार्ग प्राप्त हो सके। जिस प्रकार पुरुष धीरे-धीरे तरक्की करता हुआ, लाखों-करोड़ों सालों में अपने जिस्म की पूरी विकसित अवस्था को हासिल करता है, उसी तरह से देहपुरुष को भी करोड़ों साल लग जाते हैं। उस विकास में, अधिकाँश योगदान देहपुरुष का ही होता है, पुरुष का तो नाममात्र का योगदान होता है। ऐसा होते हुए भी जब देहपुरुष मोह के वशीभूत नहीं होता, तब उसका छोटा सा सहायक पुरुष ही क्यों अपने विकास के लिए अत्यधिक उतावला होकर, अपने अद्वैत को भंग करता है।

अगर देहदेश में आबादी पर काबू न रखा जाए, तो देहपुरुषों के बीच में लड़ाई-झगड़ों से व अनाज-पानी की गैरमौजूदगी से पूरा जिस्म-मुल्क ही तबाह हो जाए। जी हाँ, जनसंख्या नियंत्रण के बिना तो देहदेश के अस्तित्व की कल्पना भी नहीं की जा सकती। देहसमाज में बिना चूक वाली व मानवता से भरी हुई जनसंख्या नियंत्रण की प्रणालियाँ, जैसे कि आत्मसंयम, तंत्रयोग/यौनयोग आदि विद्यमान होती हैं। इससे देहपुरुषसंख्या उस स्तर पर बना के रखी जाती है, जिस स्तर पर

होने से पूरे देहदेश में ज्यादा से ज्यादा मात्रा में विकास, मानवता, निपुणता व खुशहाली का बोलबाला हो।

देहपुरुषों का संगठन बना कर रहना भी लाजवाब होता है, जो पूरे संसार में प्रसिद्ध है। सभी देहपुरुषों के सुसंगठित कर्मों से ही जटिल देहसमाज का अस्तित्व संभव हो पाता है। श्रमिक पुरुषों की भीड़ की तरह ही, जब अनेक श्रमिक देहपुरुष इकट्ठे होकर बल का प्रयोग करते हैं, तब बड़े से बड़े काम भी चुटकियों में हो जाते हैं। उदाहरण के लिए, देहदेश के यातायात विभाग में ही लाखों-करोड़ों श्रमिक लगे होते हैं। इसी तरह से, एक ही प्रतिष्ठित पद पर भी अधिकारी देहपुरुष हजारों-लाखों की संख्या में नियुक्त किए गए होते हैं। ये संख्या लाजिमी भी है, क्योंकि आगे उनके नियंत्रण में अरबों खरबों की संख्या में सूक्ष्मजनता होती है। वे सभी अधिकारी मिलजुल कर व बिना किसी व्यर्थ वाद-विवाद के अपने-अपने अधिकारों का इस्तेमाल करते हुए, एक तरह से एक-दूसरे के अधिकारों को पुष्ट ही कर रहे होते हैं। उनमें चौधरचारी का गुरूर होना भी लाजिमी है, पर वे उसको भी अहमियत नहीं देते, अर्थात उससे अनासक्त रहते हैं। अधिकारियों व कर्मचारियों की उत्तरोत्तर पदों की श्रृंखला तो देहपुरुषों में पुरुषों से भी कहीं ज्यादा मजबूत व कामयाब होती है। वहाँ पर सूक्ष्मकर्मचारियों की कोई प्रोमोशन (promotion) भी नहीं होती है, अत्यंत विरले या इक्के-दुक्के मामले को छोड़कर। इसका कारण यह है कि जब सभी देहपुरुषों को सभी जगह भरपूर व समान सुविधाएँ प्राप्त हो रही होती हैं, तो वे अपने काम को बदल कर अपने तजुर्बे का नुकसान क्योंकर करेंगे भला? एक साथ इतने सारे अधिकारी होने से यह लाभ भी होता है कि उनके द्वारा दिए गए आदेश में वजन होता है, जिसे निचले तबके के बारीक सेवादार नजरअंदाज नहीं कर पाते और साथ में, उनके द्वारा औपचारिकता मात्र के लिए घटिया काम करने की भी कम ही संभावना रहती है। देहपुरुष संगठन बनाकर भी उतने ही शाँत व अनासक्त रहते हैं, जितने कि एकांत में। देहपुरुषों के ऐसे जटिल व यंत्रमयी समाज से यह भी जाहिर होता है कि पुरुषों से ऐसे समाज की अत्यंत अपेक्षा नहीं भी है, क्योंकि पहले से ही ऐसे जीवंत समाज विद्यमान होने से ईश्वर की इससे सम्बंधित इच्छाएं तो पहले ही पूरी हो चुकी हैं। पुरुष से तो केवल अद्वैतयुक्त मानवता की ही अपेक्षा प्रतीत होती है, फिर चाहे वह साधारण समाज के साथ हो या यंत्रमय समाज के साथ। हाँ, तंत्र के सिद्धांतानुसार, यंत्रमय/कर्मठ समाज में देहपुरुषों की तरह का प्रचंड अद्वैतभाव धारण करना अधिक लाभकारी है, यद्यपि इसमें द्वैत धारण करने से हानि भी उतनी ही है।

कुछ अत्यंत विरले पुरुषों की तरह ही, देहपुरुषों में भी इच्छा-मृत्यु देखी जाती है, यद्यपि वे पुरुषों की तरह आत्महत्या नहीं करते, क्योंकि वे अनासक्ति के कारण आत्मरूप से सदा पूर्ण व मुक्त हैं, अतः उनकी आत्मा की हत्या का तो सवाल ही कैसे पैदा हो सकता है? जब कोई बहुत विरले देहपुरुष इतने ज्यादा अपंग, बीमार या जीवाणु-संक्रमित हो जाते हैं कि देहशरीर की चिकित्साव्यवस्था भी जवाब देने लग जाती है, तब वे जीने में अस्मर्थ होकर अपने शरीर को अकेले में या कई बार सामूहिक रूप से भी, योगाग्नि से उसी तरह भस्म कर देते हैं, जैसे कि कोई योगी या संन्यासी। ऐसा बहुत अपवाद की स्थिति में ही होता है। वे ऐसा तभी करते हैं, जब वैसा करने से सम्पूर्ण राष्ट्र की सुरक्षा होनी हो और सम्पूर्ण मानवता का हित होना हो। ऐसा ही दधीचि ऋषि ने भी किया था। उन्होंने वृत्रासुर के वध के लिए और अंततः सम्पूर्ण मानवता की रक्षा के लिए ही अपनी अस्थियों का दान किया था।

देहपुरुष भी पुरुषों की तरह ही एकांत, शाँति व भ्रमण के शौक़ीन होते हैं। सूक्ष्मसैनिक व वाहनचालक देहपुरुष अपने नगर से बाहर निकलकर, घुमते-फिरते हुए पूरे देहदेश में फैल जाते हैं। वहाँ पर ताज़ी हवा, खुले-डुले पर्यावरण व अन्न-जल की भरमार होने के कारण वे अपनी सारी पुरानी थकान मिटा देते हैं, जिससे उनकी कार्यक्षमता और भी ज्यादा तरोताजा हो जाती है। इसी प्रकार, युद्ध के पूरा होने पर भी, उपरोक्त देहसैनिक दूसरे ही जंगली, खुले-डुले व आरामदायक मार्गों पर आराम से टहलने का आनन्द लेते हुए, सीमा-क्षेत्रों से वापिस, अपने मुख्य कार्यालयों में पहुँच जाते हैं, जो देहदेश के अन्दर वाले और जनजीवन से भरपूर इलाकों में बने होते हैं। वहाँ पर वे चुस्ती-फूर्ति को कायम रखने के लिए लगातार वर्जिश व खेलकूद में लगे रहते हैं। देहदेश के दूसरे कर्मचारी भी घुमते-फिरते हुए ही अपनी वस्तुओं व सेवाओं को देहपुरुषों के घर-द्वारों पर जाकर प्रदान करना पसंद करते हैं। पुरुषों की तरह ही, उन्होंने भी उत्तम प्रकार के जूते पहने होते हैं, ताकि दौड़ते-फिरते हुए कहीं चोट न लग जाए। वैसे तो देहपुरुष भीड़-भाड़ वाले, अंदरूनी व शहरी इलाकों में भी अपनी आत्म-शान्ति को भंग नहीं होने देते, अनासक्ति अर्थात द्वैताद्वैत के कारण। अहंकार से भरा हुआ व अपने को कर्ता-भोक्ता मानने वाला पुरुष जब देहपुरुषों के इस तरह के नजारों पर नजर डालता है, तो उसका अहंकार पल भर में ही फुर्र हो जाता है।

अब हम देहपुरुषों के विद्रोह का वर्णन करेंगे, जो कि पुरुषों के विद्रोह के जैसा होने के कारण दुनिया भर में मशहूर है। किसी वक्त राजा की लापरवाही से देहदेश में दीनता व हीनता पसर जाती है। इससे सारे देहपुरुष कुपोषित, विषाक्त एवं क्षीण हो जाते हैं। बहुत समय तक वे अपने

शरीर की दुर्दशा की ओर ध्यान न देते हुए भी, देहदेश के हित में ही लगे रह कर, अपने विहित कर्म तत्परता के साथ करते रहते हैं। इससे वे अधिक से अधिक क्षीण होते चले जाते हैं। अनेक देहपुरुष अकालमृत्यु के सम्मुख होते हुए; अशिक्षा, बेरोजगारी, बीमारी, कुपोषण व दुर्घटना आदि मुसीबतों के कारण, अपने सम्बन्धियों एवं बालकों की मृत्यु के मूकदर्शक जैसे बनकर रह जाते हैं। वैसी हालत में उनका रो-रो कर बुरा हाल हो जाता है। इतनी बुरी हालत के बावजूद भी वे भरपूर शारीरिक व मानसिक तनावों को सहते हुए, अपने अधिष्ठाता देहसमाज के यथानिर्दिष्ट कर्त्तव्यकर्मों का निर्वाह करते रहते हैं, परन्तु उनके प्रति अत्याचारों की पराकाष्ठा तब सीमा को लांघ जाती है; जब राजा के आदेश, लापरवाही या अदूरदर्शिता की वजह से, उनमें से कोई बिरादरी लगातार व सीधे रूप में प्रताड़ित की जाने लगती है। बहुत समय तक उस बिरादरी के देहपुरुष अपनी मानसिक व शारीरिक प्रताड़ना को झेलते हैं, परन्तु जब उनकी सहनशक्ति जवाब दे देती है, तब वे लोग क्रोधित होकर देहदेश के साथ-साथ, उसके राजा के प्रति भी विद्रोही हो कर, देहसमाज के नाश के लिए प्रयासरत हो जाते हैं। उस देहबिरादरी के विद्रोही देहपुरुष छल-कपट के साथ देहसमाज-उद्धारक बनने का नाटक करके सभी देहपुरुषों को ठगते हैं, तथा उनसे अपना खूब सेवा-पानी करवाते हैं। और तो और, उनके लिए आबंटित, सारे संसाधनों को अपने मकसद के लिए इस्तेमाल करते हुए व बड़ी तेजी से औलादों को पैदा करते हुए, उनको भी विद्रोह फैलाने के लिए पूरे देहदेश में चहुँ ओर भेज देते हैं। वे विद्रोही कुछ भी काम नहीं करते; क्योंकि वे भारी तादाद में व लगातार ही औलादों को पैदा करने, उन्हें दाना-पानी मुहैया करवाने आदि की व्यस्तता के चलते शक्तिहीन से हो जाते हैं। ऐसे में, मुख्यधारा के सामाजिक व कर्मठ देहपुरुष, संसाधनों व सेवाओं की कमी के कारण कमजोर होते रहते हैं, और मरते भी रहते हैं। बहुत से तो सीधे ही विद्रोहियों के द्वारा नष्ट कर दिए जाते हैं। देहसैनिक तो पहले ही देहसमाज की बदहाली से क्षीण हुए होते हैं, ऊपर से विद्रोहियों के साथ लोहा लेते हुए, बेचैनी व थकान के मारे जल्दी ही हार जाते हैं। कई बार देहसैनिकों की ताकतवर योजना के बलबूते, एक-एककरके सारे सूक्ष्म विद्रोही मार दिए जाते हैं, परन्तु कई बार बात यहीं नहींरुकती और देहदेश की सुरक्षा व्यवस्था जवाब देने लग जाती है।

अब तक तो राजा के नोटिस (notice) में लाए बिना ही, देहदेश के विभिन्न मंत्री व अधिकारी ही स्थिति को संभाले हुए होते हैं, परन्तु अब राजा को भी सूचना दी जाने लगती है। देहदेशराजा इससे बड़ा परेशान रहने लगता है, और बड़ी दर्द महसूस करता है। फिर वह खुद भी लड़ाई में कूद जाता है। वह देहदेश के ऊपर समुचित ध्यान देने लगता है। वह पूरे देश में साफ-सुथरी व सेहतमंद

भोजन-पानी जैसी जरूरी चीजों का वितरण बढ़ा देता है। वह आयात शुल्क घटा कर आयात को भी बढ़वा देता है। वह उन जहरीला धुंआ छोड़ने वाले व जहरीले रसायन छोड़ने वाले कारखानों को बंद करवा देता है, जिनसे देहदेशजनता मानसिक व शारीरिक रूप से लगातार क्षीण हो रही थी, और विद्रोह के लिए प्रेरित हो रही थी। कई बार शत्रुओं के बार-बार के हमलों से भी देहपुरुष विद्रोह के लिए प्रेरित हो जाते हैं, तो कई बार वे चतुर शत्रुओं के बहकावे में आ जाते हैं। थोड़े-बहुत विद्रोही तो हमेशा ही दिखते रहते हैं, जिन्हें पकड़कर सजा भी दी जाती रहती है, परन्तु इस तरह का बड़ा विद्रोह तो जनता की स्थिति अति दयनीय हो जाने पर ही होता है। राजा विदेशों से भी हानिकारक चीजों के आयात पर रोक लगवा देता है। विद्रोह को कुचलने के लिए वह विदेशों से उच्च तकनीक के हथियार भी मंगवाता है, जिनसे विद्रोही देहपुरुष बेरहमी से लाखों-करोड़ों की संख्या में कुचले जाते हैं। उन उन्नत तकनीकों से देहसुरक्षाबलों को भी और ज्यादा ढाडस मिलता है, यद्यपि वे भी सहमे हुए होते हैं, और कई बार खुद ही उन उन्नत तकनीकों की चपेट में आ जाते हैं। कई बार वे उन्नत तकनीकें किसी चूक के कारण, निर्दोष देहदेश-जनता पर ही अपना कहर ढा देती हैं। कट्टर किस्म के विद्रोही देहपुरुष तो कभी भी मुख्यधारा में वापिस नहीं लौट पाते, इसलिए उनको ख़त्म करके ही उनसे छुटकारा मिलता है। हल्के स्तर के विद्रोहियों का मानसिक इलाज किया जाता है, व उन्हें सही मार्गदर्शन दिया जाता है। भविष्य में ऐसी कुव्यवस्था कभी नहीं होगी, ऐसा पक्का बताकर वे आश्वस्त किए जाते हैं। ऐसा करने पर वे कई बार सुधर भी जाते हैं, और वापिस मुख्यधारा में भी लौट जाते हैं। कई बार वे राजा की भली मंशा से संतुष्ट नहीं हो पाते और धीरे-धीरे अपनी उग्रता बढ़ाते हुए कट्टर विद्रोही बन जाते हैं। ऐसे में फिर उनको टपकाने के सिवाय कोई चारा नहीं बचता।

सभी तरीकों के नाकामयाब होने पर देहदेश शीघ्र ही नष्ट हो जाता है, और अपने साथ उन विद्रोही देहपुरुषों को भी ले डूबता है। उनकी मूर्खता पर हंसी आती है, क्योंकि वे अपने क्षणिक लाभ के लिए, अपने उस मालिक देहदेश को तबाह करने पर आमादा हो जाते हैं, जिसकी बदौलत ही लम्बे वक्त तक व भरपूर मात्रा में विभिन्न सुख-सुविधाएँ उपलब्ध होती रहती हैं। मतलब यह है कि वे अपने पैरों पर खुद ही कुल्हाड़ी मार देते हैं। पुरुषों के जैसे नजरिये के विपरीत, देहपुरुष क्रोध, मूर्खता व विद्रोहिता आदि सभी अभिव्यक्तियों-भावों को प्रकट करते हुए भी उनमें कभी आसक्त नहीं होते। वे उसी तरह से द्वैताद्वैत का परिशीलन करते हैं, जैसे कि किसी नौटंकी में नाटकबाज। यद्यपि पुरुषों को ऐसे सभी कांडों से बचना चाहिए, क्योंकि वे बंधे हुए हैं, और

जिंदगी से हमेशा के लिए छुटकारे की खातिर जिंदगी के मोहताज हैं, जबकि देहपुरुष हमेशा ही आजाद हैं, इसलिए उन्हें कोई फर्क नहीं पड़ता।

इन सब बातों से सिद्ध होता है कि सभी इंसानियत के उसूलों को, देहपुरुषों की तरह, द्वैताद्वैत की अक्ल के साथ निभाने को ही शरीरविज्ञान दर्शन नाम दिया गया है। आज आसक्ति रोग संक्रामक रोग की तरह हर जगह व्याप्त है, इसलिए इसके समूल नाश के लिए बहुत ज्यादा बल लगाने की जरूरत है, जो कि अच्छे आचार-विचार व शविद को मिलाकर ही मिल सकता है। युक्तियुक्त ढंग से बर्ताव करते हुए भी, जगत के प्रति सत्यत्व बुद्धि को ही आसक्ति कहते हैं, और असत्यत्व बुद्धि को अनासक्ति। बस और कुछ नहीं, यही धारणा का अन्तर है मात्र, जो कि पुरुषों को देहपुरुषों से अलग करता है।

देहदेश में देहपुरुष यद्यपि एक-दूसरे के आश्रित होते हैं, फिर भी वे बहुत ज्यादा स्वावलंबी भी होते हैं। यहाँ पर इस योग्यता से जुड़ी एक सत्य घटना याद आ रही है, जिसमें खनन-खुदाई आदि का वह काम भी शामिल हो जाएगा, जो शुरु में ही देहपुरुषों के व्यवहारों, भावनाओं व कामों की सूचि में दर्शाया गया है। वैसे तो विवाह के बाद नए देहदेश के निर्माण की खातिर, राजकन्या के पितृदेहदेश के सीमान्त भाग में सभी सुख-सुविधाओं से युक्त एक अति सुन्दर महल पहले से ही बना हुआ होता है, परन्तु कई बार मौसमी ज्यादतियों की वजह से वह उनके पहुँचने से पहले ही तबाह हो चुका होता है। ऐसे में उस परिवार का आत्मनिर्भर होना बड़ा जरूरी हो जाता है। ऐसा ही कुछ उस वक्त का नजारा था। पहले भी वर्णित की गई रिवाज के अनुसार, वर-वधु का शुभ मिलन राजमार्ग के बीच में एक छोटे से परन्तु भव्य महल में आयोजित किया गया था। इससे यह भी जाहिर होता है कि स्थूलदेश की ही तरह, देहदेश में भी रिवाजों का चलन होता है। वहाँ पर पितृदेश के द्वारा दी गई सुख-सुविधाएँ पर्याप्त थीं। जब सुविधाएँ काफी कम पड़ गईं, तो वह जोड़ा अपनी कुछ औलादों के साथ उस बड़े महल वाले स्थान की तरफ चल पड़ा था। सुरक्षाकर्मी तो देहदेश में हर जगह मौजूद होते ही हैं, इसलिए वहाँ भी पहले से ही थे, लेकिन फिर भी वहाँ पर इक्के-दुक्के चोर-उचक्के नजर आ रहे थे, इसलिए राजपरिवार की सुरक्षा के लिए आसपास के सुरक्षाकर्मी भी वहाँ इकट्ठे हो गए थे। देहदेश की सुरक्षा व्यवस्था हमेशा ही बड़ी चाक-चौबंद होती है, जिससे सभी देहपुरुष पूरी सुरक्षा व लगन के साथ भरपूर जीवन जी पाते हैं। उस निर्जन-निर्वन स्थान पर कुछ-कुछ भूख से परेशान वह राजपरिवार महल का नामों-निशान न पाकर हैरान था। शायद चोर-उचक्के उसका बचा-खुचा हिस्सा भी उठाकर ले गए थे। राजसहायता का भी उस

उजाड़ जगह पर एकदम पहुंचना लगभग नामुमकिन सा ही था। देहदेश में देहपुरुष सभी विद्याओं में पूर्णतः प्रशिक्षित होते हैं, यह अलग बात है कि वे किसी विशेष विद्या को ही व्यावहारिकता के रूप में ढालते हैं। आपातकाल में भी कोई विरले देहपुरुष ही नई विद्या को व्यावहारिक बना पाते हैं। स्थूलजगत में भी तो इस तरह के पुरुष विरले ही होते हैं। ऐसी ही एक कोशिश उन्होंने भी की और वे कामयाब हो गए। उन्हें रसायन विद्या का स्मरण हो आया। उस विद्या से उन्होंने मिट्टी-पत्थर को घोलने वाला एक रसायन बनाया; जिससे उन्होंने महल, मार्ग, जल के कुँए, तालाब, फसलों के लिए खेत आदि सब कुछ जरूरी संरचनाएँ बना दीं। उस प्रदेश में तो साँस लेने के लिए हवा तक की भी कमी थी, इसलिए उस राजपरिवार ने कड़ी मेहनत से चारों ओर हरे-भरे वृक्ष भी उगा दिए।

इस तरह से उन्होंने खोद-खुदाई करके मुख्य राजमार्ग तक संपर्क सड़क का निर्माण भी कर लिया, जिससे होकर उन्हें राजसहायता भी प्राप्त होने लग गई। उस निर्जन प्रदेश की सकंटक सीमा एक स्थान पर विभक्त थी। लगता था कि जैसे वहाँ कोई प्रवेश-निकासी के लिए राजद्वार हो। वहाँ से चोर-उचक्के किस्म के सूक्ष्म पुरुष भी अन्दर घुस रहे थे, जिनके ऊपर देहसैनिक बुरी तरह से टूट के पड़ रहे थे। उस समय देहदेश की सुरक्षा प्रणाली कमजोर थी, शायद इस वजह से कि उस समय देहदेश में कोई गृहयुद्ध, कुप्रबंधन, अकाल, अलगाववाद, एकताहीनता, कर्तव्यविमुखता या देशप्रेमहीनता आदि का दौर भी साथ-साथ चल रहा था। इस वजह से मौके का फ़ायदा उठाते हुए, बहुत से उग्रपंथी ज़िंदा थे, जो कि निर्जन व भीड़ भरे इलाकों के बीच में छुट-पुट वारदातों को अंजाम दे रहे थे। वे चालाक भी बहुत थे, इसीलिए खुला हमला नहीं कर रहे थे, ताकि और ज्यादा फौज उस हलचल वाले क्षेत्र में न पहुंचा दी जाती। कालान्तर में देहदेश के और ज्यादा कमजोर हो जाने पर, उन्होंने बढ़िया मौक़ा जानकर व इकट्ठे होकर बहुत बड़ा हमला बोल दिया। क्षेत्र तनावग्रस्त व सतर्क घोषित कर दिया गया था, और वहाँ पर फौजियों व अन्य जरूरी साजो-सामान की आपूर्ति काफी हद तक बढ़ा दी गई थी। उस निर्जन स्थान में देहपुरुषों की हलचलें भी काफी बढ़ गई थीं, जिससे उस सीमान्त व ठंडी जगह पर भी काफी गर्मी महसूस हो रही थी। संघर्ष के उग्र हो जाने पर तो पूरे देहदेश को ही उच्च सतर्कता पर डाल दिया गया था।

फिर प्रेमयोगी वज्र ने देहदेश के राजा को उच्च कोटि के विदेशी हथियारों व अन्य साजो-सामान, जैसे कि भोजन, वस्त्र आदि का भारी आयात करते हुए पाया। ऐसे प्रचंड युद्धों में उच्च विदेशी तकनीकों के बिना, अक्सर देहदेशों की हार हो जाया करती है, क्योंकि दुश्मन तो अपने

घर-परिवारों को जंगलों में सुरक्षित छोड़ के, देहदेश की जनता के बीच में अन्दर घुसे होते हैं, इसलिए उनके निर्दोष परिवार व उनके अपने इलाके के निर्दोष लोग, सभी सुरक्षित रहते हैं। निर्दोष परिवारों समेत समूची निर्दोष जनता तो देहसैनिकों की ही मारी जाती है, जिसके सदमे से वे कुछ-कुछ मायूस व हतोत्साहित से, लाख बचने की कोशिश करते हुए भी हो ही जाते हैं, तथा सूक्ष्म शत्रुओं की तरह पूरी तरह से खुल कर नहीं लड़ पाते। साथ में, बीहड़ों में रहने वाले असभ्य सूक्ष्मशत्रु तो रोजाना के लड़ाई-झगड़ों के आदी होते हैं, इसलिए उन्हें कोई ज्यादा फर्क भी नहीं पड़ता, जबकि देहदेश के निवासी, यहाँ तक कि सैनिक भी सभ्य होते हैं, और एक वार करने से पहले भी कई बार सोचते हैं। इसलिए देहसैनिकों का कुछ परेशान होना तो लाजिमी ही है। कोई बहुत विरला व बहुत दमदार राजा ही ऐसे भीषण युद्ध में, बिना किसी विदेशी मदद के जीत पाता है। प्रेमयोगी वज्र ने देखा कि फिर ज्यादातर बारीक दुश्मन मारे गए। कुछेक को तो पहले की ही तरह देहदेश के बाहर धकेल दिया गया, परन्तु अब तो आयातित विदेशी आग्नेयास्त्र मिसाइलें (missiles) उनके अपने जंगलों-बीहड़ों में भी उनका पीछा करते हुए, उनको तबाह कर रही थीं। इस तरह से, विकसित हो रहे नए देहदेश की तरफ बढ़ रही एक विकट समस्या टल गई थी। इससे वह आराम के साथ पूर्णरूप से विकसित हो पाया, जब उसने मुख्य देहदेश से अलग होकर अपनी अलग व नई सत्ता कायम कर ली, यद्यपि बाद में भी वह उसके साथ पूरे सहयोग के साथ मिलजुल कर रहा, जिससे कि वे दोनों, अलग-अलग देहदेश नहीं, बल्कि एक ही देहदेश की दो रियासतें जान पड़ती थीं।

देहदेश के कमजोर होने पर कई बार सूक्ष्मशत्रु जीत भी जाते हैं। फिर वे नए देहदेश को बेरहमी से तबाह करने लग जाते हैं। नया राजा बड़े देहदेश के पास बार-बार मदद के लिए गुहार लगाता है, परन्तु वह भी, बार-बार कोशिश करने पर भी उस क्षेत्र को जीत नहीं पाता, हालांकि वह दुश्मनों को उस सीमित दायरे में रोक रखने में कामयाब हो जाता है, और अपने देश को बचा लेता है। फिर पुराना राजा बहुत पीड़ित हो जाता है, और नए देहदेश को अपने देश से निकल कर सुरक्षित हो जाने की सलाह देता है। शत्रुपीड़ित नया राजा भी फिर बड़े राजा से कोई दरकार न रखता हुआ उस सलाह को मान जाता है। फिर नए देश के सभी निवासी भी अपने-अपने साजोसामान के साथ, समय से पूर्व ही, अपनी अर्धविकसित अवस्था में ही बड़े सैलाब की तरह बाहर निकल जाते हैं, अपना एक नया देहवतन बसाने।

उपरोक्त प्रकार के ज्यादातर मामलों में, नया सूक्ष्म देश बसाने की इच्छा रखने वाले, वे सूक्ष्म लोग सफल नहीं हो पाते, क्योंकि पूर्ण परिपक्वता से पहले उनमें तजुर्बे की कमी के साथ, उनके देश में संसाधनों की भी भारी कमी होती है, यद्यपि बड़ा राजा उनकी बहुत सहायता करता है। उनके बाहर निकल जाने से बड़ा राजा भी चैन की साँस लेता है, अपने देश को सुरक्षित जानकर, क्योंकि ज्यादातर सूक्ष्म हमलावर भी पीड़ित क्षेत्र में शिकार/भोजन न मिलने से परेशान होकर, बाहर की ओर भाग खड़े होते हैं। बाकी बचे हुए शत्रु मार दिए जाते हैं, परन्तु कई बार बहुत से दुश्मन उस बीहड़ जैसे क्षेत्र में ही छिपे रहकर मौके की तलाश में रहते हैं। जब किसी और देहदेश का विकास शुरु होने लगता है, तब वे फिर से हमला कर देते हैं। वैसे कई बार, देहदेश के राजा की अपनी गलती से भी नया देहदेश समय से पूर्व ही अपनी नई सत्ता कायम कर लेता है। वह उसका विशेष ध्यान नहीं रखता; क्योंकि विकास की शुरुआत में देहदेश को उच्च गुणवत्ता के संसाधनों की समुचित मात्रा में आवश्यकता होती है। नया देहदेश तजुर्बे की कमी से नाजुक भी ज्यादा होता है। ऐसी हालत में नया देहदेश परेशान व नाराज होकर, अपनी नई सत्ता का डंका समयपूर्व ही बजा देता है। हालांकि बाद में नए देहदेश की अजीबोगरीब हरकतें देखकर राजा को अपनी चूक का अहसास जरूर होता भी है, और वह उसे समुचित रीति से स्थापित करने के लिए पुरजोर कोशिश करता भी है। कभी यह कोशिश कामयाब हो जाती है, और कभी नहीं भी।

कई बार सूक्ष्म हमलावर नए विकसित हो रहे देहदेश की सीमाएं तोड़कर, पूरे मूल देहदेश में ही फैल जाते हैं। फिर भयानक लड़ाई शुरु होती है, जिसके अंजाम में या तो देहदेश उन पर किसी भी तरह से काबू पा लेता है, या फिर उनसे हार कर नष्ट हो जाता है। फिर शुरुआत से एक नए मूल-देहदेश के निर्माण का मार्ग प्रशस्त हो जाता है। चित्तवृत्तियाँ ही संकल्पों व कर्मों के रूप में विद्यमान होती हैं। पुरुषों के द्वारा महसूस की जाने वाली चित्तवृत्तियाँ दरअसल सबसे पहले उनके देहदेश के प्रबंधकपुरुषों के मन में ही तो पैदा होती हैं, यद्यपि वे उन्हें महसूस नहीं करते या यदि करते हैं, तो अनासक्ति के साथ करते हैं। साथ में, सभी देहप्रबंधक सूक्ष्म पुरुषों की चित्तवृत्तियों को भी पुरुष अनुभव नहीं करते, बल्कि उनके कुछेक विरले समूहों की चित्तवृत्तियों को ही महसूस करते हैं। यह इसलिए होता है, क्योंकि ज्यादातर प्रबंधक, राजा अर्थात पुरुष से कोई अपेक्षा नहीं रखते। कई बार अत्यधिक से अत्यधिक विरले मामले में राजा देहदेश के सभी प्रबंधकों की, यहाँ तक कि साधारण संदेशवाहकों की चित्तवृत्तियों को भी अनुभव करने लग जाता है, जैसा कि संभवतः आत्मज्ञानी योगी श्री गोपी कृष्ण ने कुण्डलिनीजागरण के बाद अनुभव किया था। इसमें

राजा अनुभव करते-करते इतना परेशान हो जाता है कि उसका जीवन ही जोखिम में पड़ जाता है। उनका यह कहना कि कुण्डलिनीजागरण के उपरांत अचानक से मस्तिष्क विकसित होने लगता है, जिससे कि अधिक से अधिक अंतर्दृष्टि व सहजानंद को ग्रहण करने की क्षमता आए; सत्य प्रतीत होता है। तभी तो व्यक्ति बालक की तरह की बलहीनता को अनुभव करता है, क्योंकि ऊर्जा मस्तिष्क के विनिर्माण में व्यय होती रहती है। अगर देहदेश के अन्दर कुछ ज्यादा ही हलचल या गड़बड़ हो जाए, तो ही उन गड़बड़ियों को महसूस करने वाले प्रबंधकों की चित्तवृत्तियों को राजा महसूस करता है, ताकि राजा भी कुछ मदद कर सके। इसी तरह से देहदेश के विदेशनीति, विदेशों से सुरक्षा व विदेशी आयात-निर्यात से सम्बंधित वजीरों की चित्तवृत्तियों को भी राजा महसूस करता है, क्योंकि इन मामलों में इंतजाम की सारी दरकार सिर्फ राजा से ही होती है। देहपुरुष किसी भी हालत में, उनके अपने द्वारा महसूस किए जाने वाले संकल्पों के प्रति राजा की आसक्ति की उम्मीद नहीं करते, क्योंकि इससे तात्कालिक और नकली फायदे के इलावा देहदेश का नुकसान ही होता है। देहदेश-राजाओं की आसक्ति से देहदेशों के बीच में तो आपसी झगड़े, अशाँति, हिंसा आदि बुराइयाँ रहती ही हैं; साथ में उनके अपने देहदेश में भी सभी बुराइयाँ विद्यमान रहती हैं। क्योंकि अगर एक मुल्क का शहंशाह दूसरे मुल्कों को परेशान करके अपनी आदत बिगाड़ता है, तो वह निश्चित ही अपने मुल्क की खातिरदारी भी नहीं कर सकता और उसकी अपनी हुकूमत के लोग भी उससे परेशान होकर उसके जैसे ही बन जाते हैं, या फिर बगावत कर देते हैं। यह परम्परा नीचे से नीचे, ऐसी ही चलती रहती है। आखिर में वह मुल्क ही तबाह हो जाता है।

दिवसकाल की लगातार मेहनत से थके हुए देहपुरुष रात्रि हो जाने पर अपनी चित्तवृत्तियों को ढीला करते हुए, गहन निद्रा के बीच प्रविष्ट हो जाते हैं। वे नींद सहित उसके अँधेरे को व सपनों की छिटपुट चित्तवृत्तियों को भी अहमियत नहीं देते, इसीलिए उनसे भी बचे रहते हैं। वैसे ज्यादा ही अहमियत या तवज्जो देने को ही तो आसक्ति कहते हैं। चित्तवृत्तियों के जागने के साथ ही, वे प्रभात होने पर पुनः जाग जाते हैं। देहदेश के कुछ राजकर्मचारी-देहपुरुषों का काम राजा को ठीक समय पर जगाना होता है। उनके पास घड़ी जैसा एक यन्त्र होता है, जिसमें अलार्म (alarm) लगाकर वे ठीक समय पर जाग जाते हैं, और साथ में राजा को भी जगा देते है। कई बार, यदि वे रात्रि-चौकीदार देहपुरुष रोगी हो जाएं या उनकी घड़ी में गड़बड़ी हो जाए, तो राजा की निद्रा अनियमित सी हो जाती है। इस समस्या को रोकने के लिए या पुनः चौकीदारी-प्रणाली

को दुरस्त करने के लिए, उन देहपुरुषों को पुष्ट करना पड़ता है, व उस घड़ी को ठीक करवाना पड़ता है।

स्थूलसमाज के विधिनियम व आदेश, अर्थात लॉ एंड ऑर्डर (law and order) की तरह ही देहसमाज में भी सबसे ज्यादा फायदेमंद माहौल बना कर रखा जाता है। जैसे स्थूलसमाज में आन्दोलन, विद्रोह आदि के वक्त फायदेमंद हालात की परिभाषा बदल दी जाती है, उसी तरह से सूक्ष्मसमाज में भी। फिर जिस तरह से स्थूलसमाज में अस्थायी तौर पर नया लॉ एंड ऑर्डर लाया जाता है, उसी तरह से सूक्ष्मसमाज में भी। देहसृष्टि की सभी निर्माण–योजनाएं, निर्माण के पहले से ही उस देहसृष्टि के सभी देहपुरुषों के मन में बनी होती हैं, ठीक उसी तरह से, जैसे ब्रम्हापुरुष के मन में सारी स्थूल सृष्टि सूक्ष्म रूप में विद्यमान रहती है। वैसे तो देहसृष्टि बनने की शुरुआत के कुछ देहपुरुष ही (स्थूल सृष्टि के प्रजापतियों की तरह) इन सभी योजनाओं को सही ढंग से याद करके संपूर्ण सृष्टि तैयार कर पाते हैं। बाद के देहपुरुषों के मन में ये योजनाएं रहती तो हैं, पर वे उन्हें भूल जाते हैं, जिससे वे नई देहसृष्टि नहीं बना पाते। यह जरूरी भी है, क्योंकि नहीं तो सृष्टियों के अन्दर सृष्टियों का अंत ही नहीं होगा और इस तरह से अव्यवस्था फैल जाएगी। इसी तरह से ही, सभी स्थूलपुरुषों के अन्दर भी सारी स्थूलसृष्टि सूक्ष्म रूप में विद्यमान होती है, परन्तु ब्रम्हापुरुष व प्रजापतियों के सिवाय, सभी उसे भूल जाते हैं। देहपुरुष तो देहसृष्टि के विस्मरण के समय भी पूर्णमुक्त ही रहते हैं, क्योंकि वे उस विस्मरण को भी अहमियत नहीं देते, जबकि स्थूलपुरुष विस्मरण को अहमियत देने से, उससे बंध कर अपनी विशाल आत्मा को भूल जाते हैं, और जड़वत जैसे हो जाते हैं।

कई बार देहदेश के भंडारघर जरूरत से ज्यादा भरे जाते रहने से जल्दी ही घिस-पिट जाते हैं। ऐसा ज्यादातर तब होता है, जब राजा अपने कमीशन, सिफारिश, पक्षपात आदि मुद्दों से जुड़े हुए स्वार्थों की वजह से बाहरी देशों से, बिना जरूरत के भी विभिन्न पदार्थों का आयात करवाता ही रहता है। कुछ समय बाद भण्डारण से जुड़ी सभी व्यवस्थाएं क्षीण होकर नष्ट हो जाती हैं। भण्डारघरों के कर्मचारी भी काम के अत्यधिक बोझ के कारण, काम छोड़ कर चले जाते हैं। फिर सारा अतिरिक्त सामान देहदेश के मैदानों, गली-गूचों, रास्तों, जलाशयों में व यंत्रों-मशीनों आदि जरूरी साजो-सामान के आसपास पड़ा-बिखरा हुआ सड़ता रहता है, और गन्दगी फैलाता है। इससे बहुत से देहपुरुष भी बीमार पड़ जाते हैं, और बहुत से जरूरी यन्त्र जंग आदि लगने से खराब हो जाते हैं। फालतू सामान को इधर से उधर ढोने में भी बहुत सी शक्ति बर्बाद हो जाती है। देहदेश को

चलाना बड़ा मुश्किल हो जाता है। सूक्ष्मचूहों के बीच भी मुफ्त की दावत उड़ाने की एक होड़ सी लग जाती है, जिससे देहदेश में बीमारियाँ भी फैल जाती हैं। वे चूहे जगह-जगह छेद कर देते हैं, जिन्हें बंद करना खासा मुश्किल हो जाता है, क्योंकि वे बार-बार वहाँ छेद करते रहते हैं। मजबूरन सारे देहदेश की सफाई की जाती है, और सारा फालतू सामान नदी-नालों में बहा दिया जाता है। इसी तरह, स्थूलदेश के प्लास्टिक (plastic) आदि नष्ट न होने वाले कूड़े-कचरे की तरह ही, देहदेश में भी कूड़ा-कचरा होता है, जिसे नष्ट करने के लिए देहदेश को भी स्थूलदेश की तरह ही भारी कीमत चुकानी पड़ती है। इससे देहदेश की कीमती विदेशी मुद्रा की भी बहुत ज्यादा बर्बादी हो जाती है। इससे देहदेश बहुत कमजोर हो जाता है, व बहुत सी विपत्तियों के बीच फँस जाता है। सूक्ष्मशत्रु तो उसके पीछे जैसे हाथ धोकर ही पड़ जाते हैं। नए भंडारघर बनाने की कोशिश भी की जाती है, पर यह कठिन काम होता है, और इसमें समय भी काफी लगता है। ज्यादातर देहदेशों में तो वे बन ही नहीं पाते दुबारा से। स्थूलदेशों में, विशेषकर विकासशील देशों में भी तो भंडारघर बनाने में पुरुषों की रुचि कम ही दिखाई देती है, जिससे करोड़ों टन (ton) का सामान हर साल बर्बाद हो जाता है। अंत में राजा को ही मन मसोस कर मजबूरी में कदम उठाना पड़ता है। उसे जरूरत से ज्यादा का आयात बंद करवाना पड़ता है, जिससे उसके बहुत से कमीशनखोर देहपुरुष खासे नाराज होकर उसे गुपचुप तरीके से परेशान भी करते हैं। राजा ने तो देहदेश चलाना होता है, इसलिए उसे कुछ समय के लिए उन अपने ही अधिकारी देहपुरुषों की नाराजगी भी झेलनी पड़ती है। हालांकि कुछ समय बाद तो अच्छी आदत उनको पड़ ही जाती है। इससे एक समस्या यह भी आती है कि हर वक्त जरूरत के सामान को आयात करते रहना पड़ता है। यदि किसी कारणवश कभी आयात में बाधा पैदा हो जाए, तो उसकी देहप्रजा के देहपुरुष भूखे भी मर जाते हैं। कई बार भुखमरी फैलने से पूरा देहदेश ही तबाह भी हो जाता है। इस विकट समस्या से बचने के लिए उसे अपने भंडारघरों को कामचलाऊ तरीके से चलाना पड़ता है, जिसके लिए ताउम्र उसे विदेशी तकनीक के सहारे रहना पड़ता है, जिसके अपने नुकसान अलग से होते हैं। ऐसे ही मामले स्थूलदेश में भी तो दिखते रहते हैं।

देहदेश में सफाई-व्यवस्था भी गजब की होती है। वहाँ पर प्रत्येक वस्तु, सदैव अपने निर्धारित स्थान पर ही मिलती है, यहाँ-वहाँ पर बिखरी हुई नहीं। इससे किसी भी वस्तु के बारे में भ्रम होने व उसके गुम होने का अंदेशा नहीं रहता। देहदेश की समस्त भूमियाँ इतनी अधिक शुद्ध व साफ-सुथरी होती हैं कि स्थूलदेश में उतनी शुद्ध व साफ-सुथरी भूमि को प्रायोगिक रूप में भी तैयार

नहीं किया जा सका है। उसी तरह से, देहदेश का जल इतना अधिक निर्मल व शुद्ध होता है कि उसके सामने स्थूलदेश के बड़े से बड़े जलशुद्धीकरण के उपाय भी बौने सिद्ध हो जाते हैं। वायु भी वहाँ पर साफ-सुथरी, बिना धूलकणों की, बिना रोगाणुओं की, बिना हानिकारक गैसों की व बिना दुर्गन्ध की होती है। वह वायु न तो अधिक ठंडी होती है, और न ही अधिक गर्म, अपितु उचित व स्थिर तापमान पर स्थित होती है, जिससे देहदेशनागरिक बड़ा भारी आराम व तन-मन की सम्पूर्ण तरोताजगी महसूस करते हैं। देहदेश में साफ-सफाई की ऐसी सुन्दर सुव्यवस्था, देहदेश में नियुक्त नैष्ठिक सफाई कर्मचारियों, देहदेशनागरिकों की साफ-सुथरी/अच्छी आदतों, चाकचौबंद सुरक्षाव्यवस्था आदि के कारण ही सम्भव हो पाती है।

देहपुरुष अपने मित्र देहपुरुषों के प्रति कृतज्ञता का भाव भी प्रकट करते हैं। वे शत्रुओं की युद्धनीति को भली भांति स्मरण रखने वाले सैनिकों की, उनके जीवनपर्यंत सेवा करते रहते हैं। बदले में वे विशेषज्ञसैनिक भी अपने जीवनभर, भविष्य के सूक्ष्मयुद्धों में शत्रुओं को धूल चटाने में देहदेश की खासी मदद करते रहते हैं। स्थूलपुरुष भी तो युद्धविशेषज्ञों की सेवाओं का लाभ इसी तरह से उठाते हैं। यह हैरानी होना लाजिमी ही है कि देहपुरुष इतने बड़े-बड़े काम, बिना आसक्ति के कैसे कर लेते हैं? अगर वे कर लेते हैं, तो पुरुष भी कर सकते हैं, क्योंकि दोनों के काम व वेश-परिवेश के बीच में रत्ती भर का भी अंतर नहीं है। केवल अभ्यास की ही आवश्यकता है।

शरीरविज्ञान-दार्शनिक प्रतिक्षण ही अनंत उपचारों से, अनायास ही, अर्थात अनजाने में ही, अर्थात बिना किसी औपचारिकताओं के ही देहपुरुषों की पूजा करते रहते हैं, क्योंकि देहपुरुष कहीं दूर नहीं, अपितु उनके अपने शरीर में ही विद्यमान होते हैं। वे उन्हें नद, नदी, तालाब, समुद्र आदि अनेक जल-स्रोतों के जल से स्नान करवाते हैं, तथा उन्हें पाद्य, अर्घ्य, आचमनीय, अभिषेक व शुद्धोदक आदि के रूप में जल अर्पित करवाते हैं। विविध व सुगन्धित हवाओं के रूप में नाना किस्म के धूप लगाते हैं। औषधियों से उनकी चिकित्सा करते हैं। अनेक प्रकार के वाहनों में बैठाकर उन्हें एक प्रकार से पालकियों में घुमाते भी हैं। उनके द्वारा बोली गई शुभ वाणी से उनके उपदेश ग्रहण करते हैं। सुनाई देती हुई, अनेक प्रकार की शुभ वाणियों को उनके प्रति अर्पित स्तोत्र, घंटानाद व शंखनाद समझकर, उनसे उनकी स्तुति करते हैं। अनेक प्रकार के व्यंजनों से उन्हें भोग लगाते हैं। नेत्ररूपी दीप-ज्योति से उनकी आरती उतरवाते हैं। अनेक प्रकार के मानवीय मनोरंजनों, संकल्प-कर्मरूपी व्यायामों से व योग-भोगादि अन्यानेक विधियों से उनका मनोरंजन करते हैं। इस प्रकार से शरीरविज्ञान दार्शनिकों के द्वारा किए गए सभी मानवीय काम व व्यवहार ईश्वरपूजारूप ही हैं।

पुरुष की सारी अनुभूतियाँ, उसके काम-काज को काबू में रखने वाली, उसकी चित्तवृत्तियाँ ही हैं, जिन्हें देहपुरुष ही अपने अन्दर पैदा करते हैं, देहदेश को नियंत्रित करने के लिए। ऐसा समझने वाला पुरुष देहपुरुषों को ही कर्ता-भोक्ता समझता है, और कर्मबंधन से मुक्त हो जाता है। वास्तव में हम अनादिकाल से ही पूजा व सेवा करते आ रहे हैं, इस देहमंडल की। परन्तु हमें इसका पर्याप्त लाभ नहीं मिलता, क्योंकि हमें इस बात का ज्ञान नहीं है, और यदि ज्ञान है तो दृढ़ता से विश्वास करते हुए, इस बात को मन में धारण नहीं करते। शविद के अध्ययन से यह विश्वास दृढ़ हो जाता है, जिससे धारणा भी निरंतर पुष्ट होती रहती है। इससे हमें पुराने समय के किए हुए, अपने प्रयासों का फल एकदम से व इकट्ठा, कुण्डलिनीजागरण के रूप में मिल जाता है। इस तरह से हम देख सकते हैं कि शरीरविज्ञानदार्शनिक पूरी तरह से वैदिक-पौराणिक पुरुषों की तरह ही होते हैं। बाहर से वे कुछ अधिक व्यवहारवादी व तर्कवादी लग सकते हैं, परन्तु अन्दर से वे उनसे भी अधिक शाँत, समरूप व मुक्त होते हैं। वे उस तूफान से भड़के हुए महासागर की तरह होते हैं, जो बाहर से उसी की तरह, तन-मन से भरपूर चंचल-चलायमान होते हैं, परन्तु अन्दर से उसी की तरह शाँत व स्थिर भी होते हैं।

देहदेश में पार्थमन नामक एक अतिविशिष्ट, वरिष्ठ व अतिमहत्त्वपूर्ण अधिकारी होता है। वह बहुत से छोटे अधिकारियों की नियुक्ति करता है, जो फिर श्रमिकदेहपुरुषों को अनेक महत्त्वपूर्ण स्थानों पर नियुक्त करते रहते हैं। कुछ अधिकारी भण्डारगृहों में नियुक्त किए जाते हैं, जो भंडारणकार्य में लगे कर्मचारियों का निरीक्षण करते रहते हैं। पार्थमन अपने एक वडेलाल नामक निकटतम कनिष्ठ अधिकारी (immediate junior officer) को भी नियुक्त करता है, जो कृषिविभाग व जलविभाग के देहपुरुषों को उन उपरोक्त छोटे अधिकारियों का विशेष ध्यान रखने का आदेश जारी करता रहता है। वे अधिकारी देहगुफाओं में प्रवाहित हो रहे द्रव के रिसाव को रोकते हुए, व्यापारिकद्रव की बर्बादी को भी रोकते हैं। यदि कहीं गुफा में छिद्र आदि हो जाए, तो उसे श्रमिकदेहपुरुषों से बंद करवाते रहते हैं। वे द्रव के बहाव को धक्का देने वाले, बिजली आदि से चलने वाले मोटर-पम्प (motor pump) पर तैनात कर्मचारियों पर भी दृष्टि रखते हैं, ताकि वे समयानुसार व परिस्थिति के अनुसार मोटर की शक्ति को बढ़ाते व घटाते रहें। क्योंकि यदि वे आवश्यकता से अधिक शक्ति बढ़ाते हैं, तो उससे देहदेश की बहुमूल्य ऊर्जा की बर्बादी होती है, और गुफाओं की दीवारों के खराब होने व उनमें छिद्र हो जाने की संभावना बनी रहती है। साथ में, इससे मोटर व अन्य जुड़ी हुई मशीनों (machines) के खराब होने का डर भी बना रहता है,

जिससे देहदेशव्यवस्था ठप पड़ सकती है। वैसे, इस तरह के आपातकाल के लिए, विदेशों से मंगा कर एक अतिरिक्त मोटर रखी होती है, परन्तु मोटर को प्रतिस्थापित (replace) करना बहुत महंगा पड़ता है, और कई बार यह प्रयास असफल भी हो जाता है। उपरोक्त बढ़ई पुरुषों की ठोक-मुरम्मत से, गुफा के आस-पास, बाढ़ आने की संभावना भी बहुत कम रह जाती है। यदि आवश्यकता से कम शक्ति पर मोटर चलाई जाए, तो देहदेश में अन्न-जल व अन्य वस्तुओं का अकाल पड़ सकता है। पार्थमन देहदेश का एक पहुंचा हुआ वरिष्ठ अधिकारी होता है। उसकी पहुँच देहदेश के प्रशासक व विद्वान वर्ग तक निरंतर बनी रहती है, जिन्हें वह बड़ी चतुराई व शालीनता से नियंत्रण में रखता है। कई बार देहदेश उसको अहमियत नहीं देता, जिससे वह क्षीण हो जाता है। ऐसा विशेषकर तब होता है, जब देहदेश एक नए देहदेश के निर्माण में व्यस्त होता है। नए देश के उत्साह में, उसमें अहंकार भर जाता है, और वह अपने को आवश्यकता से अधिक अहमियत देने लगता है, जिससे वह पार्थमन जैसे महत्त्वपूर्ण अधिकारियों की भी उपेक्षा कर देता है। ऐसे में देहदेश की मशीनरी स्तंभित सी हो जाती है। सारे श्रमिकदेहपुरुष उचित नियंत्रण के बिना, बेकाबू होकर अपना काम छोड़ने लग जाते हैं। देहदेश में अकाल जैसी स्थिति उत्पन्न हो जाती है। देहपुरुष भूख व प्यास से मरने लग जाते हैं। देहदेश के सभी अधिकारी व मंत्री भी त्राहि-त्राहि करने लग जाते हैं, और बहुत सुस्त पड़ जाते हैं। ऐसे में राजा भी कैसे प्रसन्न रह सकता है। वह भी इनके बिना नपुंसक की तरह बनकर, भीषण अवसाद से ग्रस्त हो जाता है। लेखक ने भी एक बार देहदेश की ऐसी ही दयनीय अवस्था को प्रत्यक्ष रूप से देखा था। उसने देखा कि फिर भले मन के कुछ पड़ौसी राजाओं ने उस मरणासन्न राजा को संभाला। वे अन्य देशों से या खुले बीहड़ों में विचरण करने वाले, वैसे नैष्ठिक पुरुषों को ढूंढ कर लाए, जो पार्थमन जैसे अधिकारी की योग्यता रखते थे। फिर उन पुरुषों को मृतप्राय, स्थानीय पार्थमन अधिकारियों का स्थान लेने के लिए, प्रभावित देहदेश में नियुक्त किया गया। लेखक ने देखा कि फिर धीरे-धीरे देहदेश की दशा सुधरने लगी। उस अहंकारग्रस्त देहदेश में कुछ वडेलाल जैसे अधिकारियों को भी बाहर से ला कर, नियुक्त किया गया। यदि पार्थमन अधिकारियों को शीघ्रता से सुदृढ़ न किया गया होता, तो वह देहदेश शीघ्र ही क्षीण हो जाता।

मूलदेहदेश के सीमान्त भाग में, नवनिर्मित देहदेश के निकट, एक बहुत बड़ा भंडारघर होता है। उस भंडारघर में नए देहदेश के लिए आवश्यक, सारा साजो-सामान भंडारित करके रखा जाता है। नवनिर्मितदेहदेश की आवश्यकतानुसार, उसे साजो-सामान की आपूर्ति की जाती रहती है। नए

देहदेश के देहपुरुष प्रशासन चलाने में कम कुशल होते हैं। उनके पास संसाधनों की भी कमी होती है। अतः नया देश शुरुआत के कुछ समय के लिए, अधिकतर रूप से मूलदेश के आश्रित रहता है, जब तक कि वह अपने देहपुरुषों के अथक प्रयासों से सारे संसाधन नहीं जुटा लेता व स्वावलंबी नहीं बन जाता। भंडारघर से नए देहदेश की ओर जाने वाले राजमार्ग पर भारी संख्या में सुरक्षाबल उपलब्ध करवाया गया होता है, क्योंकि बीहड़ इलाकों के शत्रु लूटपाट की मंशा से अक्सर हमला करते रहते हैं। भंडारघर में भी सुरक्षा के चाक-चौबंद प्रबंध किए गए होते हैं। कई बार बड़े आक्रमण भी हो जाते हैं, जिनसे निपटना बहुत मुश्किल हो जाता है। ऐसा ही एक बड़ा आक्रमण लेखक ने भी प्रत्यक्ष देखा था। एकबार लेखक ने देखा कि भंडारघर का द्वार खुलने के बाद, विभिन्न साजो-सामान को राजमार्ग तक पहुंचाया जा रहा था। वहाँ से वह विभिन्न प्रकार के वाहनों में भरा जा कर, राजमार्ग के सीमान्त राजद्वार तक पहुँचाया जा रहा था। फिर बाहरी राजद्वार को खोलने का आदेश दिया जा रहा था। सामान के बाहर निकाले जाने के एकदम बाद, राजद्वार को बंद किया जा रहा था, ताकि चोर उचक्के अन्दर न घुस पाते। फिर भंडारघर से सामान की दूसरी खेप को राजमार्ग तक निकाला जाता था, और पुनः वही प्रक्रिया चलती थी। इस तरह से, वह प्रक्रिया बार-बार इसी तरह से दोहराई जा रही थी। फिर वह सामान मूलदेश से बाहर का मार्ग तय करके, नए देहदेश तक पहुंचा दिया जाता था। उस समय बाहरी राजद्वार के आसपास शत्रुओं का कोई उत्सव आदि चला हुआ था, जिससे चारों ओर भारी संख्या में देहशत्रु नजर आ रहे थे। उस दिन, द्वारपाल भी कुछ सुस्त जैसे लग रहे थे। संभवतः वे बीमार थे, रात को कम सोए हुए थे, भूखे-प्यासे थे या किसी नशीली वस्तु आदि का सेवन किए हुए थे। यह भी हो सकता है कि उन्होंने शत्रुओं से रिश्वत ले रखी हो। तभी उन्हें नींद आ गई और बाहरी राजद्वार बहुत समय तक खुला रह गया। मौका देखते ही शत्रु भारी संख्या में अन्दर घुसने लगे। जब तक द्वारपालों की आँख खुली, तब तक असंख्य शत्रु देश के अन्दर प्रविष्ट हो चुके थे। राजमार्ग पर भयानक युद्ध शुरु हो गया था। शत्रु संख्या में अधिक थे, व वे काफी घातक भी थे, इसलिए सुरक्षाबलों ने शीघ्र ही घुटने टेक दिए। देखते ही देखते शत्रुओं ने पत्थर, पेड़ आदि उखाड़-उखाड़ कर राजमार्ग को ध्वस्त व पूर्णतः अवरुद्ध कर दिया, ताकि साजो-सामान की आपूर्ति बाहर को न की जा सकती और वे स्वयं ही सारे साजो-सामान का भरपूर व मनमुताबिक़ लुत्फ उठा पाते। शत्रु भंडारघर में घुस चुके थे। वहाँ पर उन्होंने मनमाने ढंग से खाते-पीते हुए, भारी मात्रा में तोड़-फोड़ कर दी व बाहर की ओर के, छोटे-बड़े सभी मार्ग अवरुद्ध कर दिए। देहदेश से भी अतिरिक्त सुरक्षाबल वहाँ भेजा गया।

महाराज को भी सूचना दे दी गई। उस विशाल भंडारघर में शत्रु यहाँ-वहाँ छिपे हुए थे, जिन्हें ढूंढ पाना बहुत कठिन हो रहा था। इस तरह से, सुरक्षाबलों से बचते हुए, वे भंडारघर से ही विभिन्न प्रकार की उन्नत किस्म के आग्नेयास्त्रों मिसाइलों का प्रक्षेपण करते हुए, देहदेश के विभिन्न व महत्त्वपूर्ण स्थानों को तबाह करते जा रहे थे। उन पर काबू पाना कठिन हो रहा था। देहदेश उनके निरंतर हमले से बहुत क्षीण हो गया था, और नष्ट होने की कगार पर था। उसी समय राजा ने सूझबूझ का परिचय देते हुए, पूरे भंडारघर को ही विस्फोट से उड़वा दिया। यद्यपि अधिकाँशतः वह देश उस के जैसे अत्युन्नत भण्डारगृह को या उसके नष्ट भाग को पुनः कभी भी निर्मित नहीं कर पाता। सारे शत्रुओं का सफाया हो गया और देहदेश पुनः विकास के पथ पर आगे बढ़ने लगा। कई बार विदेशों से मंगवाए हुए उन्नत प्रकार के हथियार, सीधे ही उस राजद्वार से अन्दर प्रविष्ट करवाए जाते हैं, और भंडारघर में पहुंचाए जाते हैं। अधिकाँशतः इससे सफलता मिल जाती है, परन्तु कई बार वे उन्नत आग्नेयास्त्र भी भंडारघर की चित्र-विचित्र संरचनाओं, मार्गों व वस्तुओं के बीच में छिपे हुए शत्रुओं को टार्गेट (target) नहीं कर पाते। कई बार तो शत्रु प्रत्याग्नेयास्त्रों /एंटीमिसाइलों (anti missiles) को छोड़कर, उन्हें निष्प्रभावी कर देते हैं।

देहपुरुष के शरीर में भी पुरुषसमाज व देहपुरुषसमाज की तरह ही एक भरा-पूरा समाज विद्यमान होता है। उस अतिसूक्ष्म समाज में कर्म-विभाजन भी हूबहू दूसरे समाजों की तरह ही होता है। उदाहरण के लिए, वहाँ पर भी ड्राईवर/अतिसूक्ष्मचालकपुरुष अतिसूक्ष्म स्वचालित यानों में, उस अतिसूक्ष्म देश के उपयोग की सामग्रियां लादकर, उन्हें अतिसूक्ष्मराजमार्गों पर लाते-ले जाते रहते हैं। वहाँ पर वैसे ही भण्डारगृह व भंडारीपुरुष विद्यमान होते हैं। उसमें बड़े समाजों की तरह ही जलविभाग व जलाशय भी निर्मित होते हैं। उसमें ऊर्जाविभाग व तापविद्युत घर भी बिल्कुल वैसे ही हैं। कुछ लोग किसान होते हैं, जो देहपुरुषदेहदेश के लिए विभिन्न प्रकार के अन्न उगाते रहते हैं। उस देहपुरुषदेहदेश में, देहदेश को सुचारु रूप से चलाने वाला एक बहुत बड़ा संविधान भी निर्मित होता है। उस संविधान को पुस्तक के रूप में, बहुत सावधानी से सहेज कर रखा जाता है। उस पुस्तक को लिखने के लिए वहाँ पर बहुत से विशेषज्ञ, पर्यवेक्षक व लेखक विद्यमान होते हैं। वे उसमें नए-नए बन रहे महत्त्वपूर्ण नियमों व कानूनों को भी जोड़ते रहते हैं। वह देश जो कुछ भी, अपने अनुभवों से, अपनी समस्याओं से व अपनी गलतियों से सीखता रहता है, उन सभी का आकलन एक विशेषज्ञकमेटी के द्वारा किया जाता रहता है। यदि वे नई विद्याएँ देश के लिए आवश्यक प्रतीत होती हैं, तो उन्हें स्थूलरूप में लिखकर लेखकपुरुषों के समक्ष भेजा

जाता है, ताकि वे उचित कांट-छाँट करके, उन्हें संक्षिप्तरूप से संविधान में दर्ज कर सकें। समय के साथ-साथ, पुस्तक में लिखे गए अक्षर, धुंधले होकर मिटते भी रहते हैं, जिन्हें भी वे पुनः से लिखकर दुरस्त करते रहते हैं। नई पुस्तक की छपाई के बाद, छपाई-दोषों से उत्पन्न गलतियों की संभावना अधिक रहती है। वे उन गलतियों को भी ठीक करते रहते हैं। जब उस देहपुरुषदेहदेश से एक नए देहपुरुषदेहदेश का निर्माण, देशविभाजन से हो रहा होता है, तब मूलदेश के संविधान की, उस विशाल पुस्तक की समरूप प्रति (duplicate copy) को, वहाँ के अत्याधुनिक छपाईखाने (publishing house) में बड़े जोर-शोर के साथ छापा जाता है। वहाँ पर एक विशेषज्ञ छपाईकर्तासमूह के साथ बहुत से कर्मचारी काम कर रहे होते हैं। इस तरह से उस अतिसूक्ष्मदेश में भी सभी सामाजिक संरचनाएँ बनी होती हैं, तथा उस अतिसूक्ष्मसमाज में स्थित अतिसूक्ष्म पुरुषों के द्वारा भी वहाँ के सभी सामाजिक कार्य अनासक्ति के साथ किए जाते हैं। इससे सिद्ध होता है कि देहदेशों की यह परम्परा अनंत है, और पुरुष इनको कभी भी नहीं लांघ सकता। इसलिए बेहतर है कि पलायन को छोड़कर देहपुरुष की तरह ही आचरण किया जाए। इससे एक बात और सामने आती है कि जब पुरुष की तरह का जीवन-व्यवहार व यहाँ तक कि उससे कहीं अधिक उन्नत-उत्कृष्ट रूपमें, सृष्टि के विभिन्न व अनगिनत प्रकार के देहपुरुषों के द्वारा बखूबी दर्शाया जाता है; तो अत्युन्नत मस्तिष्क के धनी पुरुष से केवलमात्र उनके जैसी जीवनचर्या की ही अपेक्षा नहीं की जा सकती, अपितु उससे मानवीय भावनाओं, विशेषतः प्रेम की अपेक्षा किया जाना स्वाभाविक ही है।

किसी रोग आदि के कारण अपनी मृत्यु को निकट आया देखकर भी पुरुष कर्मत्याग नहीं कर पाता है, क्योंकि उसे मुक्ति की सबसे ज्यादा जरूरत होती है। इससे सिद्ध होता है कि शीघ्रता से मुक्ति केवल कर्म से ही हो सकती है। पुरुष की ही तरह, सुरक्षा व भोजन के लिए प्रवृत्ति तो साधारण से साधारण वस्तुओं व स्वतन्त्र जीवों में भी दिखाई देती है, फिर पुरुष में ही पहाड़ जैसा अहंकार क्यों पैदा हो जाता है? ठीक ऐसी ही प्रवृत्ति बड़े से बड़े ग्रह-नक्षत्रों, तारा-मंडलों और यहाँ तक कि ब्रम्हांड में भी स्पष्ट नजर आती है, जो तनिक भी अहंकार नहीं करते, तो फिर पुरुष नामक, सृष्टि का इतना अधिक छोटा सा एक टुकड़ा, इतना बड़ा अहंकार क्यों पाल लेता है? दरअसल पुरुषदेह के सिवाय, उस जैसी अन्य सभी देहें अनासक्ति के कारण ही अहंकार से बची रहती हैं। पुरुष के अन्दर अहंकार का प्रवेश आसक्ति-मार्ग से ही तो होता है। वैसे अगर अनुकरण करना ही हो, तो देहपुरुषों का ही करना चाहिए, क्योंकि अनासक्तियुक्त पदार्थों में पुरुष के सबसे

ज्यादा नजदीक या यूं कहो कि पूर्ण रूप से अनासक्त-पुरुषरूप ही यदि कोई है, तो वह देहपुरुष ही है।

यदि पृथ्वी को पुरुष के जितने आकार तक छोटा कर दिया जाए, तो उस पर स्थित पुरुष, देहपुरुषों के जितने छोटे हो जाएंगे। शविद के अनुसार, जो सामाजिक पुरुष सीधे ही चिदाकाश/निराकार ईश्वर का ध्यान करते हैं, वे अधिकाँशतः सफल नहीं हो पाते, क्योंकि उनमें चित्तवृत्तियों की मंदता के कारण, उनसे देहपुरुषों की तरह के, मानवता से भरे हुए अनासक्तियुक्त कर्म आसानी से नहीं हो पाते। जिस तरह से द्वैतमय दृष्टिकोण बंधनकारी है, उसी तरह से केवलमात्र शरीर-विज्ञान भी बंधनकारी है, परन्तु शरीरविज्ञान-दर्शन मुक्तिकारी है। वैदिक संस्कृति, विशेषतः वैदिक कर्मकांड से मिश्रित विज्ञान भी शविद की तरह ही मुक्तिदायक है। यह पल भर में ही आत्मलाभ देना शुरु कर देता है। शविद केवल बनावटी या समकालीन दर्शन नहीं है, अपितु यह अनादिकाल से चली आ रही जीव-परम्परा के ऊपर आधारित होने के कारण अनादि-अनंत है। इस दर्शन में वे ही तथ्य प्रस्तुत किए गए हैं, जो शरीर में स्वाभाविक रूप से विद्यमान हैं। अतः यह दर्शन प्राकृतिक होने के साथ-साथ वैज्ञानिक भी है। वैज्ञानिक इसलिए भी है, क्योंकि इसकी सिद्धि के लिए विज्ञान का सहारा भी लिया गया है। शविद को नया दर्शन भी कह सकते हैं, और पुराना भी। नया इसलिए, क्योंकि इसको बनाते समय पूर्वनिर्मित किसी भी दर्शन की सहायता नहीं ली गई है, और पुराना इसलिए, क्योंकि यह दर्शन पूर्वनिर्मित दर्शनों से भी मेल खाता है। जब-जब भी प्रेमयोगी वज्र इस दर्शन से जुड़ी हुई कागज़ आदि सामग्रियों को अपने भ्रमण के थैले में डाले रखता था, तब-तब उसे एक दिव्य तांत्रिक व आध्यात्मिक शक्ति अपनी रक्षा करते हुए महसूस होती थी। इसका सीधा सा तात्पर्य है कि शविद को एक सुन्दर पुस्तक के या अन्य सम्बंधित चिन्हों के रूप-आकार में ढालकर व सहेज कर रखना, आधुनिक तंत्र के अनुसार बहुत लाभदायक है। लगता है कि यह विधि पुरातन तंत्रों के मंडलों व चिन्हों की तरह ही काम करती है। इसी तरह, यह शविद अपनी सभी ई-रीडिंग डीवाईसिस (e-reading devices) पर भी सदैव डाऊनलोड करके रखा जा सकता है, ताकि इसकी दिव्य तांत्रिक शक्ति प्रतिक्षण उपलब्ध होती रहे। बौद्धदर्शन के अनुसार, तंत्र-मंडल स्थूल संसार के सूक्ष्म व प्रतीकात्मक रूप होते हैं। शरीरमंडल से बड़ा तंत्र-मंडल क्या हो सकता है, क्योंकि इसमें संपूर्ण सृष्टि अपने पूर्णरूप में विद्यमान रहती है। शरीरमंडल ईश्वरनिर्मित होता है, तथा जीवंत, गतिमय व मजबूत हाड़-माँस का बना होता है, इसलिए मानव-निर्मित मंडलों की तरह जड़मय व क्षणभंगुर नहीं होता।

शरीरमंडल सदैव स्वयं ही साथ-साथ चला रहता है। इस शरीरमंडल के अन्य भी बहुत से लाभ हैं। पुरुष को जब यह ज्ञात हो जाता है कि वह अनादि काल से देहमंडल की अराधना करता आ रहा है, तो वह क्षणभर में ही देहपुरुष की तरह मुक्त हो जाता है। क्योंकि हम अनादिकाल से ही इस अद्वैतशाली शरीरमंडल की अराधना करते आए हैं, इसलिए इसका भली भांति ज्ञान हो जाने से, अनादिकाल से की जा रही अद्वैतसाधना का फल तुरंत व अनायास ही प्राप्त हो जाता है, जिससे कुण्डलिनीजागरण या आत्मज्ञान अचानक या अविलम्ब रूप से भी हो सकता है। साथ में, देहावसान के समय जब कहीं पर भी, कोई भी सान्त्वनाप्रद आश्रय दृष्टिगोचर नहीं होता, उस समय यह अपना शरीर ही अद्वैतमंडल के रूप में सर्वश्रेष्ठ आश्रय सिद्ध होता है, यदि शविद से इसे पहले से ही पुष्ट किया गया हो। क्योंकि मनुष्य अपने शरीर से ही सर्वाधिक प्रेम (आसक्तिपूर्वक) करता है, अतः शविद के माध्यम से उसके द्वारा अपने शरीर में ही अद्वैत का दर्शन सर्वाधिक लाभकारी/मुक्तिकारी है।

इस शरीरमंडल की पूजा हम अनजाने में ही अनादिकाल से करते आ रहे हैं, और तब तक करते रहेंगे, जब तक मुक्त नहीं हो जाते, क्योंकि सभी जीवयोनियों के शरीर एकसमान रूप से, ब्रम्हांड के प्रतिरूप ही होते हैं। अतः इस मानवजीवन में शरीरमंडल की अराधना से, जो अद्वैतदृष्टिकोण हमारे अन्दर विकसित होगा, वह आगे होने वाले अपने जन्मों में भी हमें सूक्ष्मरूप में स्मरण होता रहेगा, क्योंकि उन जन्मों में भी तो हम इसी मानवशरीरमंडल के जैसे जीव-शरीरमंडलों में ही निवास कर रहे होंगे। तांत्रिकयौनयोग के लिए शरीरविज्ञानदर्शन का ज्ञान होना अत्यावश्यक है। जब योगी व योगिनी, दोनों ही अपने-अपने व एक-दूसरे के शरीरों को अद्वैतशाली शरीरमंडलों के रूप में देखते हैं, तब दोनों ही अद्वैतमयी आनंद से भर जाते हैं। इसी तरह से, जब वे दोनों, आपसी मिलन के समय, अद्वैतभाव से संपन्न हो जाते हैं, उस समय अद्वैतशील शरीरमंडलों की अराधना स्वयं ही हो जाती है।

देहदेश का सीमासुरक्षाबल कई बार कमजोर पड़ जाता है। कई देहदेशों की सीमाभित्ति तो शुरु से ही कमजोर होती है। देहदेश के निकटतम बाहर के वातावरण के ठण्ड, सूखा, दुर्गमता आदि क्लेश भी कई बार बहुत घट जाते हैं। ऐसी सभी अवस्थाओं में, सीमा के निकट बस कर रहने वाले शत्रुओं के हौंसले बुलंद हो जाते हैं। वे सभी, भिन्न-भिन्न आकार-प्रकार के टोलों में बसे होते हैं। ऐसी अनुकूल परिस्थितियां प्राप्त होने पर, उनके टोले देहदेशसीमा के बिल्कुल निकट अपना नया डेरा बसा लेते हैं। वे सीमा पर स्थित चौकीदारों/निरीक्षकों से साँठगाँठ कर लेते हैं, और उन्हें

रिश्वत के रूप में बहुत सारा धन देते हैं। उसके बदले में, निरीक्षक देहपुरुष उन्हें अपने देश से सभी सुविधाएँ प्राप्त करने देते हैं। कई बार उन टोलों के बीच में देहशत्रु भी छिपे होते हैं। वे सुविधाएँ इकट्ठी करके लाने का बहाना बनाकर, देहदेश के अन्दर घुस जाते हैं, और निरीक्षकों को चकमा देते हुए, देहदेश के अन्दर की ओर भाग जाते हैं। काफी अन्दर घुसकर वे देहदेश के विरुद्ध घातक कार्यवाही की तैयारी में जुट जाते हैं। कुछ समय के प्रयास से वे पर्याप्त शक्ति संगठित कर लेते हैं, और कालान्तर में अनुकूल अवसर को भांपते ही, देहदेश पर घातक हमला कर देते हैं। भयानक युद्ध शुरु हो जाता है। पूरे देहदेश में अतिसतर्कता का दौर घोषित कर दिया जाता है। शीघ्र ही उनका सफाया कर दिया जाता है, यद्यपि बहुत से शत्रु छिप कर जीवित बच जाते हैं, क्योंकि वे देहदेश में लम्बे समय से रह रहे होते हैं, जिससे वे उसके चाल-चलन का पूर्वाकलन करना अच्छी तरह से सीख जाते हैं। यद्यपि वह देश तो पुनः दूसरी बार उनसे पराजित नहीं हो सकता, क्योंकि वह उनकी युद्धनीति से अच्छी तरह से परिचित हो गया होता है। फिर भी वे शत्रु दूसरे देहदेशों पर हमला करने की फिराक में हमेशा रहते हैं। पहले से ही कमजोर देश तो उन्हें अपने दम से हरा ही नहीं पाते, इसलिए उन्हें विदेशी शस्त्रास्त्रों के आश्रित रहना पड़ता है।

एक बार लेखक ने देखा कि शत्रुहन नामक एक देहदेश घुसपैठियों की उन टोलियों के प्रति पहले से ही सतर्क हो गया था। जैसे ही सीमानिरीक्षकों ने कुछ टोलियों को सीमा पर देखा, वैसे ही उन्होंने उसकी सूचना महाराज को भेज दी। घुसपैठियों की उन टोलियों ने देहदेश की सीमाभित्ति के बाहरी हिस्से का सहारा लेकर, अपने तम्बू (tent) आदि लटकाए हुए थे, जिनमें वे अपने साजो-सामान के साथ, अस्थायी रूप में निवास कर रहे थे। इसी कारण से, उन तक देहदेश के सुरक्षाबल नहीं पहुँच पा रहे थे। उस दीवार के कारण, उनके द्वारा छोड़े गए अस्त्र भी अपना प्रभाव नहीं दिखा पा रहे थे। अंततः महाराज को अपने विदेशी मित्रों की सहायता लेनी पड़ी। फिर लेखक ने देखा कि प्रभावित राजा ने एक पड़ौसी राजा से सहायता के लिए प्रार्थना की। पड़ौसी राजा ने लेखक के देखते ही, भारी मात्रा में अस्त्र-शस्त्र, देहदेश की सीमा के बाहर इकट्ठे करवा दिए। घुसपैठियों की टोलियाँ भाग पाती, इससे पहले ही पड़ौसी राजा ने उनका सफाया करवा दिया। कुछ शत्रु, ध्वनिपछाड़ लड़ाकू-विमानों ((supersonic fighter planes) में सवार होकर हमला करते हैं। राजा उनके ऊपर पैनी नजर रखता है। वह उनके ऊपर वायुयानरोधी बंदूकों (anti aircraft guns) से निशाना लगवाता है, और उनकी ओर आग्नेयास्त्र/मिसाईलें भी छुड़वाता है, परन्तु वे लड़ाकू विमान बहुत फुर्तीले होते हैं, और बार-बार बच कर निकल भागते हैं। वे फिर

गहन वनों, घाटियों व अँधेरे से भरे हुए अन्य स्थानों में छिप जाते हैं। जब राजा का ध्यान उनके ऊपर नहीं होता अथवा रात्रिकाल में, वे पुनः आक्रमण कर देते हैं। वे सीमाभित्ति के साथ लगते खुले-डुले क्षेत्र में, आसमान से नीचे उतर (landing) जाते हैं। फिर वे अपने लड़ाकू यानों में लाए गए, अत्याधुनिक छिद्रजनक यंत्रों (drilling machines) की सहायता से सीमाभित्ति में छिद्र कर देते हैं। उन यंत्रों में ध्वनिमोषक (silencer) लगे होते हैं, जिससे उनसे जरा भी आवाज नहीं होती। राजा को इससे उनकी गतिविधियों का पता ही नहीं चलता। कई बार वे रडार (radar) को धोखा देते हुए, बहुत कम ऊंचाई पर उड़ रहे होते हैं। कई बार, उन शत्रुओं के उड़ते हुए जेट-यानों (jet planes) की कर्कश व तीखी आवाज को सीमास्थित ध्वनि-संवेदक (sound-sensors) पकड़ लेते हैं, जिसकी सूचना राजा को मिल जाती है, और वह चौकन्ना हो जाता है। सुरक्षाबलों की ज़रा सी भी हलचल देखकर, वे वायुयान फिर से लम्बी उड़ान भरकर, दूर छिप जाते हैं, और वहाँ से, अत्याधुनिक दूरबीनों से स्थिति पर नजर बना कर रखते हैं। मौक़ा देखते ही, वे पुनः हमला कर देते हैं। कई बार राजा को सीमाभित्ति में स्थित संवेदकों (sensors) से, सीमाभित्ति में हो रहे छिद्र की सूचना मिल जाती है। वैसी हालत में वह तुरंत ही, बड़ी तेजी के साथ, सीमा के निकट खड़े वायुयान को गोला-बारूद से उड़वा देता है। वायुयान को बचाव के लिए, उड़ान भरने का मौक़ा ही नहीं मिल पाता। पायलट भी उस हमले में मारा जाता है। छेदक-यंत्र को भी नष्ट करवा दिया जाता है। वहाँ पर अन्दर घुसने की फिराक में खड़े अन्य शत्रु, इधर-उधर भाग जाते हैं। कई बार राजा अन्य कामों में इतना व्यस्त हो जाता है कि सीमा-संवेदकों के द्वारा भेजी गई सूचना के ऊपर समुचित ध्यान ही नहीं दे पाता। कई बार सीमासंवेदक-उपकरणों की बैटरी (battery) डाऊन (down) हो जाती है, जिससे वे ठीक ढंग से सूचना नहीं दे पाते। वैसी परिस्थितियों में, शत्रु शीघ्रता के साथ अन्दर घुस जाते हैं, और वहाँ पर सुरक्षाबालों के भय से, सीमा के निकट ही लूटपाट करते हैं। डर के मारे, वे माल-टाल लेकर, जल्दी ही बाहर निकल जाते हैं। उसके बाद तुरंत ही, जटिल यंत्रों से, छिद्र उतनी अधिक सफाई से बंद करवा दिया जाता है कि सीमाभित्ति पूर्णतः पहले की तरह ही हो जाती है, और यह पता भी नहीं चलता कि वहाँ पर कभी कोई छिद्र भी बनाया गया था। उससे राजा धोखे में रहता है, और यह बात कभी नहीं मानता है कि देश पर कोई हवाई हमला भी हुआ था। उससे राजा आगे के लिए भी सतर्क नहीं हो पाता। कई बार कुछ घातक, चतुर व निडर शत्रु देश के अन्दर ही ठहर जाते हैं, और सुरक्षाबलों के साथ लुक्काछुप्पी खेलते हुए, वहाँ पर अपने संख्याबल को बढ़ा देते हैं। फिर धीरे-धीरे मजबूत होकर,

सम्पूर्ण देश के साथ युद्ध का ऐलान कर देते हैं। वह देवासुर संग्राम भी बहुत भीषण होता है। कई लोग सोच सकते हैं कि भौतिकरूप से इतने क्षुद्र व सूक्ष्म देहपुरुष के ऊपर क्यों ध्यान लगाना चाहिए। परन्तु महर्षि पतंजलि तो कहते हैं कि किसी भी चीज पर ध्यान लगाया जा सकता है, जैसे कि हवा, जल, प्रकाश-बिंदु, आवाज व यहाँ तक कि अणु-परमाणु पर भी; तो फिर देहपुरुष पर क्यों नहीं। वे तो हमारे सबसे निकट, अतः अतिप्रिय हैं। उसमें ध्यान लगाना सरल भी है, क्योंकि वह स्थूलपुरुष के साथ सर्वाधिक समानता रखता है। वास्तव में देहपुरुष की तरह ही, हवा, पानी आदि पदार्थ भी ध्यानालंबन के आलंबन ही होते हैं, अर्थात जो ध्यान का आलंबन, मानवरूप, मन में बसा होता है, वही इन अद्वैतशाली पदार्थों के ऊपर आरोपित हो जाता है। इस तरह से, ध्यान तो केवल एक ही मनुष्याकृति का लग रहा होता है। अर्जुनपुत्र अभिमन्यु को उत्तरा के गर्भ में रहते हुए, अपने को अश्वत्थामा द्वारा छोड़े गए ब्रम्हास्त्र से बचाते हुए, जो श्रीकृष्णविग्रह चारों ओर दिखाई दे रहे थे, वे संभवतः देहदेश के सुरक्षकदेहपुरुष/देहसैनिक ही थे, जिनके ऊपर पूर्वजन्म के प्रभाव से, अभिमन्यु का समाधिचित्र, अर्थात कुण्डलिनी (श्रीकृष्णविग्रह) आरोपित हो गई थी। वैसे कुण्डलिनीयोग करते हुए, कुण्डलिनीचित्र (देहपुरुषचित्र) स्वयं ही उभर कर सामने आ जाता है।

पूर्वोक्त श्रेणी के कई घुसपैठिए तो उन्नत छेदक यंत्रों (advanced drilling machines) की सहायता से, सीमाभित्ति में बहुत सी सुरंगें बना देते हैं, और उनमें छिप कर रहने लग जाते हैं। उन्हें पकड़ पाना बहुत कठिन होता है। गुप्तचर-चित्रकों (detective-photographers) के स्वचालित-चित्रक (cameras) तो उन्हें देख ही नहीं पाते। जब उनकी संख्या काफी बढ़ जाती है, तब वे सीमा-संवेदकों की पकड़ में आने लगते हैं। उनमें उत्पन्न विद्युतीय सूचना, मूल-ध्वनि (source-sound) के अनुसार बदलती रहती है। फिर सीमासंवेदकों में उत्पन्न, बदलती हुई विद्युतीय-सूचना (electric-signal), बदलती हुई विद्युत-तरंगों (electromagnetic waves) के रूप में अंतरिक्षस्थित संचार उपग्रह (communication sattelite) तक अग्रसारित (relay) हो जाती हैं। वहाँ पर वे तरंगें विवृद्ध (amplify) कर दी जाती हैं, जो फिर राष्ट्रीय राजधानी-स्थित संचार-स्तम्भ (communication tower) तक पहुँच जाती हैं। वहाँ पर वे तरंगें पुनः बदलते हुए विद्युत-प्रवाह (electric current) के रूप में परिवर्तित कर दी जाती हैं। फिर वह विद्युत-प्रवाह, तारों (cables) के माध्यम से होता हुआ, राजकक्ष तक पहुँच जाता है, और उसमें लगे ध्वनि-चेतावक (sound-alarm) में, स्रोतध्वनि के अनुसार, बदलती हुई आवाज का रूप ले

लेता है। उस झकझोरने वाली आवाज को सुनकर, राजा कुछ बेचैन सा व सतर्क हो जाता है। वह जासूसी-पत्रकारिता (media) से जुड़े विभाग को प्रभावित क्षेत्र का मुआयना (survey) करवाने का आदेश देता है, परन्तु विभाग से जुड़े लोगों को वहाँ से खाली हाथ ही वापिस आना पड़ता है, क्योंकि वहाँ पर उन्हें कुछ भी नहीं मिलता है। फिर राजा के द्वारा विदेशी गुप्तचरों का एक विशेष दस्ता वहाँ भेजा जाता है। उसके लोग समस्या की जड़ तक पहुँच जाते हैं, और राजा को यथास्थिति से अवगत करवा देते हैं। फिर समस्या यह होती है कि घुसपैठियों के ऊपर पूर्वोक्तानुसार हवाई-बमबारी या गोलीबारी भी नहीं करवाई जा सकती, क्योंकि उससे सीमाभित्ति को गंभीर क्षति पहुँचने की संभावना बनी रहती है। वास्तव में, वे घुसपैठिए उन सुरंगों से बाहर निकलते ही नहीं। उनके कुछेक सदस्य सीमाभित्ति के निकटतम भाग में बने लोगों के घरों में, रात के समय डाका डालते रहते हैं, और खाने-पीने का सामान चुराकर ले जाते रहते हैं। वे संभवतः वेष बदलकर सुरंगों से बाहर निकलते हैं, जिससे रात्रि-गश्त कर रहे सुरक्षाकर्मियों के संदेह के दायरे में नहीं आ पाते। यदि उनको पकड़ा भी जाए, तो भी उनकी विशाल संख्या को कोई विशेष हानि नहीं पहुंचती। सुरक्षाकर्मी सुरंगों के अन्दर घुसने से घबराते हैं, क्योंकि घुसपैठिए तो सुरंगों के अन्दर रहने के आदी हो चुके होते हैं, और लड़ाई में किसी पर भी आसानी से भारी पड़ सकते हैं। फिर राजा एक गूढ़ युद्धनीति के तहत, मित्र देशों की सहायता से, सीमान्तक्षेत्र के लोगों के घरों में विषयुक्त भोजन-पानी रखवा देता है। वह विष, देश के बाहर स्थित बीहड़ों में प्राकृतिक रूप से पाया जाता है, जो वहाँ से उन्नत तकनीकों की सहायता से इकट्ठा कर लिया जाता है। वह धीमा जहर होता है, जो उसे खाने वाले को एकदम से नहीं मारता। उससे घुसपैठियों को, चुराए गए खाद्य-पेयों में विष होने का संदेह नहीं हो पाता। यद्यपि उन्हें उनका स्वाद थोड़ा बदला-बदला सा व अजीब सा जरूर लगता है, परन्तु बाध्यतावश उन्हें वह खाना-पीना ही पड़ता है, क्योंकि भूखे-प्यासे मरने से अच्छा तो यही है कि बेस्वाद खाद्य-पेय भी खा-पी लिया जाए। फिर धीरे-धीरे करके, उनका समूल नाश हो जाता है। राजा भी फिर पुनः चैन की बंसी बजाने लग जाता है।

जिन जंगली बीहड़ों से देहदेश खड़ी फसल का आयात करता है, वहाँ पर कई बार सूखा पड़ जाता है। फिर जब वहाँ वर्षा होती है, तो फसल एकदम से बड़ी हो जाती है, जिससे उसमें कुछ अत्यावश्यक पौष्टिक तत्त्वों की भारी कमी हो जाती है, और मिट्टी के जहरीले तत्त्व भी जल्दबाजी के कारण, उसमें और फिर उससे निर्मित खाद्यान्न में प्रविष्ट हो जाते हैं। भरपूर फसल से उत्साहित

देहपुरुष, उससे तैयार खाद्यान्न को जी भर कर खाते हैं। इससे कुछ देहपुरुष जहरीले तत्त्वों के कुप्रभाव से मर जाते हैं। कुछ देहपुरुष अत्यावश्यक तत्त्वों की कमी से प्रभावित होकर, अजीबोगरीब से शारीरिक व मानसिक लक्षण प्रकट करने लग जाते हैं। वे अपने-अपने कार्य करने में अस्मर्थ हो जाते हैं। देहदेश की सत्ता के ऊपर संकट के बादल मंडराने लगते हैं। राजा भी अपने मंत्रियों व अधिकारियों के पागलपन को देखकर, स्वयं भी पगला जाता है। वह उस विषाक्त फसल के आयात पर प्रतिबन्ध लगवा देता है। उसके मंत्री अपने देश से, उस अत्यावश्यक तत्त्व के निर्यात पर पूर्णप्रतिबन्ध लगवा कर, उस तत्त्व को समस्त देशवासियों में वितरित करवा देते हैं। भण्डारघरों से भी भारी मात्रा में उस तत्त्व को बाहर निकलवा कर, वितरित करवा दिया जाता है। उस तत्त्व का दुरुपयोग करने वाले के लिए सजा निर्धारित कर दी जाती है। जलशोधन विभाग को भी उस बहुमूल्य तत्त्व का विशेष ध्यान रखने के लिए आदेश जारी कर दिए जाते हैं। राजा उस तत्त्व के आयात को बढ़ावा देता है। इस प्रकार के उपायों को शीघ्रतम रूप से न करने पर, कई बार देहदेश की सारी व्यवस्था ही चौपट हो जाती है।

एक बार लेखक ने देखा कि पूर्वोक्त हवा के झंझावात से पूर्ण जलाशय की ओर वायु का प्रवाह रुक सा गया था। वास्तव में जंगली बीहड़ों से, जिन संकरी घाटियों व गुफाओं से होकर वह वायु का प्रवाह आता था, उसमें कुछ वायुयान, हवा के खिंचाव में फँस कर अन्दर घुस आए थे। वैसे तो जब-तब उस हवा के प्रवाह में फँस कर वायुयान अन्दर घुसते रहते हैं; परन्तु स्टिंगर मिसाइल (stinger missile) धारण किए हुए, घाटियों व गुफाओं के प्रत्येक महत्त्वपूर्ण स्थान पर तैनात सैनिक, उनको आसमान से नीचे गिराते रहते हैं, और नष्ट करते रहते हैं। कई बार तो बड़े-बड़े व चित्र-विचित्र आकार-प्रकार के माँसभक्षी पशु-पक्षी भी, देहदेश के पालतु पशु-पक्षियों की गंध से आकृष्ट होकर, तेज हवा के झोंकों की सहायता से अन्दर प्रविष्ट हो जाते हैं। कई बार तो वे नरभक्षी भी बन जाते हैं। उन सभी को भी सैनिकों के द्वारा मार गिरा दिया जाता है। उस दिन तो बहुत अधिक संख्या में वायुयान नजर आ रहे थे, व उनमें बैठे लोग भी दुष्ट प्रकृति के लग रहे थे। सैनिक उनसे निपट नहीं पाए और वे बहुत अन्दर तक प्रविष्ट हो गए। वे अपने बमवर्षक विमानों से चित्र-विचित्र प्रकार के विध्वंसक बमों को गिराए जा रहे थे, जो उन वायुमित्र घाटियों व गुफाओं को अत्यधिक हानि पहुंचा रहे थे। स्थान-स्थान पर गड्ढे पड़ गए थे, व चट्टानें उखड़ गई थीं। उनके मलबे से घाटियाँ व गुफाएँ संकरी हो रही थीं। जैसे-जैसे बमवर्षक आगे-आगे बढ़ रहे थे, वैसे-वैसे ही घाटियों व गुफाओं की संकीर्णता बढ़ती जा रही थी। कई संकरी गुफाओं को तो उन्होंने पूर्णतः

अवरुद्ध कर दिया था। इससे जलाशय तक पहुँचने वाला, वायु का प्रवाह बहुत कम हो गया था। पूर्वोक्त वायुवाहक कर्मचारी बहुत तेजी से काम कर रहे थे, ताकि देहदेश में हवा की कमी न पड़ जाती। वे काम के बोझ से क्षीण हो रहे थे। सारे देहदेश में उच्चसतर्कता व आपातकाल का दौर घोषित किया जा चुका था। जलविभाग अपनी पूरी क्रियाशीलता दिखा कर, अधिक से अधिक जल को पूरे देहदेश में प्रसारित कर रहा था, जिससे उसमें तैर/बह रहे, वे पूर्वोक्त वायुवाहक कर्मचारी शीघ्रता से हर स्थान पर वायु को उपलब्ध करा सकते। जलाशय तक वायु को पहुँचाने के लिए, घाटियों व गुफाओं के द्वारों पर बड़े-बड़े पम्प (pump) फिट (fit) कर दिए गए थे, जो अपनी पूरी क्षमता से काम करते हुए, अधिक से अधिक हवा को खींच रहे थे। वे देहदेश की बहुमूल्य बिजली का जम कर उपयोग कर रहे थे। अधिक बिजली पैदा करते हुए, देहदेश के कोयले व पैट्रोल (petrol) आदि ऊर्जास्रोतों के भंडार खाली होने की कगार पर थे। बड़े-बड़े पम्प व उन पर काम करने वाले कर्मचारी भी काम के अत्यधिक बोझ के कारण हाँफने लग गए थे। पूरे देहदेश के लाखों-करोड़ों देहपुरुषों का दम घुटने लग गया था। ऐसा लग रहा था कि वे हवाई-दुश्मन, पूरे देहदेश को ही नष्ट करने पर तुले हुए थे। देहदेश का राजा भी अपने देश की, मंत्रियों की व अधिकारियों की वैसी दयनीय हालत देखकर, बार-बार गश खा कर गिर रहा था। राजा ने स्वयं भी बहुत से उपाय किए, जो वह कर सकता था। वह स्वयं ही बड़े-बड़े पम्पों को व बहुत से कर्मचारियों को अपने साथ लेकर, प्रभावित क्षेत्र की ओर चल पड़ा। उसने जी-तोड़ मेहनत करके, हवा के प्रवाह को बना कर रखा, परन्तु वह स्वयं भी थक गया था। उसने स्वयं कर्मचारियों के साथ मिलकर, ऊपर-ऊपर से जितना हो सकता था, घाटियों व गुफाओं से बहुत सा मलबा बाहर निकाल कर, उन्हें साफ किया, परन्तु फिर भी बहुत सा मलबा अन्दर रह गया था, जो वायु-प्रवाह को अवरुद्ध कर रहा था। वह थकान के मारे चूर हो चुका था। जब उसे और कुछ नहीं सूझा, तब वह अपने मित्र राजाओं के पास सहायता की आशा से पहुंच गया। कई बार, पुरानी शत्रुता या उदासीनता के कारण, दूसरे राजा सहायता करने से मना भी कर देते हैं। इसी तरह, बहुत विरले मामलों में, कई दुष्ट-प्रकृति वाले राजा तो उल्टी सलाह भी दे देते हैं, या उल्टे प्रकार से भी सहायता करते हैं। कई बार तो सहायता के बदले में, दूसरे राजा मुद्रा भी मांग लेते हैं। परन्तु वे राजा परोपकारी-स्वभाव के थे। अतः पुरानी शत्रुता को भुलाकर, उन्होंने प्रभावित राजा की बहुत सहायता की। उन्होंने उस राजा के लिए श्रमदान किया। जब उससे भी बात नहीं बनी, तब वे सभी राजा इकट्ठे होकर, चक्रवर्ती सम्राट के पास पहुंचे। उसने उन्हें बहुत से अस्त्र-शस्त्र उपलब्ध करवाए।

उन अस्त्र-शस्त्रों के प्रयोग से, सारे वायुयान व ड्रोन (drone) आदि शत्रुचालित व स्वचालित प्रकार के सभी चित्र-विचित्र अंतरिक्षगामी वाहन गिरा दिए गए व नष्ट कर दिए गए। फिर वे घाटियाँ व गुफाएँ भयमुक्त हो गई थीं। राजा ने भी कुछ राहत की साँस ली। फिर भी, घाटियों व गुफाओं में जमा पड़ा हुआ मलबा हटाने में, देहदेश के कर्मचारियों को बहुत अधिक समय लगा, क्योंकि वे पहले ही बहुत क्षीण हो चुके थे, ऊपर से अन्दर दम घुटाने वाला वातावरण भी मौजूद था। दूसरा कारण यह था कि वह मलबा घाटियों व गुफाओं में ऊपर, चढ़ाई की ओर ढोना पड़ रहा था, क्योंकि नीचे-नीचे को तो घाटियाँ व गुफाएँ संकरी होती जा रही थीं, जिससे उनका मलबे से पूर्णतः बंद होने का खतरा बना रहता था। वैसे भी यदि सबसे नीचे स्थित जलाशय तक वह मलबा पहुँच जाता, तो देहदेश के लिए वायु का प्रवाह पूर्णतः रुक जाता, जो देहदेश के जीवों व वनस्पतियों के लिए बहुत घातक सिद्ध होता। इस तरह से, बाद के कई दिनों तक भी जनता व उनका राजा, तनाव व बेचैनी के साथ जीवन बिताते रहे। जब घाटियाँ व गुफाएँ पूरी तरह से साफ कर दी गईं, तब स्वच्छ देहदेश के सभी देहपुरुषों को लेखक ने पुनः प्रसन्नता से झूमते हुए देखा।

उस उपरोक्त तालाब के निकट ही, जलविभाग का एक बहुत बड़ा मोटर-पंप लगा होता है, जो बहुत हलचल के साथ बहुत शोर भी करता रहता है। वह पूरा क्षेत्र, एक बहुत बड़े पहाड़ के द्वारा, शेष देहदेश से विभाजित जैसा किया गया प्रतीत होता है। यह उसी तरह होता है, जिस तरह सेना की अत्यधिक क्रियाशील छावनी को आसपास के, अपेक्षाकृत शाँत नागरिक क्षेत्रों से अलग किया हुआ होता है। यह युक्तियुक्त भी है, क्योंकि वह क्षेत्र अत्यधिक क्रियाशील होता है, जिससे देहदेश के शाँतिपूर्ण भागों को उससे परेशानी हो सकती है। वह क्षेत्र वायु के तेज झोंकों से भरा होता है। वह ठंडी, धूल-मिट्टी वाली, तूफान-बवंडर वाली व हवाई हमलावरों से युक्त वायु, कहीं देहदेश के अन्दर न प्रविष्ट हो जाए, इसीलिए वह हिमालय-सदृश पहाड़ वहाँ पर प्राकृतिक रूप से बना होता है। शविद से जब पुरुष को यह ज्ञान हो जाता है कि जो कुछ भी सृष्टि में है, वह सभी कुछ हमारे अपने शरीर में भी है, तो वह संपूर्ण सृष्टि (व्यक्त व अव्यक्त,दोनों) के प्रति अनासक्त हो जाता है।

देहदेश का राजा, देहदेश के सर्वाधिक सुरक्षित स्थान पर बने हुए, एक वातानुकूलित भवन में बैठा होता है। वह कभी भी वहाँ से बाहर नहीं निकलता, क्योंकि वहाँ पर ही उसे सारी सुविधाएँ उपलब्ध होती रहती हैं। उसके भवन में एक अत्याधुनिक दूरदर्शन-यन्त्र लगा होता है, जिससे वह पूरे देहदेश का हालचाल जानता रहता है। देहदेश के परिचालन के लिए विभिन्न आदेशों का,

विशेषतः विदेशव्यवहारसंबंधी आदेशों को वह वहीं से, संचार के आकाशीय कृत्रिम उपग्रहों व दूरसंचार-उपकरणों के माध्यम से, पूरे देश में प्रसारित करवाता रहता है। इसी तरह से, पूरे देश में फैले हुए उसके पत्रकार, सम्पूर्ण देहदेश की जानकारी को अपने विद्युतयंत्रों से इकट्ठा करते रहते हैं, और सम्पूर्णदेश में फैली हुई दूरसंचार (telecommunication) की डोरियों (cables) के माध्यम से व बेतार-उपग्रहों (wireless satellites) के माध्यम से प्रसारित करते रहते हैं; जो राजकक्ष के दूरदर्शन पर, लिखित व श्रुत सूचना के रूप में राजा को उपलब्ध होती रहती हैं। राजा के कुछ गुप्तचर-कैमरामेन (camera-men) देहदेश-सीमा के कुछ विशेष व महत्त्वपूर्ण स्थानों पर भी तैनात रहते हैं, और बाहर के हालचाल के बारे में राजा को सूचित करते रहते हैं। पूरे देहदेश की सीमा स्पर्श-सेंसरों (touch-sensors) से ढकी होती है, ताकि देहदेश की, विविध प्रकार के वातावरणीय विघ्नों से सुरक्षा की जा सके। इसी तरह से, राजा विभिन्न मंत्रालयों व विभागों को अपने कक्ष से ही आदेश देता है। उसके कक्ष में अनेक प्रकार के विद्युतसंवेद-उत्पादकयंत्र (electric signal generator) लगे होते हैं, जिनसे भिन्न-भिन्न प्रकार की विद्युत सूचनाएँ उत्पन्न की जा सकती हैं। प्रत्येक कार्य के लिए एक विशेष प्रकार का सिग्नल (signal) निर्धारित किया गया होता है। विभिन्न कार्यों के अनुसार, राजा अपने आरामदायक पलंग पर लगे बटनों को मात्र छूता भर है, जिससे किसी विशेष कार्य को करने का आदेश विद्युत-सिग्नल के रूप में, स्वर्णिम-तारों (golden wires) के माध्यम से, विभिन्न मंत्रालयों को प्रसारित होता रहता है। उस विद्युतीय आदेश (electronic-order) को मंत्रालयों में लगी डिकोडर (decoder) मशीनों से डिकोड कर लिया जाता है, जिससे वह सन्देश उनके कंप्यूटर (computer) पर, पढ़ी जाने वाली भाषा के रूप में प्रकट हो जाता है, और पढ़ लिया जाता है। एक बार लेखक ने देखा कि बाहरी दृष्यों के चलचित्रों (videos) को दर्ज (record) करने वाले, तद्संबंधित मुख्य दल के देहपुरुष बीमार हो गए थे। इससे वे कोई भी चित्र नहीं खींच पा रहे थे, जिससे राजा अपने देश के बाहर की परिस्थितियों को अपने दूरदर्शन पर नहीं देख पा रहा था। उससे उसके देहदेश का आयात-निर्यात कुप्रभावित हो रहा था। तभी उन चित्रकों की चिकित्सा करवाई गई, परन्तु वे फिर भी ठीक न हो सके। अंततः उनके स्थान पर नए चित्रकों/कैमरामेनों को नियुक्त करना पड़ा। कई बार उनके कैमरों के लेंस (lenses) ख़राब हो जाते हैं, जिन्हें बदलवाना ही पड़ता है। उसके लिए, विदेशों से शीशे मंगवाए जाते हैं। गंगसाजपुर नामक एक मनोरम देहदेश के अन्दर, वाणी दर्ज करने वाले (audio recorder) देहपुरुष बीमार हो गए थे। उससे राजा के दूरदर्शन पर चित्र तो आ रहे थे, परन्तु

उनकी आवाज गायब थी। एक अन्य देहदेश में, दोनों ही प्रकार के देहपुरुष काम छोड़ कर भाग गए थे। उस समय राजा बाहर के हालचाल से, पूरी तरह से अनभिज्ञ हो गया था। उसे केवल सीमा-संवेदकों (border-sensors) द्वारा प्रसारित की गईं, छोटी-मोटी सूचनाएँ ही प्राप्त हो रही थीं। उससे उस देहदेश का वैश्विक-व्यापार सबसे निचले स्तर तक लुढ़क गया था। राजा फिर अपने ही विचारों में खोया रहता था, और अनेक प्रकार की कल्पनाओं व यादों के सहारे जी रहा था। कई देहदेशों के तो दूरदर्शन-यन्त्र ही खराब हो जाते हैं। कई देहदेशों में तो, उनके अस्तित्व में आने से लेकर ही, ऐसे महत्त्वपूर्ण देहपुरुष या यन्त्र या दोनों ही, उपलब्ध ही नहीं होते हैं। ऐसे में उन देहदेशों को, बाहरी व्यापारों के लिए, पूरी तरह से दूसरे देहदेशों के आश्रित रहना पड़ता है।

विदेशों की ओर जाने वाला वायुमार्ग, कई दिनों तक चले खराब मौसम के कारण अवरुद्ध हो गया था। इससे देहपुरुषों को विदेश से लाने व उन्हें विदेश ले जाने वाले यात्री-विमानों का आवागमन अवरुद्ध हो गया था। साथ में, उससे व्यापारिक-वार्ता करने वाले अधिकारीगण भी विदेश नहीं जा पा रहे थे। उससे देहदेश का व्यापार बहुत कुप्रभावित हो गया था। देहदेश की अर्थव्यवस्था भी लड़खड़ा गई थी। वैसे, पड़ौसी देहदेशों में से कुछेक देहदेशों के व्यापारी-देहपुरुष, आपातकालीन मार्गों से, प्रभावित देहदेश के साथ व्यापारिक सम्बन्ध बनाए रखने के लिए, अतः उसे संबल प्रदान करने के लिए, प्रभावित देहदेश से मिलने निरंतर आ रहे थे। कुछ समय के बाद परिस्थितियाँ सुधर गईं, और व्यापार पुनः पूर्ववत चालू हो गया।

एक बार लेखक ने देखा कि किसी कारणवश देहदेश में व्यापारी-देहपुरुषों की कमी पड़ गई थी। बड़े-बड़े जलयान समुद्रतट पर खड़े थे, और उन पर ताले लटके हुए थे। समुद्रतट पर बहुत सारा सामान इकट्ठा हो गया था। सामान को जलयान पर चढ़ाने वाले कर्मचारी व मजदूर आदि लोग, आसपास कहीं पर भी दिखाई नहीं दे रहे थे। क्योंकि दूसरे देशों को माल नहीं भेजा जा रहा था, इसलिए वे भी उस समस्याग्रस्त देश को अपना माल नहीं भेज रहे थे। इससे उस देहदेश की हालत दिनोंदिन बिगड़ती गई। तभी वह बात राजा के नोटिस (notice) में लाई गई। राजा ने विदेश-व्यापार से सम्बंधित मंत्रियों व उच्चाधिकारियों को, उस कुव्यवस्था को दुरस्त करने के लिए सख्त आदेश जारी कर दिए। उन्होंने थोड़ा-बहुत विरोध किया, परन्तु फिर मान गए। फिर मंत्रियों व अधिकारियों ने बंदरगाहों के स्थानीय अधिकारियों को सख्त आदेश जारी कर दिए। कई दिनों तक नाकाम बने रहने से, उनकी आदत बिगड़ गई थी, इसलिए उन्होंने आदेशों को अनसुना कर दिया। फिर जवाबी कार्यवाही करते हुए, उच्चाधिकारियों ने चेतावनी से भरे हुए लिखित आदेश

जारी कर दिए। उससे उन व्यापारीगणों की आँखें खुलीं, और वे धीरे-धीरे करके अपने काम पर लौट गए। शुरु-शुरु में काम को धीरे-धीरे करते हुए, कुछ अभ्यस्तता प्राप्त हो जाने पर, उन्होंने काम करने की गति बढ़ा दी। इससे धीरे-धीरे देहदेश की व्यवस्था सुधरती गई, और कुछ समय बाद वह अपनी पूर्वावस्था की तरह हो गई।

लेखक ने देहदेश में नित नई समस्याएँ आते-जाते देखीं। वास्तव में देहदेश बहुत अधिक जटिल होता है, अतः वहाँ पर समस्याओं का होना, कोई नई बात नहीं होती। कभी वहाँ पर, वातानुकूलित कक्षों में बैठे हुए, विदेशव्यापार-विभाग के मंत्री व उच्चाधिकारी, काम के बोझ से परेशान होकर, जोर-जोर से चिल्लाने लगते हैं। विदेशव्यापार से जुड़े मुद्दों में बहुत सिर खपाना पड़ता है। उसमें घाटा होने का डर भी उन्हें हमेशा ही सताता रहता है। उनका अपना देहदेश कहीं दूसरे देहदेशों से पीछे न रह जाए, इसके लिए वे कई बार अपनी क्षमता से कहीं अधिक कार्य करने लग जाते हैं, और शीघ्र ही थक जाते हैं। जब राजा को उनकी चीख-पुकार सुनाई देती है, तब वह उन्हें आराम करने की सलाह देता है। आराम करके वे शाँत हो जाते हैं, और पुनः अपना कार्य उत्तम रीति से करने लग जाते हैं।

देहदेश की मिट्टी भिन्न-भिन्न स्थानों पर भिन्न-भिन्न गुण लिए हुए होती है। कहीं पर वह अम्लीय होती है, तो कहीं पर क्षारीय। अम्लीय भूमि में वे फसलें उगाई जाती हैं, जो अम्लता को पसंद करती हैं। क्षारीय भूमि में वे फसलें उगाई जाती हैं, जो क्षारता को पसंद करती हैं, और उसमें अच्छी पैदावार देती हैं। कई बार अम्लीय भूमि की अम्लता, आवश्यकता से अधिक बढ़ जाती है, जिससे फसलों की पैदावार, विशेषतः क्षारताप्रेमी फसलों की पैदावार काफी घट जाती है, और खाद्यान्न में अम्लता भी उत्पन्न हो जाती है। उस अम्लतायुक्त खाद्यान्न से कई बार, कुछ देहपुरुष जलन व बेचैनी महसूस करने लग जाते हैं। इसी तरह से, कई बार क्षारीयभूमि की क्षारता आवश्यकता से अधिक हो जाती है। उससे भी विभिन्न फसलों की, विशेषतः अम्लताप्रेमी फसलों की पैदावार काफी घट जाती है, और वह क्षारता, खाद्यान्न के द्वारा देहपुरुषों के शरीर में भी पहुँच जाती है, जिससे वे कुछ सुस्त जैसे हो जाते हैं।

एक बार लेखक ने देखा कि एक देहदेश में कोई संक्रामक रोग फैला हुआ था। उस संक्रमण को कीटाणु उत्पन्न कर रहे थे, और एक देहपुरुष से दूसरे देहपुरुषों के बीच में संचारित भी कर रहे थे। वे कीटाणु विशेष आकार, प्रकार, आयु, जाति व व्यवसाय आदि के देहपुरुषों को ही अपना निशाना बना रहे थे। संभवतः वे प्रभावित देहपुरुष, कृषिविभाग व विदेशव्यापारविभाग से

सम्बंधित थे। उस संक्रमण से इन दोनों विभागों के देहपुरुष बीमार होकर लाचार हो गए थे, और बिस्तर पर पड़ गए थे। चिकित्सक उनका इलाज भी कर रहे थे, परन्तु फिर भी बहुत से देहपुरुष ठीक नहीं हो पा रहे थे। किसानों की कमी से खाद्यान्न का उत्पादन काफी घट गया था। उस आपातकालीन स्थिति में, भण्डारघरों से खाद्यान्न निकाले जा रहे थे, और पूरे देश में वितरित किए जा रहे थे। अन्नभंडारों में बहुत कम अन्न शेष रह गया था। राजा से यह स्थिति देखी नहीं गई। उसने प्रभावित किसानों को बचाने के लिए, बाहर से दवाइयों का आयात करवाने का निश्चय किया। परन्तु विदेशवाणिज्यविभाग के कर्मचारियों के भी बीमार होने से, वह ऐसा न कर सका। अतः पड़ौसी राजाओं ने उसके लिए दवाओं का आयात करवाया। देश की हालत कुछ ठीक होने के बाद, विदेशवाणिज्यविभाग के देहपुरुषों ने भी देहदेश की दुर्दशा को देख कर, पहले से भी अधिक जोर-शोर से काम करना शुरु कर दिया। उससे फसलों के लिए आवश्यक बीज, खाद, कीटनाशक, यन्त्र आदि साजो-सामान; पहले से भी कहीं अधिक मात्रा में आयात किए जाने लगे। उससे, पहले से भी अधिक अन्न का उत्पादन हुआ, जिससे सारे देशवासी पूर्ववत तृप्त हो गए, और अन्नभण्डार भी पुनः भर गए।

कुछ बड़े देहदेश, छोटे व गरीब देहदेशों का विभाजन जानबूझ कर, अपनी मनमर्जी के मुताबिक़ भी करवाते रहते हैं। वे अपने विज्ञान व अपनी असीमित शक्ति का प्रयोग करके, गरीब देशों को बहका कर, उन्हें विभाजन के लिए राजी कर देते हैं। कई बार वे उन्हें ललचाने के लिए बहुत सारा धन व बहुत सारी अन्य बहुत सारी सुविधाएँ भी उपलब्ध करवाते हैं। यदि ऐसे भी बात न बने, तो वे उन्हें डराते-धमकाते भी हैं। कई बार तो वे उनके ऊपर बल का प्रयोग भी कर देते हैं। ऐसे में अधिकाँश गरीबदेश, बड़े देश के सामने घुटने टेक देते हैं। विभाजन के बाद, बड़ा देश नए देश को अपनी अँगुलियों पर नचाता है, और उससे अपने लिए बहुत सी सुविधाएँ उपलब्ध करवाता है। विभाजन से बने नए देश के प्रति मोह-ममता से बंधा हुआ उसका मातृदेश भी उसकी प्रत्येक बात मानने को विवश हो जाता है, जिससे वह भी परोक्षरूप से बड़े देश की सहायता ही कर रहा होता है। एकबार लेखक ने देखा कि प्रजनपुर नामक एक छोटा परन्तु कुछ संपन्न देहदेश, बहुत सारे गरीबदेशों का नेता बना हुआ था। वह अपने लाभ के लिए, उनका जरूरत से ज्यादा विभाजन करवा कर, अपना उल्लू सीधा कर रहा था। परन्तु उससे छोटे-छोटे देशों की भरमार हो गई थी। उससे, उनके बीच में लड़ाई-झगड़े भी बढ़ गए थे। वे गरीबी से ऊपर भी नहीं उठ पा रहे थे। भोजन-पानी की समस्या भी उत्पन्न होने लग गई थी। उन छोटे-छोटे व गरीब देशों में उग्रवादी

भी पलने-बढ़ने लग गए थे, जो अन्य देशों को अपना निशाना बना रहे थे। विकसित देशों से वह सब देखा नहीं गया। उन्होंने उस नेता-देश पर कार्यवाही करने का विचार किया। पहले तो उन्होंने उसको बहुत समझाया। परन्तु वह मान ही नहीं रहा था। फिर उसे डराया गया, धमकाया गया। उसके चाल-चलन पर निगरानी रखते हुए, उसे बंधक की तरह भी बना कर रखा। वह फिर भी नहीं माना। अंततः विकसित देशों को इकट्ठे होकर, उसके ऊपर हमला करना पड़ा। उन्होंने उसकी शक्ति को इतना क्षीण कर दिया था कि वह पड़ौसी देशों के अन्दर फूट डालने की हिम्मत फिर कभी भी नहीं जुटा सका। विकसित देहदेशों ने अपनी दया दिखाते हुए, कुछ दुष्प्रभावित व गरीब देहदेशों को इतना अधिक सशक्त कर दिया था कि फिर कोई भी धूर्त देहदेश उनको विभाजित करने का प्रयास नहीं कर सका। कई देहदेश तो स्वयं ही इतने अधिक सुस्त व निष्क्रिय जैसे होते हैं कि वे नए देशों का निर्माण न तो स्वयं कर पाते हैं, और न ही कोई उनसे बलपूर्वक ही निर्माण करवा पाता है।

अब नेतादेश के ऊपर किए गए उपरोक्त हमले के बारे में विस्तार से कहते हैं। कई विकसित देहदेशों के राजाओं ने आपस में मिलकर, मित्रराष्ट्रों का एक समूह बनाया होता है। वे सभी इकट्ठे होकर, एक षड्यंत्रकारी योजना बनाते हैं। वे उस नेतादेश को बहला-फुसला कर, उसे अपने वश में कर लेते हैं। उसे वे बहुत सारा लालच देते हैं, तथा उसके लिए बहुत सी अंतर्राष्ट्रीय कल्याणकारी योजनाओं की घोषणा भी करवाते हैं। इससे वह सहर्ष उनके झांसे में आ जाता है। अन्यथा, वे उस देश के राजा की किंचित सहमति से, उसको शराब पीने की गहरी आदत डलवा देते हैं। इससे वह राजा बेसुध सा रहने लगता है। अवसर का लाभ उठाते हुए, उन मित्र-राजाओं के पाले हुए गुंडे, उस नेता देश के अन्दर घुसकर, उसकी विघटनकारी शक्तियों व उसके अलगाववादी उग्रवादियों को कुचल देते हैं। वहां के जो लोग दूसरे देशों में अनधिकृत रूप से हस्तक्षेप करते हैं, उन्हें वे चुन-चुन कर अपनी गाड़ियों में भर देते हैं, और उस देश के बाहर स्थित बीहड़ों में फ़ेंक देते हैं, जहाँ वे जंगली जानवरों व लुटेरों के द्वारा शीघ्र ही मार दिए जाते हैं। एक बार लेखक ने देखा कि उन उग्रवादियों को नियंत्रित करके व कुछेक उग्रवादियों को मारकर, मित्र-राजाओं द्वारा प्रेषित बाहुबली, वापिस अपने देशों को लौट आए थे। परन्तु धीरे-धीरे, उस नेतादेश के अन्दर बचे हुए उग्रवादी पुनः क्रियाशील हो गए, तथा जो मारे गए थे, उनकी कब्रगाहों के आस-पास बहुत से उग्रवादी इकट्ठे होकर, वहाँ से देशद्रोह फैलाने की प्रेरणा ले रहे थे। साथ ही अच्छा मौक़ा जानकर, वहां पर छिटपुट मात्रा में उपस्थित बाहरी शत्रु भी प्रबल हो गए थे। उन सबने मिलकर, देहदेश के

विरुद्ध एक व्यापक युद्ध छेड़ दिया था। नेतादेश के राजा ने फिर से उन मित्रदेशों का सहयोग माँगा, जिनकी लापरवाही से वह विद्रोह पनपा था। मित्रदेशों ने अपने उन्नत हथियार व अन्य संसाधन भेजकर, बड़ी मुश्किल से उस देश को उन शत्रुओं से बचाया था। फिर मित्रदेश अपने-अपने कार्यों में व्यस्त हो जाते हैं। नेता देश की शराब पीने की लत भी धीरे-धीरे छूट जाती है। जिसने अपनी सहमति से अपने अलगाववादी उग्रपंथियों को नियंत्रित करवाया हो, वह नेतादेश प्रसन्न हो जाता है। परन्तु जिस नेतादेश को बलपूर्वक नियंत्रित किया जाता है, वह अपने को लुटा हुआ व ठगा हुआ सा महसूस करता है। फिर वह नेतादेश कभी भी दूसरे गरीब देशों के ऊपर अपनी बुरी दृष्टि नहीं डालता।

एक बार लेखक ने देखा कि देहदेश में बाढ़ आ गई थी। खेतों में खड़ी सारी फसलें बह कर नष्ट हो गई थीं। पूरे देहदेश में भोजन की कमी पड़ गई थी। खाद्यान्नभंडारों के द्वार पूरी तरह से खोल दिए गए थे, ताकि भूखे देहपुरुषों के लिए अन्न वितरित किया जा सकता। अन्य वस्तुओं के भण्डारघर भी खोल दिए गए थे, ताकि जरूरत के अन्य साजो-सामान भी उपलब्ध करवाए जा सकते। खनिजों की खदानों में भी पानी भर गया था, जिससे धातुओं का व नमक का उत्पादन भी बहुत कम हो गया था। बड़े-बड़े जंगल पानी में डूब गए थे, जिससे इमारती व अन्य प्रकार की लकड़ियों के दामों में भी भारी उछाल दर्ज किया जा रहा था। कपास के खेत भी पानी में डूब गए थे, व रुई को परिवर्धित करके, वस्त्र तैयार करने वाले विभिन्न प्रकार के उद्योग भी पानी में समा गए थे। देहपुरुष ऊंचे-ऊंचे पर्वत-शिखरों पर चढ़ कर, वहाँ पर अपने आप को सुरक्षित कर पा रहे थे। वहाँ से वर्षा का पानी नीचे की ओर बहता व रिसता हुआ, बाढ़ के गंदे पानी के साथ मिश्रित हो रहा था, जिससे वह पानी पीने के लायक नहीं रह गया था। प्राकृतिक जलस्रोत काफी नीचे रह गए थे, जिनको बाढ़ के पानी ने गन्दा कर दिया था। इस कारण से, बहुत से देहपुरुष प्यास के मारे भी मर रहे थे। तभी लेखक ने देखा कि अज्ञात कारणों से वह अतिवृष्टि रुक गई थी, जिससे बाढ़ का पानी नीचे उतर रहा था। फिर बाढ़ का पानी प्राकृतिक जलस्रोतों से भी नीचे उतर गया, जिससे उनमें शुद्ध व साफ-सुथरा जल पुनः पूर्ववत प्रकट होने लगा। प्यासे देहपुरुष भी पानी को देखकर नीचे उतर आए, और वे निर्मल जल पीकर अत्यंत प्रसन्न व तृप्त हो गए। नई बोई गई फसलें खेतों में लहलहाने लग गई थीं। फिर बहुतायत में अन्न उपलब्ध होने से, देहपुरुषों ने जी भर कर भाँति-भाँति के व्यंजनों का भरपूर आनंद उठाया। खाद्यान्न-भण्डार भी पुनः भर दिए गए। भूमिगत खदानों का जल भी जमीन के अन्दर रिसने से व धुप आदि की गर्मी से सूख चुका था, जिससे उनसे

पुनः धातु की आपूर्ति होने लगी। धातुओं की तरह ही, अन्य सभी वस्तुओं के भण्डार भी भरने लगे। इस तरह से, देहदेश की मशीनरी फिर से चालू हो गई थी। कई बार क्या होता है कि अतिवृष्टि बहुत अधिक समय तक रुकती ही नहीं, जिससे उत्पन्न प्रचंड बाढ़ में देहदेश के सारे संसाधन बह जाते हैं। परिणामस्वरूप भूख और प्यास के कारण बहुत अधिक संख्या में देहपुरुष मारे जाते हैं। इससे वह देहदेश बहुत क्षीण हो जाता है। इससे वह या तो सदैव के लिए दूसरे देशों के आश्रित हो जाता है, या फिर नष्ट हो जाता है। कई बार तो बाढ़ के पानी को रोक दिया जाता है, व उसे मशीनों के द्वारा पीने योग्य बनाया जाकर, देहपुरुषों तक, ऊपर की ओर चढ़ाया जाता रहता है। परन्तु ऐसा भी कुछ समय के लिए ही किया जा सकता है, और इसके अलग से, अपने दुष्प्रभाव भी हैं। कई बार बाढ़ के पानी को स्वच्छ व पीने योग्य बनाए रखने के लिए, उसमें कीटाणुनाशक दवाइयां भी डाली जाती रहती हैं।

एक बार लेखक ने देखा कि देहदेश का मुख्य परिष्करण उद्योग क्षतिग्रस्त हो गया था। संभवतः कोई घातक पदार्थ (पत्थर, कंकड़, धातु आदि) कच्चे माल के साथ मशीनों के अन्दर प्रविष्ट हो गया था, जिसने मशीनों के नाजुक पुर्जों को क्षत-विक्षत कर दिया था। उस उद्योग की काम करने की गति बहुत धीमी हो गई थी। उससे देहपुरुषों को उच्च कोटि के खाद्यान्न, वस्त्र, जूते, औजार, विविध उपकरण व अन्य साजो-सामान पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं हो पा रहे थे। देश की अर्थव्यवस्था डूब रही थी। मुद्रा का बहुत अधिक अवमूल्यन हो गया था। देहपुरुष क्षीण व बीमार जैसे प्रतीत हो रहे थे। कर्मचारियों की लम्बी-चौड़ी फौज को साथ लेकर, बहुत से इंजीनियर भी वहाँ पहुँच गए थे। वे उद्योग के प्रत्येक हिस्से की बारीकी से जांच-पड़ताल कर रहे थे। कहीं पर भी कोई खराबी पाए जाने पर, प्रभावित कलपुर्जों की मुरम्मत करके, उन्हें चालू कर रहे थे। उस तरह से, कई दिनों के अनवरत प्रयास के बाद, वह उद्योग कामचलाऊ रूप से चलने लगा, जिससे देहदेश की हालत धीरे-धीरे सुधरने लगी। यद्यपि देहदेश को पूर्ववत सामान्य अवस्था में लौटने के लिए बहुत अधिक समय लग गया। कई बार वह उद्योग इतना अधिक क्षतिग्रस्त हो जाता है कि उसकी मुरम्मत ही नहीं की जा सकती। वैसी हालत में, पूरे उद्योग को ही बदलना पड़ता है। पुरानी मशीनों को हटा कर, उनके स्थान पर नई मशीनें फिट (fit) कर दी जाती हैं। उसमें बहुत अधिक खर्चा आ जाता है, जिसे कई बार गरीब देश वहन नहीं कर पाते। कई बार पड़ौसी देश मिलकर गरीबदेश की मदद के लिए आगे आ जाते हैं। उद्योग के अधिकाँश हिस्से देहदेश में ही बन कर तैयार हो जाते हैं। परन्तु यदि पूरा उद्योग ही बदलना पड़ जाए, तब तो उसे विदेशों से ही मंगवाना पड़ता है। ऐसे में,

नैष्ठिक देशभक्त बहुत बवाल मचाते हैं। उन्हें समझाना बहुत मुश्किल हो जाता है। अतः विशेषज्ञ संधिकर्ताओं को भी विदेशों से बुलवा कर, हमेशा के लिए उन्हें प्रभावित देहदेश में बसा कर रखना पड़ता है, ताकि वे देहपुरुषों को निरंतर रूप से समझाते-बुझाते रहें, जिससे देहदेश के विरुद्ध किसी भी प्रचंड विद्रोह की स्थिति न उत्पन्न हो पाए।

देहदेश का सबसे बड़ा जलशोधक-यंत्र, इसकी समुद्री सीमा के निकट बना होता है। उसमें अनगिनत प्रकार के विद्युतीय संवेदक (electronic sensors) भी लगे होते हैं, जो देहदेश से आए हुए प्रदूषित जल को भांप कर, देहदेश के हालचाल की जानकारी देते रहते हैं। इनसे सूचनाएँ इकट्ठी की जाती रहती हैं, और उन विशेष अधिकारियों को दी जाती रहती हैं, जिनके कार्यालय निकट में ही बने होते हैं। वे अधिकारीगण उन सूचनाओं के आधार पर, देहदेश की व्यवस्था को बदलने के लिए, विभिन्न प्रकार के आदेश प्रसारित करते रहते हैं। लेखक ने देखा कि एक बार प्राणवायु-संवेदकों (oxygen sensors) ने प्राणवायु की अपर्याप्त मात्रा को अनुभव (notice) किया। प्राणवायु-संवेदकों से वह सूचना सम्बंधित अधिकारियों को प्रेषित की गई। उन्होंने फिर जलविभाग के प्राणवायु-प्रेषकों (oxygen transporters) की संख्या को बढ़वाने के व वर्तमान प्रेषकों की कार्यक्षमता को बढ़वाने के आदेश जारी कर दिए। लेखक ने देखा कि फिर जोर-शोर से नई नियुक्तियों के लिए आवेदन प्रपत्र छपवाए गए। अनेक देहपुरुषों ने आवेदन-प्रपत्र भर कर, नौकरी के लिए आवेदन (apply) कर दिया। बहुत से देहपुरुष नए थे, व उनकी वह पहली नौकरी थी। बहुत से देहपुरुष पुराने समय के व्यवसायी थे, अतः अनुभवी थे, यद्यपि वे कुछ समय से आराम फरमा रहे थे। यह स्वाभाविक था कि पुराने कामगारों की दैनिक-आवश्यकताएँ अधिक थीं, अतः उनका वेतन भी अधिक था। वर्तमान देहपुरुषों को भी नए, पक्के, बड़े, आरामदायक व पीठ में बांधने के लिए अधिक लड़ियों वाले थैले उपलब्ध करवाए गए; जिनमें पहले वाले थैलों से अधिक प्राणवायु भरी जा कर, आराम से ढोई जा सकती। लेखक के देखते ही देखते, प्राणवायु का स्तर सामान्य हो गया और नई नियुक्तियां बंद करवा दी गईं। उस यन्त्र को स्वयं भी बहुत अधिक ऊर्जास्रोत व उसको जलाने के लिए, अत्यधिक मात्रा में प्राणवायु की आवश्यकता पड़ी रहती है। पूरे देहदेश से आए हुए मोटे-मोटे अपशिष्ट पदार्थों को, पहले बड़ी-बड़ी यांत्रिक चक्कियों (machine-grinders) में पीस कर, बहुत छोटा करना पड़ता है, ताकि वे उसके लघु उपयंत्रों के छनन भाग में फँस कर, उन्हें कोई हानि न पहुंचा पाए। बहुत सी आवश्यक चीजें, जल के साथ बहुत जोर से चिपकी होती हैं, जिन्हें वापिस खींचने के लिए भी बहुत अधिक शक्ति लगानी पड़ती

है, ताकि वे बर्बाद होकर समुद्र में न चली जाएं। यन्त्र की दीवारें लगातार घिसती-पिटती रहती हैं, जिनकी मुरम्मत करने के लिए नए माल की आवश्यकता पड़ती रहती है। उस नए माल को तैयार करने के लिए भी देश को बहुत अधिक ऊर्जा व्यय करनी पड़ती है।

इसी तरह से, कई बार देहदेश के नैष्ठिक व देशभक्त सैनिक विजातीय पदार्थों का पीछा करते हुए, परिशोधक-यंत्र के अन्दर घुस जाते हैं, जिससे उसमें काम करने वाले कर्मचारियों को खासी परेशानी हो जाती है। इससे उनके स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव पड़ने का भय भी बना रहता है। ऐसे में, यंत्र के अधिकारियों के लिए, इससे सम्बंधित सूचना को, निकटस्थ व सम्बंधित उच्चाधिकारियों के प्रति प्रेषित करना अनिवार्य हो जाता है। वे उच्चाधिकारी फिर उन नैष्ठिक सैनिकों की क्रियाशीलता को घटवाने के लिए मुख्यालय में गुहार लगाते हैं। प्रार्थना के स्वीकृत हो जाने पर, उच्चस्थ पदाधिकारियों के द्वारा उससे सम्बंधित वह आदेश प्रसारित कर दिया जाता है। इससे वे सैनिक कुछ शाँत होकर, वहाँ से वापिस चले जाते हैं। यद्यपि इससे शत्रुओं के अत्युत्साहित होने का खतरा भी बराबर बना रहता है। परिष्करण-यन्त्र में जल का दबाव भी आवश्यकता के अनुसार, घटाना या बढ़ाना पड़ता रहता है। इससे सम्बंधित सूचना भी इसके सूचक-कर्मचारी उन निकटस्थ अधिकारियों को भेजते रहते हैं, जो इससे सम्बंधित आदेश को प्रसारित करते रहते हैं। एक बार लेखक ने देखा कि जलशोधक-यंत्र में कुछ खराबी आ गई थी। संभवतः यन्त्र में कुछ तेज रसायन घुस गए थे, जो यन्त्र के अंदरूनी, धातु से निर्मित भागों को क्षति पहुंचा रहे थे। या कुछ बड़े-बड़े, सख्त व तीखे टुकड़े जल में बहते हुए आ गए थे, जो यांत्रिक चक्कियों के द्वारा पिसे नहीं जा पा रहे थे। वे घातक पदार्थ फिर छनन-भाग की जालियों में फँस गए थे। उससे वहाँ पर जल-भराव हो गया था। वह हानिकारक जल, आसपास के क्षेत्रों को हानि पहुंचा रहा था। पूरे देहदेश में बाढ़ के जैसी स्थिति बनती जा रही थी। जो थोड़े-बहुत टुकड़े उससे छन कर, यन्त्र के अन्दर घुस गए थे, वे अपने तीखेपन से, नालियों की धातु को कुरेद रहे थे। इससे, दूषितजल वहाँ से रिसकर, यन्त्र के नाजुक भागों में पहुंचकर, उन्हें हानि पहुंचा रहा था। फिर सूचना पा कर, कर्मचारियों के साथ अभियंता (engineers) लोग भी वहाँ पहुँच गए थे। यन्त्र की मुरम्मत बड़े जोर-शोर के साथ चली हुई थी। वे उसे ठीक करते जा रहे थे, परन्तु नए पहुंचे हुए तीखे टुकड़े फिर से उसे हानि पहुंचाते जा रहे थे। जब मुरम्मतकर्ता-कर्मचारी भी थक-हार कर हताश होने लग गए, तो यन्त्र में काम करने वाले स्थानीय कर्मचारियों के दिल ही टूट गए, और उनमें से कमजोर दिल वाले कुछेक देहपुरुष जोर-जोर से चीख-पुकार करने लगे। उसकी सूचना राजा को मिल गई, जिससे वह भी

परेशान हो उठा। उसने अपने गुप्तचरविभाग को उस समस्या के बारे में खोजबीन करने के आदेश दिए। उन्हें पता चला कि वह समस्या देहदेश के अन्दर से नहीं, अपितु बाहर से उत्पन्न हो रही थी। जिस बीहड़ क्षेत्र से देहदेश के लिए जल की आपूर्ति की जा रही थी, वहाँ का जल प्रदूषित था। पड़ौसी देहदेश उस क्षेत्र में खतरनाक वस्तुओं को फ़ेंक रहे थे। राजा ने पड़ौसी देशों को मनाने की बहुत कोशिश की, पर वे नहीं माने। तब राजा ने उस क्षेत्र से जल की आपूर्ति बंद करवा कर, एक नए व साफ-सुथरे क्षेत्र से आपूर्ति शुरु करवा दी। धीरे-धीरे करके वह यंत्र ठीक हो गया। यदि कुछ अधिक देर की गई होती, तो यन्त्र की उतनी अधिक हानि हो गई होती कि वह कभी भी ठीक न हो पाता, और धीरे-धीरे करके, काम के बोझ से, पूर्णरूप से ख़राब हो जाता। उस हालत में, आपातकाल के लिए रखे गए, एक अन्य यन्त्र से काम चलाना पड़ता। यदि अशुद्ध जल को ही प्रयुक्त किया जाता रहता, तो वह दूसरा यंत्र भी धीरे-धीरे खराब हो जाता। फिर विदेश से नया यंत्र मंगवाने के सिवाय कोई चारा न बचता। फिर देशभक्त देहपुरुषों के आन्दोलन को शाँत रखने के लिए, सदा के लिए विदेशों के सहारे रहना पड़ता। उससे देहदेश की कार्यक्षमता में कुछ न कुछ क्षीणता तो अवश्य ही बनी रहती।

एक बार लेखक ने देखा कि कुफलदेव नाम के एक देश का जलशोधन यंत्र खराब हो गया था। उस समय उस देश की आर्थिक दशा अच्छी नहीं चल रही थी, अतः वह विदेशों से नए व बेशकीमती संयंत्र को खरीदने की सामर्थ्य भी नहीं रखता था। यद्यपि उस समय कुछ देशों ने मिलकर, बीहड़ों में भी एक जलशोधन संयंत्र लगा रखा था। वह संयंत्र गरीब देशों को सीमित शुल्क में जलशोधन की सुविधा प्रदान करता था। फिर कुफलदेव ने उस संयंत्र की सेवा लेने का मन बनाया। उसने अपने वहाँ से उस संयंत्र तक बहुत बड़े आकार व छिद्र (bore) की एक नालीरेखा (pipeline) बिछवा दी। जब उसके देश में बहुत सा विषाक्त जल इकट्ठा हो जाता था, तब वह उस जल को संयंत्र की ओर धक्का (pump) करवा देता था। वहाँ वह जल शुद्ध होकर, वहां से पुनः कुफलदेव-देश के अन्दर लौट जाता था। उस जल के अन्दर बहुत से पौष्टिक तत्त्व व खनिज होते थे। उस तरह से, उस देश ने बहुत सा समय सुखपूर्वक बिता लिया। परन्तु अपनी चीज तो अपनी ही होती है न। एक बार वह संयंत्र भी ख़राब हो गया, जिससे कुफलदेव बहुत बड़ी मुसीबत में पड़ गया। उसके लोग विषाक्त जल के प्रभाव से बीमार हो रहे थे। थक-हार कर उसे किसी दूसरे महाद्वीप में बसे एक अमीर देश तक पाईपलाईन बिछानी पड़ी। यद्यपि उसमें उसका बहुत सा खर्चा आ गया, फिर भी वह, नया संयंत्र लगाने से तो कम ही था।

कई शत्रु बड़े चालाक व कपटी होते हैं। उन्हें पता होता है कि देहदेश की राजधानी को अधिगृहीत करके, वे सर्वाधिक शीघ्रता से देहदेश को अपना गुलाम बना सकते हैं। इसलिए वे छल-कपट से, सीधे ही राजधानी में प्रविष्ट होना चाहते हैं। एक बार लेखक ने देखा कि कुछ शत्रु, उनकी अपनी बिरादरी के द्वारा गुलाम बनाए गए देहदेश के व्यापारियों के बीच में घुस कर, उनके कारवाँ के साथ ही, एक नए देहदेश के अन्दर प्रविष्ट हो गए थे। व्यापारी तो अपना माल बेच कर, अपने देश को वापिस लौट गए थे, परन्तु वे शत्रु, आक्रमण की योजना बनाते हुए, वहीँ रुक गए। फिर एक गूढ़ योजना के तहत, वे शत्रु, डाक-विभाग के कर्मचारियों के बीच में अपनी पहचान छिपा कर प्रविष्ट हो गए। डाक-विभाग में सुरक्षा-व्यवस्था का ज्यादा इंतजाम नहीं होता, क्योंकि उग्रपंथियों को उसमें कोई विशेष दिलचस्पी नहीं होती। उसके पास न तो मुद्रा होती है, न उन्नत प्रकार के साधन और न ही हड़पे जाने योग्य महंगे साजो-सामान। उस विभाग के लोग तो साधारण प्रकार के होते हैं, जो साधारण जीवन जीने के आदी होते हैं। वे किसी की भी रोक-टोक के बिना, चिट्ठी-पत्रियों को यहाँ से वहाँ पहुंचाते रहते हैं। सुरक्षा एजेंसियां भी उनसे ज्यादा पूछताछ नहीं करती हैं, ताकि वे तनावरहित व सम्मानपूर्वक ढंग से जी पाएं। वास्तव में, अपने-अपने संदेशों के साथ सभी लोगों की भावनाएं जुड़ी हुई होती हैं, और उन भावनाओं के साथ डाक-विभाग के कर्मचारी जुड़े होते हैं। इसलिए समस्त देशवासी चाहते हैं कि वे कर्मचारी प्रसन्न व बेखौफ होकर घूमते रहें, और लोगों के संदेशों को प्रसन्नता का तड़का लगाते हुए, फिर उन्हें लोगों के समक्ष प्रस्तुत करते हुए, लोगों को भी प्रसन्न करते रहें। फिर वे शत्रु, डाक-विभाग के कर्मचारी बन कर, हाथ में चिट्ठियों के थैले पकड़ कर, राजधानी की ओर बढ़ने लगे। कुछ शंकालु व सतर्क सुरक्षाकर्मी जब उनको बंदी बना कर, उनसे पूछताछ करने लगे, तब उन शत्रुओं ने आसपास में स्थित लोगों का भावनात्मक शोषण (emotional blackmail) करके, उनकी सहानुभूतियाँ बटोर लीं। उस भावना से प्रेरित होकर, लोगों ने देशभक्त सुरक्षाकर्मियों को ही पीट-पीट कर मार डाला। अपने बचाव के लिए क्रोध में आकर, सुरक्षाकर्मियों ने भी बहुत से लोगों पर गोलियां चला दीं। कई मानवाधिकार-एजेंसियों ने उन देशभक्त सैनिकों के ऊपर हिंसा व देशद्रोह का झूठा मुकद्दमा चलवाकर, उन्हें राजदंड दिलवा दिया। वे मूर्ख देशवासी आपस में लड़ते रहे, और उधर शत्रु, मौके का फायदा उठाते हुए, राजधानी में पहुँच गए। वहाँ पर पहुँच कर उन्होंने अपना असली रूप दिखाना शुरु कर दिया, और जमकर तबाही मचाई। उन्हें पता था कि देहदेश के नष्ट होने के साथ ही, वे भी मारे जाएंगे। अतः देश के नाश से बहुत पहले ही, उन्होंने अपने सभी शत्रु-साथियों को,

दूसरे देशों पर आक्रमण करने के लिए भेजना शुरु कर दिया। वे दुष्ट शत्रु भी उसी डाक-विभाग वाले मार्ग से होते हुए, डाक-विभाग के कर्मचारियों की सी वेशभूषा बना कर, उनके साथ ही राजधानी से वापिस लौट आए। जब नैष्ठिक कर्मचारी उनके ऊपर संदेह प्रकट करने लगते थे, तब वे दुष्ट, उन भोले-भाले कर्मचारियों को बहला-फुसला कर भ्रमित कर देते थे, जिससे वे उनकी सूचना पुलिस-विभाग को नहीं दे पाते थे। वे उन कर्मचारियों को मृत्यु का भय दिखा कर, उन्हें खूब खिला-पिला कर व उनको खूब सारी रिश्वत देकर, उन्हें अपने वश में कर लेते थे। फिर वे शत्रु, बंदरगाह के निकट स्थित, व्यापारियों की टोलियों के बीच में घुस कर, उनके साथ घुल-मिल गए। जब वे व्यापारी व्यापार के सिलसिले में, अपने समुद्री जहाज में बैठ कर, विदेश की ओर रवाना हुए, तब वे शत्रु भी उनके साथ विदेश पहुँच गए। व्यापारी लोग तो अपना काम निपटा कर, अपने माल के साथ, अपने मूल निवासदेश को वापिस लौट आए, परन्तु वे शत्रु वहीँ ठहरे रहे, और उस नए देश पर हमले की योजना बनाने लगे। वे भी अपने पूर्वजों की तरह ही, डाक-विभाग के बीच में घुल-मिल गए, और उन्हीं की तरह, आगे की कार्यवाही करते गए। इस तरह से, वह सिलसिला समान रूप से चलता रहा, और शत्रुओं ने बहुत से देशों को नष्ट कर दिया। डर के मारे, बहुत से राजाओं ने, अंतर्राष्ट्रीय सम्मलेन में यह मुद्दा प्रमुखता से उठाया। कुछ राजाओं को चुन कर, एक कमेटी (committee) बनवाई गई, जिसको उस समस्या का हल ढूँढने की जिम्मेदारी दी गई। कमेटी ने बुद्धिजीवियों की बहुत सी बैठकें (meetings) बुलवाईं। अंतिम निष्कर्ष के अनुसार, देहदेश के द्वारा, उन खुंखार शत्रुओं से आक्रमित होने से पहले ही, उन शत्रुओं की उस बिरादरी के कुछेक शत्रुओं को, जो अपने राक्षसराज की पक्षपातपूर्ण नीतियों से संतुष्ट नहीं थी, बहलाना-फुसलाना शुरु कर दिया गया। उनका खूब सेवा-सत्कार किया गया। उससे वे शाँत हो गए, व देहदेशों के मित्र बन गए। फिर उन्हें भिन्न-भिन्न राजाओं के द्वारा अपने-अपने देशों के अन्दर रहने के लिए आमंत्रित किया गया, जिससे वे उन देशों में ही प्रसन्नतापूर्वक/सुखपूर्वक निवास करते हुए, वहाँ के ही स्थायी निवासी बन गए। उन विभीषणों ने अपने राजा रावण की सारी युद्धनीति रामावतार देहपुरुषों को सिखा दी। जब उन आततायी राक्षसों ने उन देहदेशों पर आक्रमण किया, तब उन देवमित्रों की सहायता से पहले से ही उनकी युद्धनीति का अभ्यास कर रहे देवताओं ने उन्हें आसानी से व शीघ्र ही नष्ट कर दिया। वे भेदी-राक्षस लम्बे समय तक देहदेशों को अपनी सेवा देते रहे। जब वे वृद्ध होकर मर गए, तब देहदेशों ने दूसरे भेदी-शत्रुओं को ढूँढना प्रारम्भ कर दिया था।

देहदेश के यातायातविभाग का अति विशाल मुख्यालय भी एक आश्चर्य की मूरत ही होता है। वह दिन-रात, बिना रुके-बिना थके काम करता रहता है। यह इसलिए भी आवश्यक है, क्योंकि प्राणवायु से भरे हुए टैंकर (tankers) भी यातायातविभाग की सड़कों पर ही दौड़ाए जाते रहते हैं। साँस लेने की आवश्यकता तो देहपुरुषों में भी स्थूल पुरुषों की तरह ही प्रतिक्षण बनी रहती है। फिर देहदेश में प्राणवायु को भंडारित करके रखने की भी समुचित व्यवस्था नहीं होती। उस मुख्यालय में अनगिनत कर्मचारी काम करते रहते हैं। वह विशाल मुख्यालय छोटे-छोटे हिस्सों को मिलाकर बना होता है। एक बार लेखक ने देखा कि उस मुख्यालय के एक हिस्से को ईंधन व प्राणवायु की आपूर्ति करने वाली सड़क अवरुद्ध हो गई थी। उससे वह हिस्सा ईंधन व प्राणवायु की कमी के कारण, अजीबोगरीब ढंग से काम करने लगा। वह देहदेश के लिए विभिन्न प्रकार की, माल से लदी हुई गाड़ियों का आवागमन ठीक ढंग से नहीं करवा पा रहा था, जैसे कि कई बार गाड़ियों को अड्डे पर ही बहुत समय तक ठहराते हुए, उन्हें जाने की अनुमति नहीं देता था, तो कई बार बहुत सारी गाड़ियों को एक साथ ही हरी झंडी दिखा देता था। उससे मुख्यालय के अन्य भाग, उस भाग की कमियों को पूरा करते हुए, उसके काम को संभाल रहे थे। उससे पूरा मुख्यालय ही अजीब ढंग से काम करने लगा। संभवतः काम का बोझ बढ़ गया था, या उस मुख्यालय के कर्मचारी मृत्यदंड के भय से घबरा गए थे, जिससे वे उसे उचित विधि से नियंत्रित नहीं कर पा रहे थे। उन्हें यह पता नहीं था कि मुख्यालय के एक भाग को, पीछे से ही ईंधन की आपूर्ति बाधित हो गई थी, जिससे वे उसकी खराबी के लिए अपने को ही दोषी मान रहे थे। वैसी सूचना मिलते ही, राजा ने पड़ौसी देशों की सहायता से, उस प्रभावित क्षेत्र में विशेष संदेशवाहकों को भेजा, जिन्होंने उन कर्मचारियों को वस्तुस्थिति से अवगत करवा के शाँत व नियंत्रित कर दिया। यद्यपि ईंधन की कमी से जूझता हुआ हिस्सा खराब हो गया था, क्योंकि उस हिस्से की मशीनों व उन्हें संभाल रहे कर्मचारियों ने, अपना काम करना बंद ही नहीं किया। उसका कारण था, उस मुख्यालय की मशीनों के सोफ्टवेयर (software) में, किसी भी हालत में, न रुकने का सूक्ष्म आदेश (programming code) भरा होना। उस हिस्से में काम करने वाले अधिकाँश कर्मचारी भी परलोक चले गए थे, क्योंकि उन्हें साँस लेने के लिए पर्याप्त प्राणवायु नहीं मिल पाई थी। देहदेश की व्यवस्था एक बहुत बड़े जोखिम से बच गई थी, यद्यपि यातायात-मुख्यालय (केन्द्रीय राजधानी से दूर/क्षेत्रीय, यद्यपि पूरे देश को समाहित करने वाला) के एक हिस्से के नाकाम होने से, उसमें क्षीणता तो आ ही गई थी। कई बार राजा चुस्ती दिखाते हुए, तुरंत ही उस बाधित सड़क

को खुलवा देता है, जिससे मुख्यालय का वह भाग नष्ट होने से बच जाता है। वैसे तो धीरे-धीरे वहाँ के लिए नई सड़कें बना दी जाती हैं, परन्तु तब तक बहुत देर हो चुकी होती है। देहदेश के बाकी के क्षेत्र तो इधर-उधर से उधार मांग कर या बाधित मार्ग से आने वाली थोड़ी-बहुत प्राणवायु से भी गुजारा चला लेते हैं, जब तक नई सड़कें बन कर तैयार नहीं हो जातीं। परन्तु उस मुख्यालय के हिस्से अत्यधिक क्रियाशील होते हैं। अतः छोटी-मोटी आपूर्ति से उनका गुजारा ही नहीं चलता। वहाँ के कर्मचारी भाग कर भी अपनी जान नहीं बचाते, क्योंकि वहाँ पर विशेष जांबाजों को ही नियुक्त किया जाता है, जो अंत तक अपना काम नहीं छोड़ते। कई बार तो पीछे के मुख्य राजमार्ग ही बाधित हो जाते हैं। इससे पूरा मुख्यालय ही दुष्प्रभावित हो जाता है। ऐसी हालत में यदि राजा तुरंत कार्यवाही करके, मलबे आदि अवरोध को नहीं हटाता है, तब मुख्यालय के अधिकाँश भूभाग चपेट में आ जाते हैं। उस समय देहदेशनिवासियों की समझ में ही नहीं आता कि हवा का बहना बंद क्यों हो गया है। कई धार्मिक लोग सोचते हैं कि वायुदेव किसी कारणवश अप्रसन्न हो गए हैं, और वे उन्हें मनाने के लिए अनेक प्रकार के जप-तप, यज्ञ-यागादि करना प्रारम्भ कर देते हैं। मुख्यालय के कर्मचारी व आसपास के लोग, जोर-जोर से चिल्ला-चिल्ला कर राजा को सूचित करने लगते हैं। राजा भी उनकी दुर्दशा देख कर परेशान हो उठता है, और कई बार तो स्वयं भी चिल्लाने लगता है। पड़ौसी राजा इकट्ठे होकर उसकी भरपूर सहायता करते हैं। उस मुख्यालय का भूभाग अत्यंत दुर्गम व संवेदनशील स्थान पर स्थित होता है। वह अनेक प्रकार के नाजुक कलपुर्जों से भरा हुआ होता है। इसलिए इतनी शीघ्रता से, उसकी सड़कों से मलबे को हटाना, अधिकाँशतः संभव नहीं हो पाता। कई बार सफलता मिल भी जाती है। यदि मुख्यालय के पूरी तरह से ठप होने से पहले ही मुख्यालय को बदल दिया जाए, तो पुराने समय की, लगभग पूरी कार्यक्षमता वापिस मिल जाती है। परन्तु यह काम देहदेश के सबसे कठिन माने जाने वाले कामों में से एक होता है। उतने विशाल मुख्यालय को आपातकाल के लिए, अतिरिक्त रूप में रखना भी संभव नहीं है, क्योंकि पूरे देहदेश में उतना बड़ा अतिरिक्त भूभाग ही उपलब्ध नहीं होता, और न ही उतने अधिक महंगे व जटिल संरचना-जाल को बनाने के लिए, और फिर उसे संभाल कर रखने के लिए, पर्याप्त संसाधन ही होते हैं। अतः आपातकाल के समय, आवश्यकता पड़ने पर, उस मुख्यालय का सारा साजो-सामान, वैसे किसी दूसरे देश से मंगाना पड़ता है, जो विघटित हो रहा हो, इसलिए उसे उस मुख्यालय की, भविष्य के लिए आवश्यकता न हो। अत्यधिक विस्तीर्ण व जोखिम भरे उस साजो-सामान के भण्डार को ढोना व फिट (fit) करना भी अत्यंत कठिन होता है। पुराने मुख्यालय

से मशीनों को खोल कर, नई मशीनों को एकदम से उनकी जगह में जोड़ना पड़ता है। यदि उसमें कुछ अड़चन आ जाए, तो देहदेश में प्राणवायु का संकट उत्पन्न हो जाता है। मुख्यालय के आकार-प्रकार आदि की भी उचित जांच व पैमाईश करनी पड़ती है।

फिर लेखक के देखते ही राजा ने राजमार्ग के अवरुद्ध होने का कारण जानने के लिए, जांच-पड़ताल शुरु करवा दी। बहुत खोजबीन के बाद पता चला कि राजमार्ग पर क्षमता से अधिक माल लादे हुए, भारी गाड़ियां पलायन कर रही थीं। वास्तव में वह अतिरिक्त माल राजमार्ग पर, बहुत समय पहले से ही लगातार गिरता जा रहा था, और उससे चिपकता जा रहा था, क्योंकि उसमें चिपचिपाहट अधिक थी। साथ में, गोंद, फैवीकोल आदि जैसे चिपकू पदार्थों के बड़े-बड़े ड्रम (drums), सामान के अधिक वजन/फैलाव व गाड़ी के झटकों के कारण खुल जाते थे, और उनमें रखा हुआ पदार्थ सारे सामान के साथ मिश्रित हो जाता था। धीरे-धीरे जमता हुआ वह माल, इतना ऊंचा उठ गया कि उसने मार्ग को अवरुद्ध ही कर दिया। राजा ने किसानों से उसका कारण पूछा। किसान-संगठन (farmers' union) के अध्यक्ष (president) ने जवाबी पत्र में किसानों को निर्दोष बताया। उसने कहा कि विदेशों से भारी मात्रा में कच्चा माल आयातित किया जा रहा था। उस आयातित माल में गोंद, फेवीकोल आदि जोड़ों को भरने वाले पदार्थ, आवश्यकता से अधिक मात्रा में थे। उन्होंने तो केवलमात्र कच्चे माल के दुरुपयोग को रोकते हुए, उसे तैयार माल में ही पूरी तरह से समाहित कर दिया था, क्योंकि वह कच्चा माल बहुमूल्य मुद्रा देकर खरीदा जाता था। राजा किसानों की देशभक्ति से बहुत प्रसन्न हुआ और उन्हें बहुत से ईनाम/पारितोषिक देकर, भविष्य में भी उन्हें वैसा ही निष्ठापूर्ण कर्म करते रहने के लिए प्रोत्साहित किया। राजा को फिर अपने विदेशमंत्री की लापरवाही व उसके लालच का पता चला। वह वास्तव में बड़े अधिकारियों के साथ मिलकर कमीशनखोरी कर रहा था, और कमीशन के लालच में, आवश्यकता से अधिक कच्चे माल का आयात करवा रहा था। राजा ने मंत्री को बहुत लताड़ लगाई। राजा को भी दुःख हुआ, क्योंकि वह मंत्री से बहुत प्रेम करता था, और उसके ऊपर बहुत अधिक विश्वास भी करता था। राजा ने भविष्य के लिए, अधिक माल के आयात पर, विशेषतः जोड़ों को भरने वाले चिपचिपे पदार्थों के आयात पर रोक लगवा दी। राजा ने खाद्य एवं आपूर्ति विभाग तथा, वस्तु-आपूर्ति विभाग को, सभी प्रकार की वस्तुओं के मूल्य घटाने के निर्देश दिए। उससे उपभोक्तावाद बढ़ गया, जिससे लोग अधिक से अधिक माल खरीद कर, उनका उपभोग करने लग गए। उस बढ़े हुए उपभोग से उनकी क्रियाशीलता भी बढ़ गई, जिससे नए-नए निर्माण शुरु हो गए, नए-नए खेलों

का विकास हुआ, खेतों में अन्न की पैदावार बढ़ गई व वस्तु-सेवा के आदान-प्रदान की गति भी बढ़ गई। उससे माल की मांग और भी अधिक बढ़ गई। माल की मांग बढ़ने से, राजमार्गों पर गिरे हुए सामान को आसपास के लोग, अपने प्रयोग के लिए तुरंत उठा लेते थे। कर्मचारी भी मुनाफे के लालच में आकर, उस माल को उठा लेते थे, और औने-पौने दामों पर बेच देते थे। वैसे भी उस माल को उठाना तब थोड़ा आसान हो गया था, क्योंकि फिर वह राजमार्गों व लोगों के कपड़ों से, पहले की तरह अधिक नहीं चिपक पा रहा था। इस तरह से देहदेश की अर्थव्यवस्था सुधर गई थी, और समस्या का समुचित समाधान भी हो गया था।

देहदेश में भी, स्थूलदेश की तरह ही, कार्यालयों में अवकाश होते रहते हैं। एक बार लेखक ने देखा कि रविवार को छुट्टी का दिन था। देहपुरुषों को पूरे सप्ताह की थकान को मिटाने का अच्छा अवसर मिला था। मौसम बहुत खुशगवार था। बसंत की मध्यम गति की ठंडी-ठंडी हवा चल रही थी। चारों और फूल ही फूल खिले हुए थे। आकाश साफ था, और गुनगुनी धुप चारों ओर बिखरी हुई थी। इतने सुन्दर मौसम को देखते हुए, कुछ व्यापारी देहपुरुष भी भ्रमणोत्सव (picnic) मनाने का मन बना चुके थे। वे समुद्रतट की ओर निकल पड़े। वहाँ पर उन्होंने बहुत समय तक, समुद्र की लहरों के साथ खेलते हुए, जी भर कर स्नान किया। कुछ भूख व ठंडक महसूस होने पर वे बाहर निकले, और भोजन करने के लिए बैठ गए। फिर उस रेतीले तट पर लेट कर, गुनगुनी धुप सेंकते हुए कुछ सुस्ताने लगे। उन्हें शीघ्र ही नींद आ गई, और वे देर शाम तक सोते ही रहे। नींद खुलते ही वे अपनी-अपनी गाड़ियों में सवार होकर, घर को लौट गए। घर पहुँच कर उन्होंने अपने रेफ्रीजरेटरों (refrigerators) से, सुबह का बना कर रखा हुआ भोजन निकाल कर खाया, और फिर वे सो गए। वे देर सुबह तक सोते ही रहे, परन्तु जब उनकी आँखें खुलीं, तो उनसे उठा ही नहीं गया। वे बहुत प्रयत्न करने लगे, परन्तु वे छटपटाते ही रहे, उठ न सके। फिर उन्होंने अपनी उस समस्या के बारे में, अपने परिवारजनों से एक पत्र लिखवाया, और उसे राजकार्यालय के पते पर प्रेषित करवा दिया। क्योंकि मामला विदेशव्यापार से सम्बंधित था, अतः उस पत्र को राजा के समक्ष प्रस्तुत किया गया। राजा को व्यापारिक हानि की चिंता सताने लगी। राजा ने बहुत सारे मालिशिए व चिकित्सक, उनका इलाज करने के लिए भिजवाए। उनकी प्रभावित माँसपेशियों की जम कर मालिश की गई। चिकित्सकों को पता चला कि बहुत अधिक काम करने से, उनकी माँसपेशियों में अकड़न पैदा हो गई थी, जो छुट्टी वाले दिन भी दूर नहीं हो पाई, क्योंकि वे उस दिन सोते ही रहे, जिससे उन माँसपेशियों के लिए रक्त की आपूर्ति बाधित रही। चिकित्सा से वे

ठीक हो गए, और अपने-अपने कामों पर लौट गए। उससे देहदेश की अर्थव्यवस्था पुनः सामान्य हो गई। स्थूलपुरुषों में भी, विशेषतः भारी काम करने वाले श्रमिकों व किसानों में, यह समस्या पूर्णतः इसी प्रकार की होती है।

देहदेश की राजधानी में स्थित केंद्रीय मुख्यालय के साथ लगते क्षेत्र में, एक बहुत बड़ा तापमान-नियंत्रक (thermostat) बना होता है। उसको नियंत्रित करने वाला कार्यालय, मुख्यालय में ही बना होता है, जिसमें बहुत से देहपुरुष काम करते हैं। वह कार्यालय, परिस्थिति के अनुसार, देहदेश के लिए सर्वोत्तम तापमान निर्धारित करता रहता है, और उसके अनुसार ही थर्मोस्टेट को एडजस्ट (adjust) करता रहता है। पूरे देहदेश का तापमान स्थूलदेश की तरह ही, विभिन्न प्राकृतिक कारणों से स्थिर व नियंत्रित बना रहता है। परन्तु कई बार, देहदेश के बाहर के बीहड़ों में मौसम का मिजाज बहुत बिगड़ जाता है। कई बार वहाँ अत्यधिक बर्फबारी हो जाती है, जिससे वहाँ ठंड, अत्यधिक रूप से बढ़ जाती है। वहाँ पर हड्डियों को जमाने वाली ठंडी हवाएँ प्रवाहित होने लगती हैं। वे ठंडी हवाएँ देहदेश के अन्दर भी प्रविष्ट हो जाती हैं। ऐसे में, देहदेश में ठण्ड काफी बढ़ सकती है, जिससे उसकी अर्थव्यवस्था पटरी से भी उतर सकती है। ऐसी परिस्थिति देहदेश को कभी भी मंजूर नहीं होती। देहदेश का तापमान जब निम्नतम निर्धारित सीमा से नीचे गुजरने लगता है, तब मुख्यालय-स्थित थर्मोस्टेट मशीन की धातु सिकुड़ जाती है, जिससे बिजली का चक्र (circuit) पूर्ण हो जाता है। उससे थर्मोस्टेट के निकट बने, देश के सबसे बड़े व विशेष तापविद्युतयंत्र (thermal powerhouse) को कार्य शुरु करने का संकेत मिल जाता है। उससे देश के भिन्न-भिन्न स्थानों पर फिट (fit) किए गए बड़े-बड़े हीट-बलोवरों (heat-blowers) को विद्युत की आपूर्ति होने लग जाती है। उनके चलने से पूरे देश में गर्म हवाएँ प्रवाहित होने लगती हैं। उससे देहपुरुष पुनः राहत की साँस लेने लग जाते हैं, जिससे अर्थव्यवस्था पुनः पटरी पर लौटने लगती है। जब तापमान सामान्य हो जाता है, तब थर्मोस्टेट मशीन की धातु की पट्टी गर्मी से फैल जाती है, और परिपथ (circuit) में लगी हुई तार के स्पर्श से दूर हट जाती है। उससे परिपथ टूट जाता है, और तार में विद्युत का प्रवाह रुक जाता है। पुनः ठण्ड बढ़ने से, परिपथ फिर से जुड़ जाता है, और पुनः विद्युत-प्रवाह चालू हो जाता है। इस तरह से, यह चक्र निरंतर चलता रहता है, और देहदेश हमेशा खुशहाल बना रहता है। साथ में, तापमान घटने पर, देहदेश के बड़े-बड़े व्यायामालयों (gymnazium) में लगे ताले भी खोल दिए जाते हैं, जहाँ जाकर देहपुरुष खूब सारा व्यायाम (exercise) करते हैं, और अपने शरीर को गर्म रखते हैं। इसी तरह,

शारीरिक-श्रम वाली मजदूरी के काम बढ़ा दिए जाते हैं, ताकि देहपुरुषों को मजदूरी ढूँढने के लिए कठिनाई का सामना न करना पड़े। प्रत्येक स्थान पर, मजदूरी से सम्बंधित पूरे लेखे-जोखे की सूचनाएँ उपलब्ध करवा दी जाती हैं। सारी सूचनाएँ घर बैठे ही, इंटरनेट पर, दूरदर्शन पर, स्मार्ट फोन पर व रेडियो पर उपलब्ध करवा दी जाती हैं। उससे सभी जरूरतमंद लोगों को शारीरिक काम करने का मौका मिल जाता है, जिससे उन्हें अपने शरीर को गर्म रखने में बहुत सहायता मिलती है। यह प्रयास किया जाता है कि देहपुरुषों को अपने-अपने घरों के निकट ही, मजदूरी या शारीरिक श्रम करने के अन्य अवसर उपलब्ध हो जाएं, ताकि उन्हें घर से आते-जाते, रास्ते में ठण्ड का सामना न करना पड़े। पढ़ाई-लिखाई व बैठ-बिठाई का काम करने वाले देहपुरुष भी शारीरिक श्रम व व्यायाम आदि करना प्रारम्भ कर देते हैं। तापमान घटने से, राजा का इशारा मिलते ही, मुख्यालय-स्थित विद्युत-मंत्रालय भी क्रियाशील होकर, देहदेश के विद्युतविभाग को क्रियाशील कर देता है। उससे विद्युतविभाग के कर्मचारी भी, शारीरिक रूप से अधिक सक्रिय हो जाते हैं, और भरपूर विद्युत का उत्पादन करते हैं। वे दिन-रात भरपूर श्रम करते हुए, प्रत्येक घर तक विद्युत की भरपूर आपूर्ति को सुनिश्चित करते हैं। इससे मानसिक श्रम करने वाले देहपुरुषों को अपने घरों में रखे हुए हीटरों, बलोवरों व वातानुकूलित कक्षों को चलाने के लिए पर्याप्त रूप में विद्युत उपलब्ध हो जाती है। ठन्डे क्षेत्रों में, दूरदराज के क्षेत्रों में व सीमाओं के निकट बसने वाले देहपुरुष अपने घरों में बने चूल्हों में, स्थानीय रूप से बहुतायत में मिलने वाले ईंधनों, जैसे कि लकड़ियों, कोयलों, गोबर के उपलों व घास-पत्तियों आदि को जलाना बढ़ा देते हैं।

इसी तरह, कई बार भयंकर गर्मी भी पड़ जाती है। उससे बचाव के लिए, देश की राजधानी में एक विशिष्ट मंत्रालय बना होता है। वह देश के विभिन्न व महत्त्वपूर्ण स्थानों पर स्थापित, अत्याधुनिक व स्वचालित वायु-अनुकूलकों (air conditioners) और शीतकों (coolers) को, रेडियो-तरंगों (radiowaves) के माध्यम से, आवश्यकतानुसार नियंत्रित करता रहता है। परन्तु कई देश ऐसे होते हैं, जिनमें उच्च तकनीक के ऊष्णता-निवारक उपकरण नहीं होते, जिससे सम्बंधित मंत्रालय भी कुछ नहीं कर पाता। उससे उनके देशवासी सुस्त व ढीले पड़ जाते हैं, जिससे गर्मी के मौसम में देश की क्रियाशीलता बहुत घट जाती है। विशेषतः नवदेशविभाग की बैठकें स्थगित करवा दी जाती हैं, क्योंकि उनके लिए विशाल देश के दूर-दूर स्थित, विभिन्न कोनों से, विभिन्न अधिकारियों को लम्बी यात्रा पूरी करके, एक स्थान पर इकट्ठे होना पड़ता है, परन्तु गर्मी के कारण वे यात्रा नहीं करना चाहते। देश की क्रियाशीलता को बनाए रखने के लिए, राजा को ही

चिंता करनी पड़ती है। वह बीहड़ों से ठन्डे जल की विशेष व भारी आपूर्ति करवाता है, और फिर उसे पूरे देश में वितरित करवाता है, जिससे नहा-नहा कर, देशवासी अपने शरीर को ठंडा करते रहते हैं, और अपनी क्रियाशीलता को बना कर रखते हैं। यात्री बसों को भी उसी पानी से ठंडा रखा जाता है।

देहदेश की सीमा के बाहर घने जंगल होते हैं। उनमें अनेक प्रकार की वनस्पतियाँ उगी होती हैं। कुछ छोटे आकार की होती हैं, तो कुछ बड़े आकार की। कहीं पर चट्टानें होती हैं, तो कहीं पर गड्ढे। उन गड्ढों में वर्षा का व देहदेश से बह कर आया हुआ जल भरा रहता है। उस जल में बहुत से मेंढक, मछलियाँ व अन्य जलीय जीव पनपते रहते हैं। वे अधिकाँशतः शाँतिप्रिय होते हैं, परन्तु कई बार उन जलीय जीवों की खोज में सर्प आदि उत्पाती जीव भी पहुँच जाते हैं, जो कई बार भूमिगत सुरंगें आदि बना कर, सीमाक्षेत्र को हानि भी पहुंचा देते हैं। इसी तरह, उत्तम प्रकार का मीठा घास ढूँढते हुए, वहाँ पर चूहे भी पहुँच जाते हैं। देहदेश के जल से सीमाक्षेत्र पर पर्याप्त नमी बनी रहती है, जिससे वहाँ पर उत्तम व मीठे प्रकार का घास बहुतायत में पाया जाता है। वहाँ पर अनेक प्रकार के बड़े-बड़े वृक्ष होते हैं, जो आकाश को छूते हुए प्रतीत होते हैं। उनमें भिन्न-भिन्न प्रकार के पशु-पक्षी अपना-अपना डेरा डाले रखते हैं। अधिकाँश पशु-पक्षी शाँतिपूर्ण होते हैं। कुछ पशु-पक्षी शैतानी प्रकृति के भी होते हैं। वे जंगल को तो हानि पहुंचाते ही हैं, साथ में सीमाभित्ति को भी हानि पहुंचाते हैं। वे सुरक्षाबलों के भय से, अधिक अन्दर न घुसते हुए, सीमा पर ही बने रहते हैं। इन सभी कारणों से, सीमाभित्ति में छिपाए गए विद्युतीय संवेदक (electronic sensors), सीमा पर हो रही इस प्रकार की हरकतों की सूचना राजकक्ष को भेजते रहते हैं। इन विद्युतीय सूचनाओं (electronic signals) से राजकक्ष की भित्तियों में स्थापित किए गए ध्वनिसूचकयंत्र (sound alarms) निरंतर बजते रहते हैं। इससे राजा निरंतर बेचैन रहता है, और सीमाक्षेत्र के ऊपर विशेष ध्यान देते हुए, समस्त बाधाओं के निराकरण का प्रयास करता है। एक बार लेखक ने देखा कि देहदेश की सीमा के बाहर, उससे लगते घने जंगलों में, बीहड़ों में रहने वाले वनमाफियाओं के गिरोहों ने बड़ा भारी उत्पात मचाया हुआ था। वे छोटे-बड़े, हरे-सूखे व बेशकीमती दरख्तों को काटते ही काटते जा रहे थे। उन्हें रोकने वाला वहाँ पर कोई नहीं था, क्योंकि देहदेश के सुरक्षाकर्मी सीमा के बाहर जाते ही नहीं। उन्हें रक्षामंत्रालय के सख्त दिशा-निर्देशों के कारण ही अपने आप को संयमित करके रखना पड़ता है, अन्यथा वे अवश्य ही सीमा का उल्लंघन किया करते, क्योंकि सीमा को हानि पहुंचाते हुए उग्रपंथियों को देख कर, उनका मन क्रोध के कारण हुंकारें-फुन्कारें

भरता रहता है, व उनकी बलवान भुजाएं फड़कती रहती हैं। वास्तव में सीमा के बाहर, देहपुरुषों का जीवन संकट में पड़ सकता है। सीमा के बाहर के बीहड़ों में न तो सड़कें होती हैं, जिन पर देहपुरुषों की हथियारबंद गाड़ियां दौड़ सकें, और न ही वहाँ पर पर्याप्त मात्रा में भोजन-पानी की उपलब्धता ही होती है। इसके विपरीत, बीहड़ों में रहने वाले उग्रपंथी, वहाँ की कठिन परिस्थितियों में रहने के अभ्यस्त होते हैं। वे जंगलों के टेढ़े-मेढ़े रास्तों व छोटी-छोटी पगडंडियों पर दौड़ने में माहिर होते हैं। वे जंगल के कंद-मूलों व फल-फूलों को भी अच्छी तरह से पहचानते हैं, जिससे उन्हें कभी भी भोजन-पानी की समस्या का सामना नहीं करना पड़ता। उन्हें जंगल के जल-स्रोतों की, विभिन्न स्थानों की भूमियों के आकार-प्रकार की व अन्य सभी जीवनोपयोगी जानकारियाँ होती हैं। एक प्रकार से उन्हें बीहड़ों के चप्पे-चप्पे की जानकारी होती है। देसी विद्याओं व कलाओं में भी वे निपुण होते हैं। वे अपने जीवन के लिए आवश्यक सभी वस्तुओं का निर्माण स्वयं ही कर लेते हैं। वे आत्मनिर्भर होते हैं। वे अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए समाज के ऊपर निर्भर नहीं रहते। इसके विपरीत, देहपुरुषों को देहदेश के समाज के साथ जीने की आदत होती है। वे अकेले में जीवनयापन नहीं कर सकते। इसी कारणवश उन्हें बीहड़ों में जाने की अनुमति नहीं दी जाती है। वे वहाँ के प्रतिकूल वातावरण के शिकार पल भर में ही बन सकते हैं। यदि किसी तरह वातावरण से बच भी जाएं, तो शीघ्र ही उग्रपंथियों का ग्रास बन सकते हैं। उन वृक्षों के कटने से, बाहर की तेज व ठंडी हवाएँ, धूल-मिट्टी तथा स्वचालित ड्रोन आदि आकाशीय वस्तुओं के साथ, सीमाभित्ति से टकरा कर, सीमा-संवेदकों को उत्तेजित करती रहती हैं। उनके सिग्नलों से बजने वाले अलार्मों को सुन-सुन कर, राजा बहुत चिड़चिड़ा व परेशान रहने लगता है, तथा अपने दैनिक कार्यों पर सही ढंग से ध्यान नहीं दे पाता। वैसे भी, सीमा के बाहर से सम्बंधित सारे कार्यों को करने की जिम्मेदारी, राजा ने ही अपने ऊपर ली हुई होती है। राजा को जब कुछ नहीं सूझा, तब उसने नागरिक उड्डयन विभाग को शत्रुओं के ऊपर ड्रोन-हमला (drone attack) करने के लिए निर्देशित किया। राजा के मार्गदर्शन में ही विदेशों से विस्फोटक मंगवाए गए। फिर राजा के मार्गदर्शन में ही, ड्रोनों के ऊपर विस्फोटक लादे गए और उन्हें रिमोट कंट्रोल (remote control) की सहायता से, देहदेश की सीमा के ऊपर उड़ाया गया। रिमोट कंट्रोल से ही विस्फोटक कक्ष (explosive chamber) के द्वार खोले जाते रहे, और यथाभीष्टित मात्रा में, उन शत्रुओं के ऊपर विस्फोटक गिराए जाते रहे। बहुत से शत्रु मारे गए। बहुत से शत्रु घने जंगलों के बीच में छिप गए। कई तो छोटी-छोटी सुरंगों में, चट्टानों के नीचे की खाली जगह में व गड्ढों में छिप गए। बहुत

से शत्रु, उनके स्वयं के द्वारा सीमा पर आपातकाल के लिए, पहले से बनाई गई भूमिगत सुरंगों में छिप गए। कुछ शत्रु अनजाने में ही सीमा के दूसरी ओर निकल गए, जिन्हें सुरक्षाबलों ने तुरंत मार गिरा दिया। जब सभी शत्रु मृत समझे गए, तब ड्रोन हमला बंद करवा दिया गया। परन्तु कुछ ही समय के बाद, वे छिपे हुए शत्रु फिर से सामने आकर, सीमाक्षेत्र पर पूर्ववत उत्पात मचाने लगे। फिर से उन पर उसी तरह का हवाई हमला किया गया। पहले की तरह ही, उनमें से कुछ, फिर से छिप गए। फिर हमला किया गया। इस तरह, बार-बार के आक्रमणों से क्षीण होते हुए, अंततः वे नष्ट ही हो गए। कई बार, विशेषतः यदि राजा के द्वारा उनके विरुद्ध समुचित व नीतिबद्ध ढंग से कार्यवाही न की जाए, तो वे शत्रु सदैव वहाँ पर बने रहते हैं।

एक बार लेखक ने देखा कि कुछ भिखारियों की एक टोली भी, विदेश से आयात किए जा रहे माल के साथ होते हुए, देहदेश के अन्दर घुस आई थी। वास्तव में वह माल भिखारियों की गन्दी बस्तियों के निकटवर्ती क्षेत्र से आ रहा था। संभवतः मालगाड़ियों के मार्ग में भी गन्दी बस्तियां मौजूद थीं। वह टोली छोटी भी थी, और मालवाहकों/व्यापारियों के बीच में घुली-मिली हुई भी थी, इसीलिए राजा उसे देख नहीं पाया, अन्यथा, वह उस टोली को विदेश-व्यापार के मुख्य राजद्वार के बाहर ही रुकवा देता। सुरक्षाबल भी उसका कुछ नहीं बिगाड़ सके, क्योंकि वह टोली भारी-भरकम माल के बीच में छिपी हुई थी, साथ चल रही व्यापार-मंडली के जैसी वेशभूषा धारण किए हुए थी, और गाड़ियों की आवाजाही से व्यस्त राजमार्ग को छोड़कर कहीं भी नहीं जा रही थी, यहाँ तक कि सड़क के किनारों पर भी नहीं रुक रही थी। यदि कभी-कभार पकड़ी-पहचानी भी जाती थी, तो भी सुरक्षाबल उसे दीन-भिखारियों का झुण्ड जानकर दयावश छोड़ देते थे। वैसे भी सुरक्षाबल सड़क के बीच में आते ही नहीं, ताकि यातायात में व्यवधान न उत्पन्न हो। वे भिखारी टोली के रूप में ही सदैव बने रहते थे, जिससे इक्के-दुक्के सुरक्षा-जवान तो उनसे पंगा लेने की हिम्मत ही नहीं जुटा पा रहे थे। यदि कुछ अत्यंत बहादुर जवान उन्हें निशाना बनाने की कोशिश करते भी थे, तो भी वे बच जाते थे, क्योंकि वे कबाड़ियों से सस्ते में खरीदी हुई द्वितीयहस्त (second hand) बारूदरोधी (bullet proof) गाड़ियों में बैठे होते थे। सबसे पहले वे उस विशाल देश के एक विस्तृत मैदानी क्षेत्र से होकर गुजरे। वहाँ पर उन्होंने अपने जैसे भिखारियों की कुछ टोलियों को, किसानों के बीच में भीख माँगते हुए देखा। उन्हें वह स्थान कुछ पसंद नहीं आया, क्योंकि वह राजद्वार के निकट था, इसलिए वहाँ पर अनेक प्रकार का माल ढोती हुई, बहुत सारी बड़ी-बड़ी गाड़ियों का कनफोड़ू शोर निरंतर हो रहा था, जो उन्हें बेचैन कर रहा

था। इसलिए वे शाँतियुक्त स्थान की खोज में आगे ही आगे चलते रहे। देहदेश के सुदूर क्षेत्र में, उन्हें एक पर्वतीय, उथली-गहरी घाटियों वाला, ऊबड़-खाबड़ व शाँतियुक्त स्थान दिखाई दिया। वहाँ पर बहुत से सीढ़ीदार खेत बने हुए थे, जिनमें बहुत से किसान काम कर रहे थे। कहीं-कहीं पर उन जैसे भिखारियों की टोलियाँ भी दृष्टिगत हो जाती थीं। वहाँ पर स्थान-स्थान पर निर्मल जल के झरने भी दिखाई दे रहे थे, जिनसे निकलता हुआ, देहदेश के मनोरम पहाड़ों की जड़ी-बूटियों के रस वाला व उन्हीं पहाड़ों के पसीने के साथ बह रहे खनिज तत्त्वों की शक्ति वाला वह निर्मल जल, बहुत भला प्रतीत हो रहा था। देहदेश के किसानों के लिए तो वे झरने किसी वरदान से कम नहीं थे। वे उनके मीठे जल का भरपूर उपयोग करते हुए, उससे भरपूर फसलें भी पैदा कर रहे थे। उस स्थान को अपने निवास के लिए सर्वोपयुक्त जानकर, वहाँ पर उस टोली के भिखारी अपनी गाड़ियों से नीचे उतर गए। वहाँ पर उन्होंने झरने का मीठा जल पीकर अपनी थकान मिटाई, और फिर वे खेतों में पड़ा हुआ, किसानों से छूटा हुआ थोड़ा-बहुत अनाज खाने लग गए। कहीं सुरक्षाबलों की नजर न पड़ जाती, उसके लिए वे खेतों से अनाज इकट्ठा करके, एकदम से राजमार्ग को लौट जाते थे, और उसके किनारे पर बने अपने अस्थायी शिविर के अन्दर छिप जाते थे। कई बार तो कुछ अनगढ़ भिखारी, उतावलेपन में या डर के मारे भागते हुए, डंगे से पत्थरों को गिराकर, उसे हानि पहुंचा देते थे। वह पत्थरों का पक्का डंगा, राजमार्ग के दोनों किनारों पर बना होता है, ताकि राजमार्ग पर चलने वाले शरारती तत्त्व देहदेश के अन्दर न घुस सके। उन डंगों के ऊपर, थोड़ी-थोड़ी दूरी पर, सुरक्षाबलों की चौकियां बनी होती हैं, जहाँ से वे घुसपैठियों पर नजर बनाए रखते हैं, और किसी कारणवश टूटे हुए डंगे से प्रविष्ट हो रहे शत्रुओं को चेतावनी देते रहते हैं। यदि वे चेतावनी को अनसुना करते हैं, तो उन्हें मार गिरा देते हैं। डंगे के क्षतिग्रस्त होने की सूचना पाकर, देहदेश के मिस्त्री तुरंत वहाँ पहुँच कर, उस डंगे को क्षतिमुक्त कर देते थे। वे भिखारी गंदे रहते थे, अतः अधिकाँशतः रोगाणुओं से संक्रमित रहते थे। कई बार तो उनका संक्रमण किसानों में भी फैल जाता था, जिससे बहुत से किसान बीमार हो जाते थे। वैसे में, खेतों की पैदावार बहुत अधिक घट जाती थी। उससे कई बार तो पूरे देहदेश में गंभीर अकाल भी पड़ जाता था। वे भिखारी अनपढ़ थे, जिससे वे बहुत सी संतानों को पैदा कर रहे थे। कई नए-नवेले भिखारी तो कुछ बड़े होने पर, उस राजमार्ग के सीमित क्षेत्र में ऊबने लग जाते थे। वहाँ पर न तो खेलने-कूदने के लिए लम्बे-चौड़े मैदान थे, और न ही घूमने के लिए विस्तृत व मनमोहक भूभाग ही थे। वहाँ पर तो इज्जत के साथ जीने के मौके भी नहीं थे। ऐसी आर्थिक व अन्य लघुक्षेत्रीय समस्याओं

के कारण, वे अपने पूर्वजों व अन्य साथियों को बड़े दुःख के साथ, दिल पर पत्थर रख कर छोड़ रहे थे, ताकि आगे की, विशाल देश की यात्रा पर निकल सकते। फिर उन्होंने सुरक्षा के लिहाज से अपने बड़े-बड़े झुण्ड बनाए, और प्रत्येक झुण्ड के लिए एक अलग से गाड़ी मुहैया करवाई। फिर उन्होंने अपनी-अपनी गाड़ियां राजमार्ग से बाहर, देश के खुले व विस्तृत क्षेत्र में निकाल दीं। बड़ी-बड़ी गाड़ियों में बैठे हुए, वे किशोर असामाजिक लग रहे थे। उन्हें जटिल देहदेशसमाज में सहयोगात्मक रूप से जीने का अनुभव नहीं था। छोटे-छोटे गली-रास्तों में भी वे अपनी गाड़ियों को बलपूर्वक घुसाते हुए; उन मार्गों, साथ लगते भवनों व अन्य संरचनाओं को भारी नुकसान पहुंचा रहे थे। उनका लक्ष्य तो केवल देहदेश के सर्वश्रेष्ठ व चहल-पहल वाले क्षेत्रों में आनंदपूर्वक विचरण करना था। शीघ्र ही वे देश के विशाल परिष्करण यंत्र के परिसर के अन्दर घुस गए। वहाँ के सुरक्षाबल घृणा, दया, भय व भ्रम के कारण उन पर सटीक कार्यवाही नहीं कर पा रहे थे। उन्हें पता ही नहीं चल रहा था कि वास्तव में वे घुसपैठिए शत्रुतापूर्ण ढंग से व्यवहार कर रहे थे। वे उन्हें गंदे व मूर्ख भिखारी मात्र ही समझ रहे थे। वास्तव में भी, वे लोग देहदेश के ऊपर जानबूझ कर, सीधा आक्रमण भी नहीं कर रहे थे। गलत काम तो उनकी मूर्खता के कारण, उनसे अनजाने में ही हो रहे थे। संभवतः उसका कारण, उनके अन्दर विद्यमान साम्प्रदायिक कट्टरपंथ भी था, जिससे भी सुरक्षाबलों को उनके ऊपर कार्यवाही करने में संकोच हो रहा था। वे तो केवल अपना पेट मात्र भर रहे थे, और कम से कम संसाधनों से अपना गुजारा चला रहे थे। परन्तु उनका गुजारा चलाने का ढंग भी विचित्र व मूर्खतापूर्ण था। वे हर कहीं से, यहाँ तक कि उद्योगों के कलपुर्जों के बीच में से भी खाद्य सामग्रियों व अन्य दैनिकोपयोगी वस्तुओं को बलपूर्वक बाहर खींच लेते थे, जिससे उद्योगों को भारी क्षति पहुंचती थी। उस कबीले का मुखिया तो बहुत ही मूर्ख व जड़बुद्धि लग रहा था। उसको तो केवल कबीले का पेट भरने का ही ज्ञान था, चाहे वह किसी भी विधि से क्यों न भरना पड़ता, क्योंकि उसे अच्छे-बुरे का तनिक भी ज्ञान नहीं था। वे प्रेतों की तरह भटकते हुए, वहीँ पर प्रसन्नतापूर्वक रहने लग गए, और वापिस अपने मूलस्थान को लौटना ही भूल गए। भूलते भी क्यों न, नए स्थान पर उनको बिना कुछ काम किए व बिना मूल्य चुकाए ही, मनमाने ढंग से सभी सुख-सुविधाएँ जो मिल रही थीं। जैसे-तैसे करके देहदेश ने उनके उत्पात को सहा, और समय के साथ उनकी मृत्यु होने पर ही चैन की साँस ली। परन्तु उनके मृत शरीर भी गंदे व संक्रमित थे। इसलिए उन्हें किसी ने हाथ नहीं लगाया, जिससे वे वहीं पर धीरे-धीरे सड़ते हुए नष्ट हो गए। बहुत से शत्रु उनकी कब्रगाहों के पास इकट्ठे होकर, उनसे उत्पात मचाने की प्रेरणा ले रहे थे। उनसे

दुर्गन्ध व संक्रमण न फैलता, उसके लिए देहपुरुषों ने उनको प्लास्टिक के तरपाल से ढक दिया था। उससे देहदेश में महामारी का खतरा भी टल गया था। संभवतः देहपुरुषों ने बिमारियों के खिलाफ टीकाकरण भी करवाया हुआ हो। कई बार जब महामारी फैलती है, तो वह पूरे औद्योगिक क्षेत्र को भारी क्षति पहुंचती है, और कई बार तो उसे ठप ही करवा देती है। सभी कर्मचारी मारे जाते हैं। वहाँ से फैलती हुई, कई बार वह पूरे देश में फैल जाती है, जिससे संपूर्ण देहदेश को भारी कीमत चुकानी पड़ती है। कई बार तो संपूर्ण देश का अस्तित्व ही संकट में पड़ जाता है। इसी तरह से, एक बार उन मूर्खों के गिरोह ने जलविभाग के उस पूर्वोक्त व महत्त्वपूर्ण जलाशय के आसपास अपना डेरा जमा लिया था। वहाँ पर उन्होंने तंग मार्गों, गुफाओं व घाटियों को भारी क्षति पहुंचाई थी। उनकी मूर्खतापूर्ण गतिविधियों से प्रोत्साहित होकर, देहदेश के कट्टर शत्रु भी अवसर का लाभ उठाने के लिए, अन्दर घुस आए थे। सुरक्षाबलों को उन धार्मिक उन्मादियों से उलझते हुए देखकर, देश के अन्दर पहले से बसे हुए सुप्त शत्रु भी जागने लग गए थे। उन भिखारियों द्वारा खोदे गए पत्थरों, मलबे व गिराए गए पेड़ों से, उन्हें छिपने के लिए बहुत से सुरक्षित स्थान प्राप्त हो रहे थे। देहदेश के संसाधन दुष्प्रभावित संरचनाओं की क्षतिपूर्ति में व्यय हो रहे थे, अतः शत्रुओं से लड़ने के लिए कम ही संसाधन उपलब्ध थे। दयावश देहदेश के सुरक्षाबल उन याचकपंथियों को मार नहीं रहे थे, अपितु उन्हें ज़िंदा पकड़-पकड़ कर और गाड़ियों में लाद-लाद कर, नजदीक में स्थित देहदेश की सीमा से बाहर छोड़े जा रहे थे। इस तरह से, सब ठीक-ठाक हो गया था। इसी तरह से, कई बार भिखारियों की वे टोलियाँ देहदेश के मुख्य जलशोधकयंत्र तक पहुँच जाती हैं, और वहाँ पर इसी प्रकार से भारी उठापटक मचाती हैं। एक बार वे देहदेश के केन्द्रीय मुख्यालय में भी पहुँच गए थे। उनको देख कर, क्रोध व भय के कारण वहाँ के मंत्री व अधिकारी लोग पगला गए थे। राजा, जो पूरी तरह से अपने कर्मकारों के प्रति आसक्ति व मोहमाया में डूबा रहता है, अतः उन्हीं की तरह व्यवहार करता रहता है, वह भी पागल जैसा हो गया था। देहदेश का केन्द्रीय मुख्यालय एक सर्वाधिक नाजुक स्थान होता है। वहाँ पर किसी भी समस्या के उत्पन्न होने का अर्थ है, पूरे देहदेश की सत्ता पर गंभीर संकट उपस्थित होना। वहाँ पर मुरम्मत के लिए ठोक-पिटाई भी नहीं की जा सकती, क्योंकि वहाँ पर अत्यधिक नाजुक मशीनें व कलपुर्जे होते हैं, जो पूरी तरह से अतिसूक्ष्म विद्युतचुम्बकीय तरंगों से; चित्र-विचित्र व अनजाने सिद्धांतों के अनुसार काम करते रहते हैं। कई बार वे अशिक्षित जनजाति के लोग देहदेश के यातायात विभाग के मुख्यालय में पहुँच जाते हैं, जहाँ पर वे नाजुक मशीनों के क्रियाकलापों में विघ्न उत्पन्न करते हैं। इससे भी देहदेशनिवासियों को

विभिन्न प्रकार के माल की आपूर्ति बाधित हो जाती है। यह स्थिति भी देहदेश के लिए चिंताजनक होती है।

देहदेश के मुख्य आयातद्वार पर एक निरीक्षण-चौकी (inspection post) बनी होती है, जिसमें बहुत से निरीक्षकों (inspectors) व कर्मचारियों को तैनात किया गया होता है। वे प्रत्येक माल की गुणवत्ता की बड़ी बारीकी से, गहन छानबीन करते हैं, और उसमें पाए गए अवांछित पदार्थों, जैसे कि हथियारों, गोला-बारूदों, मिट्टी-पत्थरों आदि को प्रवेशद्वार के बाहर ही रोक देते हैं। उनके पास जैविक परीक्षणों के लिए जटिल यंत्र व चलित-प्रयोगशालाएँ (movable labs) भी होती हैं, जिनसे वे यह पता लगाते रहते हैं कि क्या आयातित खाद्यान्न खाने योग्य हैं, या नहीं। सड़े हुए खाद्यान्नों को तो वे बाहर ही रुकवा देते हैं। फिर माल को सही तरतीब से गाड़ियों में भरवाने के लिए, वे उसे यथासंभव छोटा व पैक (pack) कर देते हैं। इन सब उठापटक वाले क्रियाकलापों से, उस मुख्य अंतर्राष्ट्रीय राजद्वार व साथ लगते राजमार्ग को गंभीर क्षति पहुँचने का भय सदैव बना रहता है। वैसे भी कई बार, बाहर से प्रवेश करने वाले अधिकाँश माल के किनारे बहुत तीखे व ऊबड़खाबड़ होते हैं, या उनमें आधी-अधूरी गढ़ी हुई बड़ी-बड़ी कीलें या बाहर निकले हुए बड़े-बड़े सरिये आदि होते हैं। निरीक्षकों की असावधानी से, कई बार वे तीखी वस्तुएँ उन्हें दृष्टिगत नहीं होतीं। उन वस्तुओं की खरोचों से, राजद्वार के आसपास के राजमार्ग के दोनों ओर के डंगों के बहुत से पत्थर निकले होते हैं, जिससे डंगे के वे स्थान नाजुक बन जाते हैं। लेखक ने देखा कि एक बड़ी मालगाड़ी ने पीछे (back) होते हुए, एक वैसे ही नाजुक हिस्से को टक्कर मार दी थी, जिससे डंगे का वह भाग, उसकी पूरी ऊंचाई तक व ३-४ फुट की लम्बाई तक टूट गया था। देहरक्षक उस समय उस आपाधापी में व्यस्त थे, और उधर विशेष जनजाति के शत्रु अच्छा अवसर जानकर, वहाँ से देहदेश के अन्दर प्रविष्ट हो गए। यद्यपि बाद में तो डंगे की मुरम्मत कर दी गई थी। वे शत्रु भी बहुत चालाक किस्म के थे। उन्हें पता था कि उस अति विशाल व भयानक पत्थर के डंगे के बीच में सुरक्षाबल नहीं आ सकते थे। अतः वे रस्सियों से लटक-लटक कर, उस डंगे के बीच में पहुँच कर, अपनी पीठ पर लादी गई स्वचालित मशीनों से सुरंग (drilling) बनाने लगे। उन्होंने उन बड़े-बड़े पत्थरों के बीच में सुरंगों के जाल बिछा दिए थे। उससे वह डंगा अस्थिर हो गया था, और उसके सहारे से बने राजमार्ग के ऊपर वाहनों की आवाजाही दुर्घटना को न्यौता दे सकती थी। राजा ने भी खतरे को भांपते हुए, भय के कारण राजमार्ग को बंद करवा दिया। देहदेश की अर्थव्यवस्था क्षीण हो रही थी, और उसकी हालत दिन-प्रतिदिन बद से बदतर होती जा रही थी।

सैनिकों की पहुँच उन शत्रुओं तक नहीं हो पा रही थी, क्योंकि शत्रुओं ने अपनी सुरंगों तक पहुँचने के छोटे-मोटे तंग रास्तों को तबाह कर दिया था। किसी तरह, रस्सियों से लटक-लटक कर, थोड़े से सैनिक वहाँ पहुँच गए। उन्हें पता था कि वे रस्सियों से घटनास्थल तक नीचे तो उतर सकते थे, परन्तु ऊपर नहीं चढ़ सकते थे। अतः विशेष जांबाज कमांडों (commandos) को उस अभियान (mission) के लिए चयनित किया गया था। फिर भयानक युद्ध प्रारम्भ हुआ। क्योंकि शत्रु वहाँ पर पहले से ही मोर्चा संभाले हुए थे, अतः उन्होंने शीघ्र ही सैनिकों को मारकर, उनकी लाशों के ढेर बिछा दिए। उससे वहाँ की अधिकाँश भूमि लाल रंग से रंगी हुई प्रतीत हो रही थी। उससे उन सुरंगों में, कई स्थानों पर तो ऐसा लग रहा था कि जमीनी लोहे की अत्यधिक मात्रा वाला लाल पानी, चश्मे के रूप में फूट पड़ा था। देहदेश से सैनिकों की आपूर्ति अत्यधिक रूप से बढ़ गई थी। परन्तु वे संघर्ष क्षेत्र की विकट व प्रतिकूल परिस्थितियों को अधिक देर तक सहन नहीं कर पा रहे थे, जबकि बीहड़ों के अभ्यस्त शत्रु उन्हें लगातार धूल चटाते ही जा रहे थे। सैनिक वहाँ पर इसलिए भी खुलकर नहीं लड़ पा रहे थे, क्योंकि चारों ओर अपने साथियों की लाशें देखकर वे भयभीत व हतोत्साहित जैसे हो गए थे। साथ में, खुलकर गोलियां (bullets) चलाने से, ज़िंदा बचे हुए सैनिकों के आहत होने का डर भी उनको सता रहा था। वे उनमें से बचे हुए सैनिकों को, चिकित्सा के लिए ले जाने का भी प्रयास कर रहे थे, परन्तु सफल नहीं हो पा रहे थे, और उनको बचाने के चक्कर में खुद ही मारे जा रहे थे। जब राजा को लगा कि युद्ध के कारण देहदेश के संसाधन बहुत तेजी से क्षीण हो रहे थे, और वे शत्रु, राजमार्ग के उस अतिमहत्त्वपूर्ण भाग को पूर्णतया तबाह करने पर ही तुले हुए थे, तब राजा को अपने मंत्रियों की आपातकालीन बैठक बुलानी पड़ी। निर्णय लिया गया कि शत्रुओं पर हवाई हमला किया जाए। फिर वायुसेना को उस मिशन/अभियान की कमान सौंपी गई। देखते ही देखते बड़े-बड़े लड़ाकू विमानों ने वहाँ पर बम बरसाने शुरु कर दिए। परन्तु वे बम शत्रुओं तक पहुँच ही नहीं पा रहे थे, क्योंकि वे लम्बी सुरंगों की गहराइयों में छिपे हुए थे। वे आसपास के क्षेत्रों को तीव्रता से लूट कर, अपनी सुरंगों के अन्दर सुरक्षित होकर छिप जाते थे। अंत में, चट्टानचूरक (daisycutter bom) बमों के प्रयोग पर राजसभा में आम सहमति बनती है। फिर बम गिरा कर चट्टानों को तोड़ा जाता है, जिससे सुरंगें खुल जाती हैं। उससे उन शत्रुओं तक अस्त्र-शस्त्रों की मार भी पहुँच जाती है। उससे असंख्य शत्रु मारे जाते हैं, और असंख्य शत्रु मिट्टी-मलबे के बीच में छिप कर भाग जाते हैं। फिर उन टूटी-फूटी सुरंगों से उन शत्रुओं की लाशों को और उनकी गंदगियों को बाहर निकालकर, बड़े-बड़े ट्रकों में भर

दिया जाता है, और देहदेश के बाहर के बीहड़ों में उड़ेल दिया जाता है, क्योंकि देहदेश में रहकर वे गंदगियाँ आम लोगों को व्यथित व उद्वेलित कर सकती हैं। फिर मुरम्मत करके, डंगे को पूर्ववत ही तैयार कर लिया जाता है, ताकि उसके ऊपर बने हुए मुख्य राजद्वार के साथ, प्रारम्भिक राजमार्ग भी स्थिर व जोखिम से रहित हो जाए। फिर राजा भी उससे सम्बंधित भय व चिंता को छोड़कर, मालगाड़ियों की आवाजाही पुनः चालू करवा देता है। धीरे-धीरे देहदेश की अर्थव्यवस्था सुधरती हुई, पुनः पटरी पर लौट आती है।

विकसित देहदेश बहुत चतुर होते हैं। वे अपने द्वारा बनवाए गए नए देश पर भी विश्वास नहीं करते। उन्हें यह डर होता है कि नया देहदेश तरक्की करके उनका अनुसरण नहीं करेगा, और न ही उनके मार्गदर्शन के अंतर्गत रहना चाहेगा। इसलिए वे भविष्य की ऐसी संभावना को ही मिटा देना चाहते हैं। वास्तव में जब तक देहदेश नया-नया व संसाधन-विहीन होता है, तभी तक वह विकसित देशों के आश्रित होकर रहता है। इसलिए उसे उनकी सभी शर्तें माननी पड़ती हैं। यदि वह शर्तें नहीं मानता है, तो वे उससे बलपूर्वक मनवाते हैं, जिसका वह प्रतिकार करने की सामर्थ्य नहीं रखता है। ऐसी ही एक घटना लेखक ने भी देखी थी। बहुत सारे विकसित देशों के राष्ट्राध्यक्ष अपने गगनगामी व सर्वसुविधासंपन्न यानों में सवार होकर, एक नए देश के राजा से मिलने के लिए, उस नए देश में इकट्ठे हुए थे। नए राजा ने भी उनका भरपूर स्वागत किया, जिससे सभी राजा अत्यंत प्रफुल्लित हो गए। फिर गोलमेज (round table) बैठक हुई। वे बड़े प्यार व सम्मान के साथ नए राजा के सामने अपनी कूटनीतिक चिंता प्रकट कर रहे थे। नया राजा उनको बार-बार आश्वासन दे रहा था, और अपने विदेशमंत्री के साथ-साथ विदेश-सचिवों के माध्यम से भी आश्वासन दिला रहा था कि उनका राष्ट्र कभी भी कोई ऐसा-वैसा कदम नहीं उठाएगा, जिससे अन्य राष्ट्रों को, विशेषकर उन विकसित राष्ट्रों को परेशानी हो। मित्रराष्ट्र उसकी उन बातों पर विश्वास ही नहीं कर रहे थे, क्योंकि वे पहले भी कई बार झूठे वादों के झांसों में आ चुके थे। जब किसी तरह से बात नहीं बनी, तो उन्होंने नए राजा को बलपूर्वक बंदी बना लिया, और उसके पूरे देश को अपने कब्जे में ले लिया। फिर उन्होंने उसके परमाणु-संयंत्रों के बारे में खोजबीन करवाई और उनकी वास्तविक स्थिति का पता लगवाया। फिर उन्होंने अपने देशों से उनके ऊपर मिसाईल-हमले (missile attacks) करवाए। उससे उन परमाणु-प्रतिष्ठानों की आधारशिलाएं भी पूरी तरह से ध्वस्त हो गईं। वहाँ पर काम कर रहे बहुत से परमाणु वैज्ञानिक, परमाणु विशेषज्ञ व अनेक कर्मचारी भी उस हमले में मारे गए। जब विकसित देशों को पूरा विश्वास हो गया कि वहाँ

पर कोई भी ऐसी-वैसी वस्तुएँ व ऐसे-वैसे व्यक्ति शेष नहीं बचे थे, जिनसे भविष्य में परमाणु-अस्त्र विकसित किए जाकर, उनसे उन पर हमला किया जाता, तब उन्होंने अपने वहां से हमले बंद करवा दिए। उन्होंने बंदी राजा को भी आजाद कर दिया, और फिर वे उसके देहदेश के निर्माण में उसकी भरपूर सहायता करने लगे। वे प्रभावित क्षेत्र में राहत व पुनर्वास के कार्यों में लग गए, और वहाँ पर ऊंचे-ऊंचे भवन, खेल के मैदान, पाठशालाएं व अन्य प्रतिष्ठान पूर्ववत ही पुनर्स्थापित कर दिए गए। सड़कें उन्होंने पहले की तरह ही बिछा दीं। जल-आपूर्ति व जल-निकासी से सम्बंधित प्रणालियों की भी उन्होंने पूर्ववत पुनर्स्थापना कर दी। वे उस क्षेत्र को निरंतर सुरक्षा भी प्रदान करते रहे, ताकि अस्थायी अस्थिरता का लाभ उठा कर वहाँ पर उग्रवादी न पनप पाते, जो नए देहदेश के लिए खतरा पैदा कर सकते थे। जब उस देश की हालत स्थिर हो गई, और कहीं पर भी कोई संदेह नहीं रहा, तब सभी राष्ट्राध्यक्ष अपने-अपने देशों को वापिस लौट गए। लेखक ने देखा कि भविष्य में नया राष्ट्र कभी भी परमाणु-क्षमता को प्राप्त नहीं कर सका, और सदैव उन विकसित राष्ट्रों का हितैषी बन कर ही रहा।

कई बार बड़ा देश छोटे देश की अत्यधिक सहायता करता है। वह उसे विकसित करने की हरसंभव कोशिश करता है। एक बार लेखक ने देखा कि एक बड़े राष्ट्राध्यक्ष ने किसी एक गरीबदेश के राजा को अपना अन्तरंग मित्र बना लिया। उससे वह छोटा राष्ट्राध्यक्ष अत्यंत प्रफुल्लित रहने लगा। उसको प्रफुल्लित देखकर, उसके देश के सभी लोग भी अत्यंत प्रफुल्लित हो गए, और पहले से भी दोगुने उत्साह से काम करने लग गए। उससे वह गरीब देहदेश बहुत प्रगति करने लगा। बड़ा राजा छोटे देहदेश की अनेक प्रकार से सहायता भी करने लगा। उससे गरीब देहदेश में उतनी अधिक सामर्थ्य व शक्ति आ गई थी कि वह एक नए देश का निर्माण व विकास करने में भी सक्षम हो गया था। यद्यपि बड़ा राष्ट्राध्यक्ष बुद्धिमान था, और उसे पता था कि वैसा होने से गरीब देश को हानि होने की संभावना थी। उसका विकास रुक सकता था, और यहाँ तक कि उसका पतन भी हो सकता था। उसके देश के संसाधन, बीहड़ क्षेत्रों में नए देश के निर्माण व विकास के लिए खर्च हो जाते, जिससे उसके अपने देश के लोग विद्रोह कर देते। मौक़ा देखकर, बाहरी शत्रु भी हमला कर सकते थे। पूरे देश में अशिक्षा, बेरोजगारी, गरीबी व बीमारियाँ फैल सकती थीं। अतः बड़े राष्ट्राध्यक्ष ने छोटे राष्ट्राध्यक्ष को इस प्रकार का दुस्साहसिक कदम उठाने से रोक लिया। इस प्रकार से वे दोनों राष्ट्राध्यक्ष लम्बे समय तक एक-दूसरे के लिए जीते रहे, और साथ मिलकर, अपने दोनों देहदेशों को भी विकास की पटरियों पर आगे दौड़ाते रहे। एक बार किन्हीं दो राष्ट्राध्यक्षों की

आपसी मित्रता के बीच में, उनके अपने-अपने निजी स्वार्थों के कारण खलल पड़ गया था। बड़े राजा ने षड्यंत्रपूर्वक या मूढ़तावश, नए निर्माण को हरी झंडी दे दी थी, और छोटे राजा ने भी मूढ़तावश उसकी योजना को अंगीकार कर लिया था। बीहड़ क्षेत्रों में विस्तारित करने के लिए, नए देश का विकास प्रारंभ कर दिया गया था। उसके लिए, मूलदेश के संसाधनों का भरपूर दोहन किया जा रहा था। कुछ समय बाद, उससे निकट भविष्य में आने वाली समस्याओं का पूर्वाभास बड़े राजा को हो गया। उसने वह बात छोटे राजा को समझाई, और वह उसकी बात को समझ कर, उसकी बनाई हुई योजना पर अमल करने के लिए तैयार भी हो गया, यद्यपि कई बार छोटा राजा तैयार नहीं भी होता। योजना के अनुसार, छोटे राजा ने विकसित हो रहे नए देश की मुट्ठी भर जनता को बहुत समझाया कि वे अपने मूलदेश में वापिस लौट आएं, परन्तु वे अपने लिए नए देश के निर्माण की जिद पर अड़े रहे, और राजा की बात को उन्होंने सिरे से खारिज कर दिया। अलगाववादी-नेताओं के साथ बैठकों के कई दौर चले, परन्तु फिर भी वे नहीं माने। यहाँ तक कि उस राजा के अपने देश के मंत्री व अधिकारी भी कटौती (comission) व रिश्वत आदि खाकर देशद्रोही बन गए थे, और नए देश के पक्ष में हो गए थे। राजा ने फिर अपने मुख्यमंत्री को अपने पक्ष में लिया, और विदेशी सहायता प्राप्त करने के लिए, दोनों ही विदेश-दौरे पर चल दिए। उनके पास विद्रोहियों को कुचलने के अतिरिक्त कोई विकल्प शेष नहीं रह गया था। उन्होंने विदेशों के साथ बहुत से व्यापारिक समझौते किए, जिसके तहत उन्हें उनसे भारी मात्रा में विदेशी हथियार भी खरीदने थे। फिर मुद्राभण्डार (treasury) से धन निकलवा कर, उन्होंने वह धन अपने विदेशव्यापारविभाग को सौंप दिया, और कार्य को अंजाम तक पहुंचाने की सारी जिम्मेदारी भी उसे ही दे दी। वे दोनों तो केवल मार्गदर्शन व निरीक्षण करने वाले ही बने। शीघ्र ही हथियारों का एक बड़ा जखीरा हासिल हो गया। उन हथियारों से डरकर, देहदेश के बड़े-बड़े अधिकारी भी विद्रोह को छोड़ कर, राजा के समक्ष झुक गए। उससे संसाधन उपलब्ध न होने से, विद्रोही लोग स्वयं ही क्षीण हो गए। राजा मोहवश व दयावश उनको मरवाना नहीं चाहता था, इसलिए उसने उन्हें, उनके मुखिया के साथ ज़िंदा पकड़वा कर, देहदेश के बाहर के बीहड़ों में छुड़वा दिया। यद्यपि वे वहाँ पर प्रतिकूल वातावरण के कारण स्वयं ही नष्ट हो गए थे।

वैसे कई बार उस विकासशील देश के मंत्री व अधिकारी डरते भी नहीं, और नए देश के निर्माण में डटे रहते हैं, विशेषतः नए देश के विकास के प्रारम्भ में, जब उनमें कुछ नया करने-गुजरने का जुनूनी शौक विद्यमान होता है। ऐसे में राजा को थक-हार कर उनसे समझौता करना

पड़ता है, या उनके हठ के आगे झुकना पड़ता है, या देहदेश को जोखिम में डालकर, प्रभावितक्षेत्र में सीधे ही सेना भिजवा कर, विद्रोहियों से सीधा व आमने सामने का युद्ध करना पड़ता है। इससे कई बार सफलता भी मिल जाती है, और कई बार देहदेश की स्वयं की सत्ता भी डावांडोल हो जाती है। अंतिम विकल्प को आजमाए जाने पर, मुखिया सहित सारे विद्रोही मारे जाते हैं। उस हमले में, नए देश के विकसित हो रहे संसाधन भी हवाई हमलों से नकारा हो जाते हैं। यदि शीघ्रता से नए देश के उन निष्प्राण संसाधनों को मूलदेश से दूर न फेंका जाए, तो उन विद्रोहियों के द्वारा इकट्ठे किए गए संसाधनों को लूटने के लिए, अनेक प्रकार के उग्रपंथी वहाँ पर धावा बोल देते हैं। वे उग्रपंथी उसको अपना देश घोषित कर देते हैं। उनसे निपटना मूलदेश के लिए बहुत कठिन हो जाता है। यदि वे धार्मिक कट्टरपंथी अधिक समय तक अन्दर रहें, तो पूरे देश में युद्ध व विद्रोह फैल सकता है। अतः प्रयास किया जाता है कि उन्हें शीघ्रातिशीघ्र मारा जाए, या देश से बाहर किया जाए। वे शत्रु नए देश के संसाधनों व विविध संरचनाओं में इस तरह से छिप जाते हैं कि मूलदेश को नजर ही नहीं आते। वह बचे-खुचे नए देश को बमबारी करके ध्वस्त भी नहीं कर सकता, क्योंकि उससे आसपास के क्षेत्रों के मूलदेशनिवासी हताहत हो सकते हैं, जिससे मूलदेश में विद्रोह की आग फैल सकती है। अतः उसे नए देश के जीर्ण-शीर्ण संसाधनों को अपने देश से दूर ले जाने के अतिरिक्त कोई उपाय नहीं सूझता। वैसे भी उग्रपंथियों के उत्पात से, आसपास के लोग बहुत दुखी व परेशान हुए होते हैं। मुख्य समस्या तब आती है, जब उस बीहड़ से बाहर जाने वाला एकमात्र चट्टानी रास्ता तंग या बंद होता है। हो सकता है कि वह उग्रपंथियों की शरारत हो, ताकि उनके द्वारा कब्जाए गए विभिन्न संसाधन, बाहर न निकाले जा सकें। बड़े-बड़े यान्त्रिकहस्त-यंत्र (jcb machines) विदेशों से मंगवाए जाते हैं। कुछ सुरक्षित व हल्के प्रकार की बारूदी सुरंगें भी मंगवाई जाती हैं। उन मार्ग-स्थित चट्टानों को तोड़ने के लिए बहुत अधिक ऊर्जा खर्च करनी पड़ती है। कई बार तो मार्ग के बीच में बहुत ही सख्त, हीरे या मूंगे की चट्टानें आ जाती हैं, जिन्हें तोड़ना लगभग असंभव सा ही होता है। कई बार पर्यावरणप्रेमी-मूलदेशनिवासी उन मशीनों व बारूदी सुरंगों का विरोध करने के लिए वहाँ पर इकट्ठे होकर, विरोध प्रदर्शन करने लग जाते हैं, और काम नहीं करने देते। यह देख कर राजा दुखी हो जाता है, और कई बार काम को रुकवा भी देता है। विद्रोहियों के शाँत होने पर, वह काम को फिर से चालु करवा देता है। ऐसी विपरीत अवस्थाओं में, नए देश के साजो-सामान को तंग रास्ते से ही, यांत्रिक बल लगा कर अन्दर से बाहर को धकेलना पड़ता है, या बाहर से खींचना पड़ता है, या दोनों ओर से बल का प्रयोग किया जाता है।

इसके असफल होने पर, पूर्वोक्तानुसार नया निकासी-द्वार भी बनाना पड़ जाता है। ऐसी परिस्थितियों में, कई बार बहुत समय भी लग जाता है, जिससे देशप्रेमियों के अन्दर बढ़ते असंतोष के कारण, राजा भी तीव्र वेदना का अनुभव करने लगता है। बहुत से शत्रु, जो साजो-सामान में छिपे होते हैं, वे भी सामान के साथ ही बाहर हो जाते हैं। जो कुछ अन्दर बच जाते हैं, उन्हें समाप्त करने के लिए एक विशेष सफाई-अभियान (cleaning operation) चलाया जाता है। उन शत्रुओं को विविध अस्त्रों व शस्त्रों से, ढूंढ-ढूंढ कर मारा जाता है। इस तरह से, कई बार वह देहदेश पुनः पटरी पर लौट भी जाता है।

एक विशेष जनजाति के आक्रमणकारी तो चालाकी की हद ही तोड़ देते हैं। एक बार लेखक ने देखा कि बड़े ही सुनियोजित ढंग के साथ उन चालाक शत्रुओं ने देहदेश के विदेशविभाग व मुख्यायातद्वार, दोनों के ऊपर एकसाथ आक्रमण कर दिया था। उन्हें पता था कि यदि उन्होंने देहदेश के केवल विदेशविभाग को ही पंगु किया, तो उसके मित्रदेश उसे मानवता के आधार पर सहायता पहुंचाएंगे, जिससे वे उसको शीघ्रता से लूट कर बर्बाद नहीं कर पाएंगे। अतः उन शत्रुओं की दूसरी पलटन ने देश के मुख्यायातद्वार व उससे जुड़े हुए मुख्य राष्ट्रीय राजमार्ग के ऊपर भी उसी समय हमला बोल दिया, जिस समय उनकी पहली व मुख्य पलटन ने विदेशविभाग के ऊपर आक्रमण किया था। वास्तव में, वे शत्रु अधिक शक्तिशाली नहीं थे, और अधिक समय तक देहसैनिकों के सामने, युद्ध में टिके रहने की क्षमता नहीं रखते थे। इसीलिए उन्होंने छद्मयुद्ध का सहारा लेते हुए, उन दो नाजुक स्थानों पर एकसाथ आक्रमण करके, देहदेश को चकमा देने की पूरी कोशिश की, ताकि जल्दी से जल्दी युद्ध को अपने पक्ष में करते हुए, उसे अंजाम तक पहुंचा सकते। जो देश बहुत ही कमजोर होते हैं, वे तो कई बार उनके आगे घुटने भी टेक देते हैं। फिर लेखक ने देखा कि देहदेश का विदेशविभाग ठप हो गया था। वह विदेशों के साथ कोई भी व्यापारिक समझौता नहीं कर पा रहा था। वह न तो वस्तु-सेवाओं का निर्यात कर पा रहा था, और न ही उनके आयात के लिए आवश्यक विदेशीमुद्रा को विदेशों के प्रति प्रेषित कर पा रहा था। ऐसे में स्वाभाविक ही था कि उसे कुछ भी विदेशी सहायता प्राप्त नहीं हो सकती थी। परन्तु कुछ उदारहृदय व दयावान विदेशी राजाओं से उसकी दयनीय हालत देखी नहीं गई। उन्होंने इकट्ठे होकर राशि (fund) एकत्रित की, व उससे बहुत सा साजो-सामान खरीदवा कर, उसे प्रभावित देश के मुख्य राजद्वार के निकट रखवा दिया। परन्तु उस राजद्वार के व साथ लगते राजमार्ग के गंभीर रूप से क्षतिग्रस्त होने के कारण, वहाँ पर तैनात देहपुरुष उस सामान को अपने देश के

अन्दर नहीं ले जा सके। उस समय देहदेश की सारी व्यवस्था भंडारित करके रखी गई वस्तुओं से चल रही थी। उससे भंडारघर तेजी से क्षीण होते जा रहे थे। फिर लेखक क्या देखता है कि देहदेश के धैर्य के आगे शत्रु हार रहे थे। उनमें से बहुत से तो भाग गए, व बहुत से, सैनिकों के द्वारा मार दिए गए। फिर अभियंता व मिस्त्री लोग वहाँ पहुँच गए, तथा उन्होंने राजद्वार व राजमार्ग को शीघ्र ही दुरस्त कर दिया। विदेशविभाग की हवाईपट्टियों (air strips) पर जहाँ-जहाँ भी बमबारी (bombardment) हुई थी, वहाँ-वहाँ पर ही नए जोड़/पैच (patch) लगा दिए गए, जिससे हवाई सेवा पुनः बहाल हो गई। विदेशी समझौतों का दौर फिर से प्रारम्भ हो गया, जिनसे विदेशों के साथ वस्तु-सेवाओं (commodity and service) व मुद्रा (currency) का आदान-प्रदान/विनिमय (exchange) फिर से प्रारंभ हो गया। लेखक ने यह भी देखा कि अविकसित व नए-नए देशों के अन्दर, वे शत्रु अत्यंत ही उग्र व प्रभावशाली हो जाते थे। उनमें तो वे उनके यातायात-मुख्यालय तक पहुँच जाते थे, और वहाँ पर जम कर तोड़-फोड़ मचाते थे। अधिकाँश देश तो वैसे हमलों से निपट ही नहीं पाते थे।

एक अन्य शत्रुजाति तो उपरोक्त शत्रुओं से भी बढ़ कर होती है। लेखक ने देखा कि उन शत्रुओं ने देहदेश के मुख्य राजद्वार के साथ-साथ, प्रारम्भिक राजमार्ग; देश की हवा- वितरण प्रणाली (gas distribution system) व कृषिविभाग, इन तीनों के ऊपर एकसाथ आक्रमण कर दिया था। उन्होंने विदेशविभाग को छोड़ दिया था, क्योंकि उन अति चतुर शत्रुओं को पता था कि फिर अंतर्राष्ट्रीय समझौतों व क्रियाकलापों से, आक्रमित देहदेश को कोई लाभ प्राप्त नहीं हो सकता था, यदि वे उसके लिए विदेशों से की जा रही आपूर्ति को ही बंद करवा देते। उन्हें यह भी पता था कि बिना आयात के भी, देहदेश में भंडारित किए गए विविध पदार्थों से, देहपुरुष कुछ समय तक जीवित रह सकते थे, परन्तु हवा (oxygen) के बिना तो वे शीघ्र ही मर जाते, क्योंकि उस देश में हवा को भंडारित करके रखने की कोई भी उपयुक्त व्यवस्था नहीं थी। उन शत्रुओं ने हवा से भरे हुए सिलिंडरों (gas-cylinders) को ढोने वाली गाड़ियों के चालकों को मारकर, उनकी गाड़ियों को नष्ट कर दिया। वे अनेक प्रकार के अत्याधुनिक अस्त्रों का प्रयोग कर रहे थे। उन्होंने हवाई-बमबारी करके, हवा-वितरण प्रणाली के मुख्यालय को अत्यधिक रूप से क्षतिग्रस्त कर दिया, तथा आसपास की सड़कों को भी उड़ा दिया। हवा वितरण करने वाले पाईपों (gas distribution pipes) को भी जगह-जगह पर तोड़-मरोड़ दिया, और उनके अन्दर मिट्टी-पत्थर व कूड़ा-कचरा आदि भरकर, उनको स्थान-स्थान पर, पूर्णरूप से या आँशिक रूप से अवरुद्ध कर दिया। उससे

समस्त देहपुरुषों का दम घुटा जा रहा था। इसी तरह से, उनकी तीसरी पलटन (unit) ने किसानों को निशाना बनाना शुरु कर दिया। वे किसानों की पैदावार को बड़े पैमाने पर नष्ट करते जा रहे थे। उन्होंने फसलों से लहलहाते हुए अनगिनत खेतों को आग के हवाले कर दिया। जो भी किसान उन्हें नजर आ रहे थे, वे उन्हें अपना निशाना बनाते जा रहे थे। वास्तव में वे किसानों के ऊपर बहुत क्रोधित होकर आगबबुला हो रहे थे, क्योंकि वे किसान अधिक से अधिक अन्न उगा कर, उसे कृषिविभाग के माध्यम से, हवा-आपूर्ति करने वाले विभाग को उपलब्ध करवा रहे थे, जिससे उन्होंने अधिक तेजी से काम करते हुए, पूरे देश में हवा की निर्बाध आपूर्ति बना कर रखी हुई थी। उन्होंने जल को भंडारित करके रखने वाले बड़े-बड़े बांधों को विस्फोटों से उड़ा दिया था, ताकि किसान लोग खेती न कर सकते। उससे पेयजल की समस्या भी उत्पन्न हो गई थी। प्रत्येक प्रभावित स्थान पर मजदूरों, मिस्त्रियों व अभियंताओं का जमावड़ा लगा हुआ था, परन्तु वे भी भोजन-पानी व हवा की कमी से जूझते हुए, कुछ अधिक नहीं कर पा रहे थे। थोड़ा-बहुत जो कुछ भी वे मुरम्मत (repair) कर रहे थे, उन्हें उग्रपंथी तुरंत तोड़ रहे थे। सैनिक लोग भी इन्हीं समस्याओं से ग्रस्त होने के कारण, उन शत्रुओं का मुकाबला खुल कर नहीं कर पा रहे थे। वे शत्रु तो बीहड़ों में रहने के अभ्यस्त थे, और कम हवा में भी गुजारा चला लेने में पूर्णतः सक्षम थे। उनमें से बहुत से शत्रु तो रहस्यमयी निर्वात-विद्या (एक विशेष प्रकार का योग) में भी दक्ष थे, जिससे वे बिना हवा के भी जिन्दा रह सकते थे। वे तो उन सभी चीजों को खा लेते थे, जो कुछ उन्हें मिल जाता था, यहाँ तक कि देहपुरुषों के मरे हुए शरीरों को भी कच्चा या पका कर खा जाते थे। परन्तु सभी देहसैनिकों का अधिकाँश भोजन शाकाहार-श्रेणी का होता था, जो उस समय कम ही उपलब्ध हो रहा था। बड़ी समस्या तो तब आती है, जब उन अजनबी शत्रुओं के पीछे-पीछे, देश के स्थानीय व जाने-पहचाने शत्रु भी लूट में हिस्सेदारी प्राप्त करने के लिए वहाँ पहुँच जाते हैं। ऐसा ही कुछ वहाँ पर, लेखक को भी दिखाई दिया था। पहले तो वे स्थानीय शत्रु शाँत रहते थे, और देहदेश में, बिना नुकसान पहुंचाए अक्सर आते-जाते रहते थे। इसीलिए देहदेश को कभी भी उनके ऊपर संदेह नहीं हुआ था, परन्तु अब वे अपना असली रंग दिखाने लग गए थे। वैसे यह बात भी सत्य है कि मित्र व शत्रु की पहचान विपत्ति में ही होती है। उन स्थानीय मौकापरस्तों पर विश्वास करने के कारण, देहदेश ने कभी भी उनके द्वारा हमला किए जाने के बारे में नहीं सोचा था। इस वजह से, देहदेश ने उनके द्वारा संभावित हमले से निपटने के लिए, कोई भी ठोस कार्ययोजना नहीं बना रखी थी, जिससे उन स्थानीय शत्रुओं से निपटना, मूलशत्रुओं से भी कठिन हो रहा था। मूलशत्रु अपरिचित थे, व

दूरदराज के क्षेत्रों से सम्बंधित थे। उनकी संस्कृति, उनकी भाषा, उनका रहन-सहन आदि सभी कुछ देहपुरुषों से पूर्णतया भिन्न था। इसीलिए देहदेश ने कभी भी उन पर विश्वास नहीं किया था, जिससे उसने उनके द्वारा संभावित घुसपैठ के विरुद्ध विशेष कार्ययोजना, पहले से ही बना कर रखी हुई थी। साथ में, कभी-कभार देहदेश में घुसने वाले उन विदेशी शत्रुओं को देहसैनिक गिरफ्तार भी कर लेते थे, और उनका सख्त परिचय/ रिमांड (remand) लेते हुए, उनसे उनकी युद्धनीतियों व अन्य गुप्त सूचनाओं को उगलवा लेते थे। इन्हीं पूर्व की तैयारियों की सहायता से, देहदेश ने शीघ्र ही मूलशत्रुओं से घुटने टिकवा दिए। इसके विपरीत, स्थानीय शत्रु; जो अपनी भाषा, संस्कृति व रहन-सहन के मामले में, देहपुरुषों से बहुत मेल खाते थे, वे बड़ी सिरदर्दी पैदा कर रहे थे। देहदेश ने उन्हें अपना समझ कर, उनके ऊपर विश्वास करते हुए, जैसे साँप को ही दूध पिला दिया था। फिर लेखक ने देखा कि जब पूरा देश उनके आगे जवाब देने लगा; तब राजा अपने देश से सारी आशाओं को छोड़कर, अपने मित्र राजा से सहायता प्राप्त करने के लिए चल पड़ा। उससे उसका देश तो जैसे-तैसे करके पराजित होने से बच गया, परन्तु कई बार वैसे विपत्तिग्रस्त देश को देखकर, उसके मित्र भी उससे मुंह मोड़ लेते हैं, और कई बार तो दोनों या बहुत सारे मित्र राजा, आपस में मिल कर भी उनका मुकाबला नहीं कर पाते। इससे पूरा देश पराजित होकर उन स्थानीय शत्रुओं के कब्जे में चला जाता है, जो विश्वास का गला घोंटने में कोई कोर-कसर बाकी नहीं छोड़ते।

देहदेश में पार्थमन की तरह ही, थारमन नाम का अधिकारी होता है, जो अत्यंत प्रभावशाली होता है। वास्तव में वह पार्थमन का ही एक नजदीकी रिश्तेदार होता है। उसका स्थायी निवासस्थान केंद्रीय मुख्यालय के थोड़ा सा नीचे होता है, जहाँ पर तंग क्षेत्र की एक उथली सी घाटी होती है। वह दो तरफ से खुली हुई होती है; जिससे वहाँ पर निरंतर ही तेज, शुद्ध, ठंडी व प्राण से भरपूर हवाएँ चलती रहती हैं। वहाँ पर एक शिव-मंदिर भी होता है, जिसमें मधुर स्वरों में वाद्य-कीर्तन निरंतर चलता रहता है। थारमन एक प्रकार से देहदेश की समानांतर सरकार (parallal government) ही होती है। उसका प्रभाव प्रत्येक देहपुरुष पर होता है, और सभी देहपुरुष उसकी बात मानते हैं। वास्तव में, वह देहदेश का आदरणीय धार्मिक गुरु ही होता है, जिसके ज्ञानोपदेशों को सभी लोग निरंतर सुनते रहते हैं। जो लोग उसकी प्रत्यक्ष सभाओं में नहीं जा पाते; वे टीवी, रेडियो, इंटरनेट आदि के माध्यम से उन्हें सुनते रहते हैं। यदि वे गुरुदेव यह कहें कि कर्मयोग ज्ञानयोग से श्रेष्ठ है, तो सभी लोग पूरे जोर-शोर से कर्मयोग का ही आचरण करने

लगते हैं। वे अपने गुरु के वचनों के ऊपर इतनी अधिक निष्ठा रखते हैं कि उन्हें फिर कर्मयोग के अतिरिक्त सभी कुछ व्यर्थ लगने लगता है। यद्यपि वैसा आत्यंतिक कर्मयोग आध्यात्मिक उन्नति के लिए तो लाभकारी होता है, परन्तु भौतिक रूप से वह असंतुलन उत्पन्न कर देता है। इससे लोग कर्मोन्मादी बन जाते हैं, और एक पल के लिए भी आराम से नहीं बैठते। इससे कई बार तो वे अनजाने में ही, मानवता का भी उल्लंघन कर बैठते हैं। वे हर समय बेचैन रहते हैं, और निरंतर ही खाते, पीते व काम करते रहते हैं। प्रेम, शान्ति, चैन व सुख आदि गुण तो केवल उनके मन में ही विद्यमान रहते हैं, बाहर तो कम ही नजर आते हैं, क्योंकि किसी के पास किसी से भी, बिना काम के बात करने का न तो समय होता है, और न ही इच्छाबल। यह स्थिति असंतुलित होती है, क्योंकि इससे देहदेश के अन्दर दुर्घटनाओं, बिमारियों, व विभिन्न विशिष्टतासंपन्न कार्यों में गुणवत्ताहीनता की संभावना बहुत बढ़ जाती है। इससे लोगों में तनावजनित रोग, जैसे कि हृदयाघात व उच्च रक्तचाप आदि भी बढ़ जाते हैं। रजोगुण के बढ़ने से देहपुरुषों में क्रोध, चिड़चिड़ापन, पागलपन व मानसिक भ्रम आदि दोष उत्पन्न हो जाते हैं। एक बार लेखक ने देखा कि वे गुरुदेव देहदेश में हर स्थान पर ज्ञानयोग का ही प्रचार-प्रसार कर रहे थे। उससे वहाँ के सभी लोगों ने अपना काम करना लगभग छोड़ ही दिया था, और वे निरंतर योगसाधना में ही लगे रहते थे। अपने शरीर को कायम रखने के लिए वे कुछ आसन भी कर लेते थे। उससे उस देश की अर्थव्यवस्था बहुत सुस्त हो गई थी। देश के बाहरी शत्रु व अंदरूनी विद्रोही भी सिर पर चढ़े जा रहे थे। खेतों की पैदावार बहुत घट गई थी। औद्योगिक उत्पादों का निर्माण भी अपने निम्नतम स्तर पर पहुँच गया था। सभी देहपुरुष साधु-संन्यासियों की तरह वैरागी जैसे बन गए थे, और कम से कम संसाधनों से ही अपना गुजारा चला रहे थे। उस असंतुलित देश के मित्रदेश उसे मदद पहुँचाना चाह रहे थे, परन्तु वह देश उस मदद को भी ठुकरा रहा था, क्योंकि अपने देशवासियों की ओर से मांग न होने के कारण, उसे किसी चीज की आवश्यकता ही महसूस नहीं हो रही थी। वह स्थिति भी असंतुलित ही थी। वास्तव में ऐसे असंतुलित उपदेशों वाले प्रवचन थारमन तब करता है, जब राजा उसका विशेष ध्यान नहीं रख पाता, जिससे वह अपने आप को अपमानित महसूस करता है। साथ में, उसे अपने पास उपलब्ध संसाधनों की भी कमी महसूस होती है। उसे उचित पोषण, उचित आवास व अन्य छोटी-मोटी सुविधाओं में छोटी-मोटी त्रुटियाँ भी बहुत अखरती हैं, क्योंकि वास्तव में वे एक प्रकार से सर्वसम्मानित राष्ट्रपुरोहित ही होते हैं, और अपना तनिक सा अपमान भी सहन नहीं कर सकते। एक बार जब वह बिगड़ जाता है, तो उसे मनाना बहुत कठिन या यूं

कहो कि असंभव-सदृश ही हो जाता है, क्योंकि उसमें गुरु दुर्वासा जैसा हठ व क्रोध विद्यमान होता है। अतः उसके कोप से तभी बचा जा सकता है, यदि सदैव उसका संपूर्ण ध्यान रखते हुए, उसके अपमान की संभावना ही उत्पन्न न होने दी जाए। उसे दूध-चावल से बनी हुई खीर बहुत पसंद होती है, जिसकी कमी तो उसे कभी भी महसूस नहीं होनी चाहिए। यद्यपि असंतुलित उपदेशों को थारमन दे रहा था, परन्तु वह भी तो अपने उन गुरु के उपदेश के अनुसार ही चल रहा था, जो मुख्यालय में विराजमान थे। इससे तो राष्ट्रगुरु वे ही सिद्ध हुए, परन्तु आम जनता तो थारमन को ही राष्ट्रगुरु मानती थी, क्योंकि उसी का जनता से सीधा संपर्क होता था। वास्तव में सभी आदेश, निर्देश व उपदेश मुख्यालय से ही शुरु होते हैं। इसका अर्थ है कि परमादेशक, परमनिर्देशक व परमगुरु लोग मुख्यालय में ही निवास करते हैं। कई मामलों के लिए तो, मुख्यालय-स्थित उन परमपुरुषों की भी, वरिष्ठता के अनुसार एक से अधिक स्तर व श्रेणियां होती हैं। फिर लेखक ने देखा कि स्थिति को संतुलित करने के लिए, उस देहदेश ने विदेशों से थारमन गुरुओं को अपने देश में आने का ससम्मान न्यौता भेजा। उनके आगमन पर राजा ने उनका बहुत स्वागत-सत्कार किया। सेवा से प्रसन्न होकर, उन थारमन गुरुओं ने कर्मयोग का उपदेश देना प्रारंभ कर दिया। उससे स्थिति संतुलित हो गई। फिर कर्मयोग व ज्ञानयोग पुनः एक-दूसरे को पुष्ट व पूरित कर रहे थे। उससे सभी देहपुरुष लौकिक सुख के साथ-साथ, आध्यात्मिक सुख का भी उपभोग करने लगे, जिससे उनके इहलोक व परलोक, दोनों एकसाथ सुधर गए, और वे पूर्ण संतुष्ट हो गए। देहदेश फिर से दिन दोगुनी और रात चौगुनी तरक्की करने लगा।

छोटे-मोटे मुख्यालय तो देहदेश में स्थान-स्थान पर बने होते हैं, परन्तु सभी विभागों के सबसे बड़े या केन्द्रीय मुख्यालय तो राजधानी में ही होते हैं। वह राजधानी उस पवित्र, दिव्य, शान्तिप्रद व आनंदमयी स्थान पर बनी होती है, जिसे सुमेरु पर्वत भी कहते हैं।

थारमन के पड़ौस में, कालीकट नाम का एक ईर्ष्यालु व्यक्ति भी रहता है, जो पूर्वोक्त पार्थमन के रुतबे से हमेशा जलता-भुनता रहता है। पार्थमन का गाँव उसके गाँव के निकट ही होता है, और दोनों आपस में दूर-पार की रिश्तेदारी का सम्बन्ध भी रखते हैं। इसलिए दोनों का कभी-कभार, समारोहों आदि में मिलना-जुलना होता रहता है। यह सत्य ही है कि ईर्ष्या भी मध्यम स्तर की जान-पहचान वालों से ही होती है, न तो अति निकट के परिवारजनों के साथ, और न ही अनजानों के साथ। कालीकट भी पार्थमन की तरह ही लोकश्रेष्ठ बनना चाहता है, परन्तु अधिकाँश लोग उसको पहचानते ही नहीं, क्योंकि उसमें प्रशंसा व चर्चा के योग्य कोई विशेष गुण, उन्हें

दृष्टिगोचर नहीं होते। वह गुणवान बनने का बहुत प्रयत्न करता है, परन्तु हर बार असफल हो जाता है। लोकप्रियता के प्रति उसकी महान आसक्ति ही उसको सस्ती लोकप्रियता को प्राप्त करने के लिए प्रेरित करती है। उसके लिए वह ऐसे हथकंडे अपनाने लग जाता है, जो पार्थमन के सद्कार्यों में विघ्न उत्पन्न करने लग जाते हैं। उससे उसे अनायास ही पार्थमन की लोकप्रियता का लाभ मिल जाता है, यद्यपि उसकी वह लोकप्रियता उसके नायक के रूप में नहीं, अपितु एक खलनायक के रूप में मिलती है। इसी तरह से, देहदेश के प्रशासकों के हाथ भी पार्थमन को नियंत्रित करने वाला, एक अचूक व अहिंसक हथियार अनायास ही लग जाता है। इससे पार्थमन निरंकुश व अतिवादी नहीं बन पाता। परन्तु पार्थमन की कमी से जूझते हुए देश में, कालीकट अत्यंत शक्तिशाली बन जाता है, और देश के लिए एक खतरा बन कर उभर आता है। इसलिए प्रशासकों को कालीकट के ऊपर, कुछ समय के लिए तब तक अस्थायी रूप से लगाम लगानी पड़ती है, जब तक कि पार्थमन का प्रभाव पूर्ववत नहीं हो जाता।

एक बार लेखक ने देखा कि कुछ सनकी किस्म के शत्रु, उस समय मुख्य राजद्वार से अन्दर घुस गए थे, जिस समय वहाँ के कुछ पहरेदार, कोई चोट आदि के लगने से घायल हो गए थे, और आसपास के लोग, सिपाही आदि उनकी देखभाल में व्यस्त थे। वे वहीँ पर झाड़ियों में छिप गए, और वहाँ के सारे तामझाम व वहाँ की सभी कार्यप्रणालियों का बारीकी से निरीक्षण करने लगे। जैसे ही शाम हुई, वैसे ही सभी कर्मचारी अपने-अपने कार्यालय बंद कर के, अपने-अपने घरों को चले गए। वहाँ पर थोड़े से ही रात्रि-चौकीदार (night watchman) रुके रहे, जो थोड़ी देर में ही आधी नींद में चले गए, और झपकियाँ लेने लगे। उससे शत्रुओं ने उन्हें आसानी से बंधक बना लिया। फिर उन कमजोर व बुद्धिहीन शत्रुओं ने देहदेश का व्यापार बाधित करने के लिए; एक बड़ी ही मूर्खतापूर्ण, हास्यपूर्ण व विचित्र योजना की रूपरेखा बनाई। उन्होंने प्रवेशद्वार के समीप बने हुए गति-अवरोधक (speed breaker) में तोड़-फोड़ शुरु कर दी। उन्होंने एक विशेष, मजबूत व चिपचिपे पदार्थ का प्रयोग करके, उस गति-अवरोधक को बहुत ऊंचा उठा दिया। जो चौकीदार उनके काम करने का वह तरीका देख रहे थे, उनके पेट हँस-हँस कर फूल गए थे। कुछ तो इतने ज्यादा हँसे कि वे बेहोश ही हो गए। गति-अवरोधक के बहुत ऊंचा उठने से, उसके ऊपर माल से भरी हुई गाड़ियों का चढ़ना अत्यंत कठिन हो गया, और जो गाड़ियाँ चढ़ रही थीं, वे उससे चिपकती जा रही थीं। उस गति-अवरोधक से जुड़े हुए राजकक्ष के ध्वनिसूचक (alarms) भी निरंतर बजने लगे, जिससे राजा बड़ा परेशान रहने लगा। उन सभी कारणों से, यातायात बंद

करवा दिया गया। वास्तव में उन शत्रुओं की मंशा थी कि बाहर से आपूर्ति बंद करवा के, देश के सभी भंडारघर खाली होने दिए जाते, जिससे पूरा देश क्षीण होकर उनके समक्ष घुटने टेक देता। वैसे भी वे शत्रु अधिक शक्तिशाली नहीं थे, तभी तो उन्होंने आक्रमण करने का वह विचित्र व छद्मयुक्त तरीका खोजा था। दिन के समय, मजदूर व अभियंता लोग कार्यालयों में हाजिर होने के बाद, क्षेत्रीय-दौरे (field-tour) पर निकल जाते थे, और उपरोक्त प्रभावित क्षेत्र में भी पहुँच जाते थे। वे दिन भर कड़ी मेहनत करके, उस गति-अवरोधक को ठीक कर जाते, परन्तु रात को वे कपटी शत्रु फिर से वहाँ पहुँच जाते, और चौकीदारों को भांग सुंघा कर अपना काम कर जाते। कई दिनों तक वैसा ही चलता रहा। अभियंताओं को समझ में नहीं आ रहा था कि वैसा चमत्कार कैसे हो रहा था, क्योंकि चौकीदार लोग डर के मारे सच्चाई को छिपा रहे थे। तब तक वे शत्रु भी देहदेश की युद्धनीति को समझ कर आत्मविश्वास से भर गए थे। वैसे भी वे देहदेश के सभ्य व मानवतापूर्ण लोगों की दुर्दशा व क्षीणता को देख कर, उत्साह व जोश से भर गए थे, क्योंकि सच्चे लोगों का दुःख ही कपटी लोगों की खुराक होती है। एक दिन अभियंताओं ने कुछ सैनिकों को साथ लेकर व उस प्रभावित क्षेत्र में ही ठहर कर, रात भर उसका चोरी-छिपे निरीक्षण करने की योजना बनाई। उन सभी ने विद्युत-दीपक लगी हुई टोपियाँ (battery run torchlight helmets) पहन रखी थीं, ताकि अँधेरे के कारण, देखने में व निशाना लगाने में कठिनाई न होती। आधी रात होने के बाद, जैसे ही शत्रु साथ लगते जंगल की झाड़ियों व चट्टानों के बीच में से निकल कर आगे आए, वैसे ही सैनिकों ने उन्हें ललकारा। जब वे भागने लगे, तब सनिकों ने उनके ऊपर गोलीबारी (firing) शुरु कर दी। शत्रु कमजोर थे, व उनके पास निम्न स्तर के अस्त्र-शस्त्र थे, इसलिए बचने के लिए वापिस मुड़कर, वे फिर से झाड़ियों व चट्टानों के बीच में खो गए। कुछ शत्रु मारे भी गए। सैनिक पूरी रात भर उस विकट वन की तलाशी लेते रहे, परन्तु उन्हें वे शत्रु कहीं पर भी दिखाई नहीं दिए। छिपने में तो उन्हें जैसे विशेषज्ञता ही हासिल थी। छापामारी युद्ध में भी वे निपुण थे। सैनिकों को भी इस बात की आशंका पहले से ही थी, इसीलिए वे पूरी रात भर जागते हुए, सतर्क रहे। कई दिन उसी लुकाछुप्पी में बीत गए। देश बहुत क्षीण हो गया था। देश के लिए केवल जल व हवा (gas) का ही निर्यात हो पा रहा था। जल ढोने वाली गाड़ियों को छुट्टी दे दी गई थी, और उन्हें मुरम्मतशाला (workshop) भेज दिया गया था। जल के परिवहन के लिए ताम्बे की बड़ी-बड़ी नालियों (copper-pipes) को बिछा दिया गया था। जब देहदेश की आतंरिक क्रियाप्रणाली उन शत्रुओं से नहीं निपट सकी, तब अंततः राजा से ही सहायता माँगी गई, क्योंकि वही तो देश का सर्वोच्च

महामहिम होता है। वैसे, राजा तो केवल देश की विदेशसम्बंधित कार्यप्रणालियों को ही संभालता है, इसलिए वह समझ गया था कि मामला अवश्य ही गंभीर हो गया था। फिर त्वरित कार्यवाही करते हुए, राजा ने चट्टानचूरक विस्फोटकों व आग्नेयास्त्रों को मंगवाया। उससे सेना की शक्ति बहुत बढ़ गई। सैनिकों ने उन अस्त्रों के प्रयोग से प्रभावित क्षेत्र की चट्टानों व झाड़ियों को ख़ाक बना दिया। इस तरह से, छिपने के लिए कोई जगह न बचने के कारण, सारे शत्रु शीघ्र ही मारे गए। फिर अभियंताओं के प्रयास से, धीरे-धीरे वह गति-अवरोधक भी पूर्ववत दुरस्त हो गया, और उस पर गाड़ियों की आवाजाही पुनः शुरु हो गई। उससे देहदेश के भण्डारघर पुनः भर गए, और उसकी अर्थव्यवस्था पुनः संतुलित हो गई।

देहदेश के बाहर के जंगलों में व ऊंचे-ऊंचे पर्वतों पर, कई बार वैसी भयानक वर्षा हो जाती है, जो रुकने का नाम ही नहीं लेती। उससे देहदेश में भी बाढ़ की संभावना बढ़ जाती है। इसीलिए अपनी सुरक्षा के लिए, देहदेश के द्वारा अपनी सीमा पर, चारों ओर बहुत ऊंची व पक्की दीवार बनवाई गई होती है। परन्तु जिस स्थान से स्वच्छ व ताज़ी हवा देश के अन्दर प्रविष्ट होती है, वहाँ पर ऊंची दीवार नहीं बनाई जा सकती, क्योंकि वहाँ पर शुद्ध वायु का अधिकतम प्रवाह धरातल के निकट ही होता है, और ऊंचाई बढ़ने के साथ वायु का प्रवाह भी कम होता जाता है। इसलिए बाहरी बाढ़ से वह दीवार-रहित स्थान विशेषतया प्रभावित होता रहता है। बाहरी बीहड़ों में निरंतर वर्षा रहने से, वहाँ के नदी-नालों का जलस्तर अत्यधिक रूप से बढ़ जाता है। ऐसे में वह पानी बड़ी-बड़ी लहरों के रूप में उछाल खाता हुआ, बार-बार दीवार से टकराता रहता है, और उपरोक्त कमजोर स्थान पर, थोड़ी-बहुत मात्रा में, अन्दर की संकरी घाटियों में भी प्रविष्ट होता रहता है। वहाँ से नीचे-नीचे जाता हुआ, वह जल जलवातविभाग के पूर्वोक्त विशाल व केन्द्रीय जलाशय में पहुँच जाता है, और वहाँ पहुँच कर कर्मठ देहपुरुषों के रोजाना के काम-काज में विघ्न उत्पन्न करता है। वह जल बहुत दूषित होता है, इसलिए उसे बड़े-बड़े मोटर-पम्पों की सहायता से बाहर निकालना ही पड़ता है। बाढ़ के बढ़ने से या दीवार के उस पूर्वखंडित भाग के टूटने से, परिणामतः अन्दर घुसते हुए बाढ़ के अशुद्ध पानी की भारी मात्रा से घाटियों की पतली सुरंगें आँशिक रूप से अवरुद्ध भी हो जाती हैं, जिससे वायु का प्रवाह भी बाधित हो जाता है। जब बाहर की बाढ़ सारी सीमाएं तोड़ देती है, तब तो उसके पानी से वात-सुरंगें पूर्णतया अवरुद्ध हो जाती हैं। वैसी अवस्था तो पूरे देश के अस्तित्व को ही हिला कर रख देती है।

कई बार तो बीहड़ों के दावानल देश के सीमाक्षेत्र तक फैल जाते हैं, और सीमा को भारी क्षति पहुंचा देते हैं। आग की गर्मी से, सीमा की दीवार कमजोर पड़ जाती है, और कई बार तो जल कर नष्ट भी हो जाती है। जिस स्थान पर वह नष्ट हो जाती है, वहाँ से शत्रुओं की घुसपैठ की आशंका अचानक से बढ़ जाती है। उस आग की गर्मी से सीमा-क्षेत्रों का जल सूखता रहता है, जिससे वहाँ के निवासी त्राहि-त्राहि करने लग जाते हैं। कई बार तो बाहरी जंगल की आग से सूखे हुए बाहरी प्राणी, चिल्लाते-तड़पते हुए, जली-टूटी हुई सीमा-भित्ति से अन्दर घुस जाते हैं। वे सीमाक्षेत्रों का सारा पानी पीते रहते हैं, व उसको बर्बाद भी करते रहते हैं; साथ में वापिस जाते हुए, अपनी आवश्यकतानुसार जल को चुराकर, अपने साथ भी ले जाते रहते हैं। कई उग्रपंथी तो बड़े-बड़े पाईपों (pipes) से, जल को देश के अन्दर से अपनी बस्तियों में पहुंचाते रहते हैं। फिर उन स्थानीय लोगों की पुकार सुन कर, केन्द्रीय सरकार देश के अंदरूनी भागों से, उस प्रभावित क्षेत्र के लिए जल की आपूर्ति करवाती है। परन्तु वह पानी भी सीमाक्षेत्रों में शीघ्र ही समाप्त हो जाता है। फिर से पानी की आपूर्ति की जाती है, और वह पानी भी जल्दी ही सूख जाता है। इस तरह की बारम्बार की जलापूर्ति से, देश के अंदरूनी भागों में भी पानी का संकट गहरा जाता है। ऐसे में राजा को बीहड़ों की आग बुझाने के लिए, वायुसेना के विमानों के माध्यम से, पानी का छिड़काव करवाना पड़ता है, तथा अपने देश की टूटी हुई सीमाभित्ति की मुरम्मत भी करवानी पड़ती है।

एक बार लेखक क्या देखता है कि एक नए देश के घिसे-पिटे हुए व टूटे हुए मुख्य राजमार्ग के ऊपर, बाहरी लुटेरों का बड़ा भारी जमावड़ा पैदा हो गया था। उस सड़क पर गिरी हुई, अनेक प्रकार की बहुमूल्य वस्तुएँ भी उन्हें अपनी ओर निरंतर आकर्षित कर रही थीं। वास्तव में, पूर्व में उस राजमार्ग से होकर ही उसे मूलदेश से भावनात्मक व वित्तीय सहायता प्राप्त होती थी। परन्तु जब वह नया देश स्वावलंबी बन जाता है, तो मूलराजा उस राजमार्ग को बंद करवा देता है, और उसकी सीमा पर स्थित द्वार के स्थान पर सीमा-भित्ति भी लगवा देता है, ताकि वहाँ से, बीहड़ों के उत्पाती लोग उस नए व अपरिपक्व देश के अन्दर प्रवेश न कर सकें। वास्तव में वह द्वार कोई समर्पित या स्थायी द्वार नहीं होता, अपितु कामचलाऊ व अस्थायी ही होता है। इसीलिए वहाँ पर सुरक्षा व्यवस्था का भी कोई विशेष व समर्पित इंतजाम नहीं होता। उसकी सुरक्षा वास्तव में तब तक मूलदेश ही करता है, जब तक वह नया देश किंचित स्वावलंबी बनकर, मूलदेश से पृथक नहीं हो जाता। क्योंकि वह देश नया व अनुभवहीन था, अतः उसके नए-नए बने राजा ने उस राजमार्ग को बंद करवाने में कोई विशेष रुचि नहीं दिखाई। वास्तव में मूलदेश व उसके मित्रदेश ही इस

काम में नए देश की सहायता करते हैं। परन्तु उस बार मूलदेश का राजा व उसके मित्र भी, अनगिनत संभावित कारणों में से किसी कारणवश प्रमाद कर बैठे थे, और उस राजमार्ग को टूटी-फूटी हालत में, खुला ही छोड़ दिया था। हो सकता है कि राजा को नशे की लत पड़ गई हो, या वह बीमार हो, या उसके मित्र अवसरवादी हों। संभवतः वह नए देश के निर्माण व उसकी सहायता के प्रति कोई विशेष रुचि नहीं ले रहा था। यह भी संभव है कि उसको संभालते हुए, उसके अपने देश की अर्थव्यवस्था नीचे गिर रही हो, या शत्रु, विद्रोही आदि प्रकार के लोग उसके अपने देश में उत्पात मचा रहे हों। कुछ भी कारण रहा हो, अवसरवादी शत्रुओं को नए देश में प्रविष्ट होने का एक स्वर्णिम अवसर तो मिल ही गया था। कई बार तो शत्रुओं की दृष्टि उस खुले पड़े राजद्वार पर बहुत समय तक पड़ती भी नहीं, जिससे वहाँ के स्थानीय लोगों व कर्मचारियों को उसे बंद करने का पर्याप्त समय मिल भी जाता है, और वे खतरे को भांपते हुए, बिना राजाज्ञा के ही उसे बंद करने लग जाते हैं। उसके कुछ समय बाद तो वे राजमार्ग को बंद करने का कार्य भी पूर्ण कर देते हैं। परन्तु उस वर्ष तो बीहड़ों के अच्छे व अनुकूल मौसमों के कारण, देश के चारों ओर शत्रुओं की भरमार हो गई थी। उनकी जनसँख्या बढ़ने से, उनकी उपभोज्य वस्तुओं की मांग भी अत्यधिक रूप से बढ़ गई थी, जिसको पूरा करने के लिए उनके पास कमजोर देश में घुसपैठ करने के अतिरिक्त कोई विकल्प शेष नहीं था। फिर जैसा हाल पूर्ववर्णित युद्धों में होता आया है, वैसा ही हाल वहाँ पर भी हुआ। उद्दंड शत्रुओं के ऊपर नियंत्रण कर पाना कठिन हो रहा था, और वे देश के अन्दर की ओर तेजी से बढ़े जा रहे थे। सबसे अधिक खतरा तो जलपरिशोधकयंत्र को था, जो उस राजद्वार के निकट ही, कुछ दूरी पर बना हुआ था। फिर लेखक ने देखा कि अचानक ही केंद्र के द्वारा भेजा गया अतिरिक्त सुरक्षाबल भी वहाँ पहुँच गया, और देखते ही देखते वहाँ पर घमासान युद्ध प्रारम्भ हो गया। वह युद्ध कई महीनों तक चला। उसमें अत्याधुनिक अस्त्रों व विस्फोटकों का भी भरपूर प्रयोग किया गया। उससे आसपास के पहाड़ों की चट्टानें टूट-टूट कर, मिट्टी-मलबे आदि के साथ फिसल कर राजमार्ग पर गिरती रहीं। उसके परिणामस्वरूप वह राजमार्ग पूर्णतः अवरुद्ध हो गया, जो फिर दुधिया रंग की सफेद चट्टानों के कारण बड़ी दूर से ही दिखाई दे रहा था। राजद्वार भी चट्टानों से स्वतः ही बंद हो गया था। उससे बाहर से शत्रुओं का प्रवेश रुक गया, जिससे सैनिकों ने थोड़ी राहत की साँस ली। इस तरह से धीरे-धीरे करके, सैनिकों ने सभी शत्रुओं का समूल सफाया कर दिया। गुस्से से बौखलाए मूलराजा ने नए देश को घेरने वाले उन बीहड़ों की व जंगलों की भी सफाई करवा दी, जहाँ पर वे शत्रु छिपे हुए थे। शत्रुओं को देख कर ही गोली

मारने के आदेश, सैनिकों को पहले से ही दे दिए गए थे। परन्तु कई बार क्या होता है कि देश की सुरक्षाप्रणालियाँ शिथिल होती हैं, या सैनिकों की संख्या सीमित होती है, या वे किसी कारणवश अक्षम होते हैं, जिससे प्रचंडयुद्ध नहीं हो पाता। इससे राजद्वार व राजमार्ग भी खुले ही पड़े रहते हैं। इससे शत्रु अन्दर घुसते रहते हैं, जो मरने वाले शत्रुओं का स्थान लेते रहते हैं। फिर वे उग्र होकर जलपरिशोधकयंत्र के अन्दर घुस जाते हैं, क्योंकि वे चतुर होते हैं, और उन्हें पता होता है कि देश को ध्वस्त करने के लिए उस यंत्र को ध्वस्त करना ही काफी होता है। वे उसकी छनन-जालियों (filteration-screens) को ख़राब कर देते हैं। आम हालत में, औद्योगिक नगरों से विषयुक्त जल, देश की नदियों में छोड़ा जाता रहता है। उस जल को कभी भी देहदेश में वितरित नहीं किया जाता। पहले उस जल को उस विशाल जलपरिशोधकयंत्र में स्वच्छ किया जाता है। वहाँ से वह बड़े-बड़े जलभंडारों (water-tanks) में पहुंचता है, और वहां पर कुछ समय के लिए भंडारित किया जाता है। वहाँ से वह जल विशाल पम्पहाऊस (pump house) को भेजा जाता है, जहाँ से उसे नालिका-जालों (pipelines) के माध्यम से पूरे देश में वितरित किया जाता है। जब शत्रु उस विशाल जलपरिशोधक यंत्र की छनन-जालियों को खराब कर देते हैं, तब स्वाभाविक ही है कि वह जल, बिना शुद्धीकरण के ही जल-भंडारों में पहुंचता है। वही दूषितजल फिर पंपहाऊस को भेजा जाता है, जहाँ से वही दूषित जल पूरे देश में वितरित हो जाता है। उस दूषित जल के भौतिक व रासायनिक विषों से देहपुरुष अनेक प्रकार के रोगों से ग्रस्त हो जाते हैं। कोई विष उनके पेट को खराब करता है, कोई विष उनके मस्तिष्क को, तो कोई विष यकृत को। इस तरह से वे बहुत क्षीण हो जाते हैं, जिससे देश की अर्थव्यवस्था डूबने लग जाती है। यहाँ तक कि उस जल से सींचे गए पेड़-पौधे भी विषाक्त हो जाते हैं। खेतों की पैदावार भी बहुत घट जाती है, जिससे पूरे देश में खाद्य संकट गहरा जाता है। उस स्थिति में पूरे देश का ताना-बाना ही हार जाता है, और राजा को ही कुछ प्रयास करना पड़ता है। कई बार पूर्वोक्तानुसार, विदेशी अस्त्र-शस्त्रों का आयात करवाया जाता है। कई बार विदेशी अभियंताओं, मेकेनिकों (mechanics) व कलपुर्जों (spare parts) का भी साथ में आयात करवाया जाता है। कई बार तो पूर्वोक्तानुसार ही, पूरा ही संयंत्र भी मंगवाया जाता है। इस तरह से, भिन्न-भिन्न परिस्थितियों के अनुसार, उस परम अद्वैतशाली देश को भिन्न-भिन्न परिणामों से गुजरना पड़ता है।

अनेक देहदेशों के बाहर, बीहड़ों व जंगलों के पीछे एक बहुत बड़ा पर्वत होता है, जो सदैव बर्फ की सफेद चादर से ढका रहता है। राजाओं ने वहाँ से अपने-अपने देश के लिए शुद्ध जल की आपूर्ति

के लिए, जंगरहित धातु की मोटी नाली (pipe) बिछाई होती है। सभी राजाओं ने मिलकर, जलवेग व जलमात्रा को नियंत्रित करवाने के लिए, वहाँ पर कुछ कर्मचारियों को तैनात किया होता है। उसी तरह, अपने देश को आने वाली पाईप के जलप्रवाह को नियंत्रित करने के लिए भी, सम्बंधित राजा ने अपने देश के कुछ कर्मचारी नियुक्त किए होते हैं। उस विशाल पर्वत से आ रहा आवश्यकाताधिक जल, सम्बंधित देश की सीमा पर तैनात कर्मचारियों के द्वारा कम कर दिया जाता है। यदि पर्वत से कम जल आ रहा हो, तो वे कर्मचारी अपने देश की पाईपलाईन (pipeline) के प्रवाह-नियंत्रक (flow regulator) को पूरा खोल देते हैं, और उसे चौबीसों घंटे खुला रखते हैं। कई बार कर्मचारियों के प्रमाद से, पीछे से भी अधिक जल आता है, और सीमा पर भी उसको नियंत्रित नहीं किया जाता। इससे देहदेश में आवश्यकता से अधिक जल उपलब्ध हो जाता है। ऐसे में, लालच के कारण किसान अपने खेतों को पानी से लबालब भर देते हैं। इससे कई बार पौधों की जड़ों को भी हानि पहुँच जाती है। साथ में, इससे उनके खेतों की उपजाऊ शक्ति भी फसलों की जड़ों से दूर, भूमि की असीमित गहराई की ओर रिस जाती है। इससे एक ओर जहाँ पानी की बर्बादी होती है, वहीँ दूसरी ओर पैदावार में भी भारी कमी आ जाती है। इससे आम आदमी को भी पर्याप्त जल नहीं मिल पाता, क्योंकि उनके हिस्से का जल वे किसान बर्बाद कर देते हैं। कई बार तो कुछ प्रभावशाली व रसूखदार किसान ही सारा जल हड़प लेते हैं, जिससे दूसरे छोटे-मोटे किसान मुंह देखते ही रह जाते हैं। कई बार तो किसान, बाहर से घुसकर आए हुए उन शत्रुओं के बहकावे में आ जाते हैं, जो देश में पानी की कमी को अपना प्रमुख हथियार समझते हैं। वैसे अधिकाँशतः, सुदूर क्षेत्र से आने वाले पानी पर राजा का नियंत्रण होता है। इसलिए वह समय के अनुसार, उपयुक्त मात्रा में पानी को मंगवा कर व उपयुक्त विधि के अनुसार किसानों के बीच में, उपयुक्त मात्रा में बंटवा कर, उस समस्या का समाधान कर सकता है।

शविद के आचरण का अद्वैतमयी प्रभाव कई बार तो दिखता भी नहीं, परन्तु प्रभाव पड़ता अवश्य है, जो धीरे-धीरे इकट्ठा होता हुआ, कालान्तर में आध्यात्मिक रूपांतरण कर देता है। शविद का प्रभाव आसपास की संगति पर भी निर्भर करता है, जीविका व कर्मों के प्रकार पर भी निर्भर करता है, कर्मों व भावनाओं की गति पर भी निर्भर करता है, स्वास्थ्य व आयु पर भी निर्भर करता है, तथा शविद के प्रति निष्ठा/समर्पण की मात्रा पर भी निर्भर करता है।

बकासुर जाति के मायावी राक्षस वायु के बिना ही साँस लेने की विद्या जानते हैं। वे बहुत भयानक होते हैं। बड़ी-बड़ी लाल आँखों व लम्बे-लम्बे नुकीले दांतों के साथ, ताड़ वृक्ष से भी ऊंचे

काले शरीर वाले वे राक्षस जब देहदेश के ऊपर आक्रमण करते हैं; तब मात्र उनके भय से ही पूरे देश की मशीनरी ठप होने लगती है। देहदेश के पश्चिमी भाग में, कुछ दूरी के अंतर पर दो अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डे बने होते हैं, जहाँ से पूरे विश्व के साथ उसका व्यापारिक सम्बन्ध बना रहता है। दो मुख्य हवाई अड्डे तो उसके पूर्वी छोर के निकट भी बने होते हैं, यद्यपि वे मुख्यतया देश के अन्दर की ही हवाई सेवाएं प्रदान करते हैं, तथा उपरोक्त अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डों तक सामान की आवाजाही को भी सुनिश्चित करते हैं। उन राक्षसों को हवाई अड्डे, विशेषतः पश्चिमी/अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डे अतिप्रिय होते हैं, क्योंकि प्रायः देखा जाता है कि उत्पथगामियों को ऊँचाई व आकाश से सम्बंधित वस्तुओं से विशेष लगाव होता है। यह उनका एक मनोवैज्ञानिक तथ्य होता है। वहाँ पर भी वे उसी सीमित स्थान पर आक्रमण करते हैं, जहाँ पर किसी कारणवश सड़कों व मार्गों के टूटने से, वस्तुओं के साथ-साथ गैस की आपूर्ति भी ठप हो जाती है। बीच-बीच में, वे ऐसे स्थानों की खोज के लिए, अपने गुप्तचरों से रेकी (छानबीन) करवाते रहते हैं। ऐसे स्थान की सूचना प्राप्त होने पर, वे अपनी पहचान को छिपाते हुए, वहाँ पहुँच जाते हैं। ऑक्सीजन गैस (प्राणवायु) की कमी से, वहाँ पर पहले से ही कोई भी जीवित नहीं बचा होता है, यहाँ तक कि स्थानीय सुरक्षाबल भी। बहुत से सैनिक वहाँ से भाग गए होते हैं, और नए सैनिक भी वहाँ आकर अपनी जान को जोखिम में नहीं डालना चाहते। ऐसे में, वे राक्षस अच्छा अवसर जानकर, वहाँ पर अपनी प्राणविद्या का प्रयोग प्रारम्भ कर देते हैं। वे वहाँ पर इच्छानुसार तोड़-फोड़ करते हैं, वहाँ के संचित अन्नों व वस्तुओं के भंडारों को खाली कर देते हैं, और अपनी-अपनी कामिनियों के साथ खूब रंगरलियाँ मनाते हैं। इससे वे बहुत हृष्ट-पुष्ट हो जाते हैं, और उनकी जनसंख्या भी बहुत बढ़ जाती है। फिर वे आगे बढ़ने लगते हैं। पहले वे सड़कों व अन्य छोटे-बड़े मार्गों को बमबारी करके नष्ट कर देते हैं, ताकि बड़े औद्योगिक शहरों से आने वाली वस्तु-सेवा की आपूर्ति पूर्णतया ठप हो जाए, जिससे प्रभावित क्षेत्र के लोग क्षीण हो जाए। ऐसा करके क्षेत्र को जीतना उनके लिए आसान हो जाता है। उनकी भारी संख्या हवाई अड्डे पर वैसी प्रतीत होती है, जैसे कि काले-काले बादलों के अनगिनत टुकड़ों से नीला आसमान भर गया हो। कई लोगों को लगता है कि काले बादल जमीन पर उतर आए हैं, अतः वे डर के मारे, आने वाली संभावित बाढ़ से बचने की तैयारियों में जुट जाते हैं। उन राक्षसों ने अपने हाथों में काले झंडे भी उठाए होते हैं, और वे काले कौवे की काली आवाज से भी अधिक कर्कश व भयानक स्वरों में कोलाहल करते हुए, किल्विष के पक्ष में नारे लगाते रहते हैं। वे अपने मुख से आग व जहरीली गैसें भी छोड़ते रहते हैं। परिणामतः हवाई सेवा एकदम से ठप

हो जाती है, यहाँ तक कि देश की अंदरूनी उड़ानें भी नहीं हो पातीं। वे राक्षस हवाई अड्डे के रनवे (runway) को भी नष्ट-भ्रष्ट कर देते हैं। उस पर वे गड्ढे ही गड्ढे कर देते हैं, और साथ में उसकी विभिन्न संरचनाओं को तोड़-मरोड़ देते हैं। उनसे सुरक्षा-हेतु पूरे देश में आपातकाल घोषित कर दिया जाता है। प्रभावित क्षेत्रों तक पहुँचने वाले मार्गों के अतिरिक्त प्रकोष्ठ/आपातकालीन उपमार्ग खोल दिए जाते हैं, और उन्हें आवश्यकतानुसार साफ व चौड़ा भी कर दिया जाता है। पूरे देश के संसाधन व सुरक्षाबल उन प्रभावित क्षेत्रों के लिए भेज दिए जाते हैं, जिससे पूरे देश में उनकी कमी पड़ जाती है, और अन्य सारी कार्यप्रणालियाँ ठप पड़ने लगती हैं। इससे, प्रभावित क्षेत्र को छोड़कर, पूरे देश का जीवनरथ जैसे अचानक से रुकने सा लगता है। देश के अधिकाँश लोगों को काम करने के लिए उचित अवसरों के अभाव का सामना करना पड़ता है। संसाधनों का अकाल पड़ जाता है। यहाँ तक कि भोजन-पानी की भी समस्या आने लगती है। आम नागरिकों के तो जैसे हाथ ही बंध जाते हैं। चारों ओर, हवाई अड्डे पर चल रहे युद्ध की चर्चाएँ आम हो जाती हैं, और सभी ईश्वर से यही प्रार्थना करते हैं कि किसी तरह से उस मुसीबत से छुटकारा मिल जाए। तभी लेखक ने देखा कि राजा ने राक्षसों को परास्त करने के लिए, बीहड़ों में जी रहे, उन्हीं के जैसे परन्तु मित्र राक्षसों की सहायता ली। मित्र-राक्षसों व शत्रु-राक्षसों के बीच में चल रहा वह भयानक युद्ध, देवासुर संग्राम की तरह लग रहा था; जिसे देखने के लिए देवताओं, अप्सराओं, गन्धर्वों व किन्नरों के यानों से सम्पूर्ण आकाश भर गया था। उस युद्ध में जान-माल की बहुत हानि हुई। घातक अस्त्रों का भरपूर प्रयोग किया गया, और छल-कपट का भी बहुत सहयोग लिया गया। अंत में शत्रु-राक्षसों ने घुटने टेक दिए। परन्तु तब तक देहदेश बहुत अधिक टूट चुका था। उसके सारे देहपुरुष भूख-प्यास व भय के मारे, बार-बार मूर्छित हो रहे थे। उनके मन और शरीर में उतने अधिक व गंभीर दोष उत्पन्न हो गए थे, जिनकी चिकित्सा कर पाना संभव नहीं था। थोड़े से देहपुरुष तो पुनः स्वस्थ भी हो गए, परन्तु वे विशाल देहदेश को चलाने में अस्मर्थ थे। इस तरह से, पूरे देश का अस्तित्व ही मिट गया, और वहाँ के बचे-खुचे युद्धशेष संसाधनों से, नई जीवनशैली व नए नियम-कानूनों/संविधान के साथ, एक नए देश के निर्माण की सुगबुगाहट शुरु होने लग गई। फिर डर के मारे उपरोक्त घातक परिणाम से शिक्षा लेते हुए, अन्य देशों ने अपने-अपने बचाव के लिए, पहले से ही, बीहड़ों से उपरोक्त मित्र-राक्षसों को बुलाकर रखना शुरु कर दिया, जिनके साथ मिलकर सैनिकों ने सम्पूर्ण युद्धयोजना पहले से ही बिछा कर तैयार रखी होती थी। वैसे, कई बार भाग्यशाली देहदेश उपरोक्त संग्राम में बच भी जाते हैं, विशेषतः यदि पूरे देश की कार्यप्रणालियाँ

पूरी तरह से निष्क्रिय न हो गई हों, तो। ऐसे में, धीरे-धीरे देहपुरुष पुराने सदमे से उबर जाते हैं, और अपने-अपने कार्यों को भली भांति से करने लगते हैं। खराब पड़ी हुई व्यवस्थाएं पुनः दुरस्त कर दी जाती हैं, व क्षतिग्रस्त यंत्र-उद्योग आदि भी ठीक कर दिए जाते हैं। सड़कों व मार्गों की मुरम्मत कर दी जाती है। प्रभावित क्षेत्रों को विशेष निगरानी में रखा जाता है, और वहाँ के लिए संसाधनों-सेवाओं की अतिरिक्त आपूर्ति भी की जाती है। सब कुछ पुनः ठीकठाक हो जाने से, राजा भी चैन की साँस लेते हुए पुनः निश्चिन्त हो जाता है।

देहदेश में अलग से, एक नवदेशनिर्माणविभाग भी विद्यमान होता है। उसे हम विस्तारवादी विभाग भी कह सकते हैं; क्योंकि वह नए देश के निर्माण के समय, अपने देश की एक इंच भूमि को भी गंवाने नहीं देता व अपने देश के ऊपर कोई भी आंच नहीं आने देता। साथ में, वह अपने अनुकूल व अधीन रहने वाले, एक नए देश का निर्माण भी कर लेता है। वह बाहर के खुले बीहड़ों में एक नए; अपने से भी सुन्दर व विकसित देश का निर्माण करवाता है। यद्यपि कई बार, बहुत बिरले मामलों में, दुर्घटनावश या राजा की लापरवाही के कारण या देश के व्यवस्थागत दोष के कारण, मूलदेश की हानि भी हो जाती है। वैसे, उसमें अधिकाँशतः राजा का ही दोष होता है। उस विभाग के अधिकारियों की नियमित व निर्धारित अंतराल के बाद, सामूहिक बैठकें भी होती रहती हैं। परन्तु कई बार, यदि देश की अस्थायी कुव्यवस्था के कारण, किसी बैठक का प्रबंध न हो पाए, तो उस बैठक को मात्र औपचारिकता के रूप में ही, बिना किसी विशेष साज-सज्जा व काम-काज के भी निपटा दिया जाता है, या कई बार बैठक को रद्द भी कर दिया जाता है। यदि निकट भविष्य में देश की व्यवस्था में सुधार की उम्मीद न हो, तो बैठक को बहुत लम्बे समय तक एक औपचारिकता के रूप में भी निभाया जा सकता है, या स्थिति की गंभीरता के अनुसार, बैठक को लम्बे काल के लिए, पूर्णतया स्थगित भी कर दिया जाता है। यदि देहदेश सुव्यवस्थित हो, तो वह बैठक सदैव सुचारु रूप से होती रहती है; फिर चाहे बाहर के बीहड़ों में नए देश के निर्माण के लिए भूमि उपलब्ध हो या न हो। यदि नए देशों की संख्या बढ़ जाने के कारण, बाहर के बीहड़ों में भूमि उपलब्ध न हो, तो उन बैठकों का मुख्य उद्देश्य यही होता है कि पूरा देश उन बैठकों को, विकास को अनवरत जारी रखने के सकारात्मक सन्देश के रूप में समझे, और प्रगतिशील कार्यों में कोई भी कोताही न बरते। कई बार राजा अपने देश के सुचारु प्रबंधन के बोझ से बचने के लिए व नए देश के लालच में, सम्बंधित अधिकारियों की इच्छा के विरुद्ध जाते हुए, विदेशी सहायता से, बलपूर्वक भी बैठकों को बुलवा लेता है। यद्यपि वैसी बैठकों के दुष्परिणाम भी कई बार देखने को मिल जाते

हैं, विशेषतः यदि शीघ्र ही देश की व्यवस्था को पटरी पर नहीं लाया जाता है। वैसी स्थिति में, राजा अपनी कमजोरी के कारण, नए देश का सही ढंग से विकास नहीं करवा पाता, और नए देश के चक्कर में, अपने स्वयं के देश की क्षीणता को भी बढ़वा देता है। कोई बिरला ही मूर्ख राजा ऐसा भी होता है, जो बाहर के बीहड़ों में भूमि उपलब्ध न होने पर भी, अपने देश की भूमि पर ही नए देश का पूर्ण निर्माण होने देता है। उससे मूलदेश छोटा व क्षीण हो जाता है। यद्यपि कई बार वह अपनी खोई हुई सत्ता को वापिस हासिल कर लेता है, परन्तु कई बार तो उसकी सत्ता पर ही संकट के बादल मंडराने लगते हैं। एक बार लेखक को स्वयं भी उस बैठक को व उसके परिणाम को प्रत्यक्ष रूप से देखने का सुनहरा अवसर प्राप्त हुआ था। लेखक ने देखा कि वह बैठक देश के बीचोंबीच बने, एक अत्याधुनिक सभागार में आयोजित की गई थी। नवदेशनिर्माण-विभाग का मनस नामक मंत्री तथा ज्ञानराज नामक सर्वोच्चाधिकारी, दोनों ही सुमेरु पर्वत के हिममंडित केन्द्रीय शिखर से, एक द्रुतगामी वायुयान के माध्यम से, पिछली शाम को ही वहाँ पहुँच गए थे, और केन्द्रीय सभागार के विश्रामगृह में ही रात को ठहरे हुए थे। उसी तरह से, सुमेरु पर्वत के केन्द्रीय शिखर से कुछ नीचे बने, नवदेशनिर्माण-विभाग के केन्द्रीय कार्यालय से भी फलदेव व लंबहस्त नामक दो अन्य मुख्य अधिकारी भी एक अति प्रातःकालीन उड़ान से, रात के अँधेरे में ही चल पड़े थे, और उजाला छाने तक, बैठक वाले केन्द्रीय सभागार में पहुँच चुके थे। यद्यपि लंबहस्त को अनुशासनहीनता व उसके असहयोगात्मक रवैये के कारण उस बैठक के प्रारम्भ में ही अस्थायी रूप से निलंबित कर दिया गया था, अतः वह बैठक के अंतिम भाग में ही उसमें भाग ले सका। इसी के दंडस्वरूप ही उसे इस अभियान के अंतिम भाग में ही कार्य करने का अवसर प्रदान किया गया। सीमा के निकट बने हुए नवदेशनिर्माण-विभाग के क्षेत्रीय कार्यालय से भी, अस्त्रज्ञानी व प्रस्तरज्ञानी नामक दो क्षेत्रीय अधिकारी वहाँ पहुंचे हुए थे। यद्यपि लंबहस्त का भक्त होने के कारण, प्रस्तरज्ञानी भी उस बैठक को छोड़कर उसके साथ चला गया था, और उसी के साथ शाम को बैठक में पुनः प्रविष्ट भी हो गया था। अतः वह भी उसी के समान दंड का भागीदार बना। बैठक भगवान श्री देहनारायण के ध्यान के साथ आरम्भ हुई। सबसे पहले, पिछली बैठक में संपन्न हुई कार्यवाही पर चर्चा की गई। उसके व्यावहारिक प्रभाव पर व उसके फैंसलों को आमलीजामा पहुंचाने में आ रही दिक्कतों पर भी चर्चा हुई। तदोपरांत मंत्री महोदय ने कार्यवाही को आगे बढ़ाते हुए, सर्वोच्च अधिकारी को अपने राजा की सर्वविदित इच्छा के बारे में याद दिलाया। ज्ञानराज ने भी अपने प्रति मंत्री जी के इशारे का अनुमोदन किया, यद्यपि उसके अनुमोदन में वह स्फूर्ति नहीं

थी, जिससे मंत्री भी देश की अव्यवस्थित अवस्था के बारे में, उसके संकेत को समझ गया था। इसलिए उसका आत्मविश्वास बढ़ाने के लिए, मंत्री ने भी देश की व्यवस्था को सुधारने के लिए किए जा रहे प्रयासों का ब्यौरा प्रस्तुत किया। उससे ज्ञानराज आश्वस्त हो गया, और पूरे जोश के साथ मंत्री जी के आदेश का समर्थन करने लगा। फिर ज्ञानराज ने अपने दोनों अधीनस्थ अधिकारियों, फलदेव व लंबहस्त को पूरी कार्ययोजना का स्मरण कराया। वे संसाधनों की कमी से कुछ उद्विग्न जैसे लग रहे थे, फिर भी उन्होंने ले-देकर कार्य का उत्तरदायित्व स्वीकार कर ही लिया। वहाँ पर बैठा हुआ, अस्त्रज्ञानी नामक स्थानीय अधिकारी, फलदेव का एक प्रिय अधीनस्थ अधिकारी था, जबकि प्रस्तरज्ञानी लंबहस्त का प्रिय अधिकारी था। दोनों ही बहुत नैष्ठिक व समर्पित अधिकारी थे। उन्होंने आज्ञा के अनुरूप ही, अपने कष्टों की परवाह किए बिना, अपने उच्चाधिकारियों के आज्ञापालन में जी-जान लगा दी। बैठक संपन्न हो चुकी थी, और सभी अधिकारी भी अपने-अपने निर्दिष्ट कार्यों में व्यस्त हो गए थे। सबसे पहले ज्ञानराज के आदेशानुसार, फलदेव ने अपना कार्य प्रारम्भ किया। वह लगातार अपने चहेते अस्त्रज्ञानी के संपर्क में रहते हुए, उससे उसका यथानिर्दिष्ट कर्म करवाने लगा। अस्त्रज्ञानी ने देश की मुख्य राजकुमारियों का समुचित लालन-पालन करवाया। फिर उनकी चयन परीक्षा करवाई, और सर्वश्रेष्ठ राजकुमारी को स्वयंवर के लिए चयनित करवाया। हारी हुई राजकुमारियां, उसकी सखी-सहेलियाँ बन गईं। उस चयनित राजकुमारी को सर्वश्रेष्ठ राजकीय सुविधाएँ उपलब्ध करवाईं, जिनसे वह अपनी उन सखी-सहेलियों के बीच में उस तरह से सुशोभित होने लगी, जिस तरह से तारों के बीच में चन्द्रमा सुशोभित होता है। कालान्तर में, फलदेव ने उस घृतंभरा नामक चयनित राजकुमारी के स्वयंवर के लिए, बहुत सारे आवश्यक प्रबंध भी करवाए। स्वयंवर के सभा-स्थल की मुरम्मत व झाड़-बुहार करवा के; उसे विभिन्न प्रकार के सुगन्धित पुष्पों से; चित्र-विचित्र व कलापूर्ण वस्तुओं से; विविध रंगों व वास्तुशास्त्रीय नक्काशियों से, तथा मनमोहक चित्रकारियों से, अमरावती की तरह सजा दिया। वहाँ के आने-जाने वाले रास्तों की भी अच्छी तरह से सफाई व मुरम्मत की गई, ताकि पूरे देश से आने वाले जिज्ञासु लोगों के साथ-साथ, उनके खाने-पीने व रखरखाव के लिए साजोसामान भी, देश के केन्द्रीय भागों से वहाँ तक आसानी से पहुँच सकता। विश्रामगृहों को अतिथिगणों के स्वागत-सत्कार के लिए सज्ज कर दिया गया। दूसरे देश से आने वाले विवाहार्थी राजकुमारों की निर्विघ्न यात्रा हेतु, आधे अंदरूनी राजमार्ग को यथावश्यक रूप से चौड़ा कर दिया गया। पूरे राजमार्ग पर यातायात की सुविधा भी बढ़ा दी गई, ताकि अतिथियों व

राजकुमारों की सुविधा को ध्यान में रख कर भेजे जाने वाले साजो-सामान की आपूर्ति में बाधा न पड़ती, और सुरक्षाबल भी निरंतर रूप से उपलब्ध रहते। पूर्वोक्त दोनों सीमान्त राजद्वार खोल दिए गए, तथा वहाँ पर सुरक्षा प्रबंध भी सुदृढ़ कर दिए गए, ताकि राजकुमारों के वेष में, शरारती तत्त्व देश के अन्दर न घुस पाते। राजमार्ग पर, स्थान-स्थान पर प्याऊ व लंगर लगवा दिए गए थे; जो कठिन परीक्षा से हताश होकर, परीक्षा छोड़ने वाले कुमारों का आश्रय भी बनते। स्थान-स्थान पर, उच्च-ध्वनिक (loudspeakers) भी लगे हुए थे, जो कुमारों को सही मार्ग की ओर निर्देशित कर रहे थे। स्वयंवरकक्ष के निकट ही, एक स्थान पर कुमारों को शक्तिवर्धक पेय उपलब्ध करवाने की व्यवस्था भी करवाई गई, ताकि कठिन बाधाओं को पार करके, वहाँ तक पहुंचे हुए अनेकगुणसंपन्न कुमार, अपार थकान के कारण कहीं परलोकगामी न बन जाते। इस तरह से, बहुत से कुमार स्वयंवरकक्ष तक पहुँच गए। कक्ष में बहुत से सभासदों, तथा सभी सखी-सहेलियों व ज्ञातिजनों के साथ, घृतम्भरा पहले से ही उपस्थित थी। वास्तव में फलदेव के सहयोगी अधिकारी लंबहस्त ने उन सभी को, समुचित रीति से व यथोपयुक्त निर्धारित समय पर, विभिन्न गाजों-बाजों व लास-विलासों के साथ, वहाँ पर पहले ही पहुंचवा दिया था। फिर लंबहस्त के प्रिय अधिकारी प्रस्तरज्ञानी के नेतृत्व में वह स्वयंवर सभा संपन्न हुई। लंबहस्त लगातार प्रस्तरज्ञानी के संपर्क में बना रहा। प्रस्तरज्ञानी ने भी अपने उस प्रिय वरिष्ठाधिकारी के निर्देशानुसार, विवाह-समारोह के सारे प्रबंध करवाए। प्रस्थित बारात के उचित दिशा-निर्देशन के लिए, उसने स्थान-स्थान पर उच्चध्वनिक लगवाए, और बारातियों के खाने-पीने का भी स्थान-स्थान पर प्रबंध करवाया। बारात के विश्राम के लिए, उसने निर्जन बीहड़ क्षेत्र के निकट स्थित पूर्वोक्त विश्रामगृह को सज्ज करवाया। उसने नए देश के विकास के लिए, यथानिर्दिष्ट सुनसान बीहड़ क्षेत्र में, सामाजिक हलचल को बढ़वा दिया। वहाँ तक सड़कों के जाल बिछवा दिए। अनेक प्रकार की यात्रीवाहक, मालवाहक व सेनावाहक गाड़ियों की आवाजाही बढ़वा दी, ताकि युवराजपरिवार को नवदेशविकास करते हुए, किसी भी कठिनाई का सामना न करना पड़ता। नवदेश के पूर्णविकासपर्यंत, प्रस्तरज्ञानी ने वहाँ पर अनुकूल परिस्थितियाँ बना कर रखीं। उसने मूलदेश के राजद्वारों को प्रारम्भ में ही बंद करवा दिया था, ताकि कोई चोर-उचक्के या उग्रवादी प्रकार के लोग, देश के उस अंदरूनी बीहड़ में प्रविष्ट होकर, संवेदनशील व विकासाभिमुख नवदेश को कोई हानि न पहुंचा पाते। वह अधिकारी इतना अधिक निपुण था कि उसने वहाँ पर भूकंपरोधी यन्त्र भी लगवा दिए थे, जो भूकंप की अवस्था में, वहाँ पर भूमिकम्पन नहीं होने देते थे, और नवदेश की निर्माणाधीन व संवेदनशील संरचनाओं को

कोई हानि नहीं पहुँचने देते थे, क्योंकि वह क्षेत्र अत्युच्च स्तर का भूकंप-संवेदनशील क्षेत्र था, जिससे वहाँ पर भूकंप आते ही रहते थे। इस प्रकार से, उसने नवदेशनागरिकों को कोई ऐसी परेशानी नहीं होने दी, जिससे वे उद्वेलित होकर बागी बन जाते, और नवदेश के पूर्णविकास के पूर्व ही, मूलदेश को छोड़कर चले जाते। फिर नवदेश का विकास पूर्ण हो जाने पर, प्रस्तरज्ञानी को छुट्टी पर भेज दिया गया। फिर एक सुनियोजित व नवदेशहितकर नीति के तहत, उसका कट्टर विरोधी व प्रतिद्वंद्वी माना जाने वाला, अस्त्रज्ञानी नामक अधिकारी, फलदेव के मार्गदर्शन में, उसके स्थान पर नियुक्त कर दिया गया। वह प्रस्तरज्ञानी से पुरानी शत्रुता का प्रतिकार लेने के लिए, उसको नीचा दिखाने का प्रयत्न करते हुए, सभी काम उसके विरुद्ध करने लगा। उसने प्रस्तरज्ञानी की प्रसिद्धि व उसके विकासात्मक कार्यों से ईर्ष्या करते हुए, उसके कार्यों में रोड़ा अटकाना प्रारम्भ कर दिया। वह उसे बदनाम करवाने के लिए, उसके कार्यों पर पानी फेरने लगा। परन्तु उससे हानि की अपेक्षा लाभ ही हुआ, क्योंकि प्रस्तरज्ञानी तो अपना काम पहले ही पूर्ण कर चुका था। नवदेशनिर्माण के प्रारम्भिक काल में, वे दोनों ही अधिकारी सहयोगात्मक रवैये से काम कर रहे थे, क्योंकि उच्चाधिकारियों ने उनके बीच में समझौता करवा दिया था। संभवतः, बाद में किसी बात पर, फिर से उनके बीच में तनातनी उत्पन्न हो गई थी। पूर्वाग्रही अस्त्रज्ञानी के कुकृत्यों के फलस्वरूप, भूकम्पों से नवदेश के लोग परेशान होने लगे, वहां पर भोजन-पानी व स्थान की कमी होने लगी, वहां की जनसंख्या तेजी से बढ़ गई, और मूलदेश के दोनों राजद्वार भी बारी-बारी से खोल दिए गए। उन सभी विकट परिस्थितियों में, अच्छा अवसर जानकर, वे नवदेशनागरिक भी अपने साजो-सामान के साथ, एक नई मंजिल तलाशते हुए, समस्याग्रस्त मूलदेश से बाहर की ओर कूच करने लगे।

उपरोक्त कथानक के अनुसार ही, कई बार नवदेशविरोधी लोगों के आगे झुकते हुए, राजा तनिक विदेशी सहायता से, प्रस्तरज्ञानी को, नवदेश का विकास पूर्ण हो, उससे पहले ही छुट्टी पर भिजवा देता है। वास्तव में वह बहुत निष्ठावान व लोकप्रिय अधिकारी होता है, जिसे हटाना आसान नहीं होता। इसीलिए राजा को मित्रदेशों से सहायता मांगनी पड़ती है। उससे दुराग्रही अस्त्रज्ञानी को, उसके द्वारा खाली किए गए, उस महत्त्वपूर्ण पद पर काबिज होने का एक अच्छा अवसर मिल जाता है, जिसके लिए आपसी रस्साकशी चलती ही रहती है। वह राजनीतिक जुगत भिड़ाने लग जाता है। अनेक प्रकार की सिफारिशों व दबावों के आगे झुकते हुए, न चाहते हुए भी, नवदेशमंत्री को, अस्त्रज्ञानी को उस खाली पड़े पद पर नियुक्त करना ही पड़ता है। वैसी हालत में,

प्रस्तरज्ञानी के प्रति उसका विरोध रंग लाने लगता है। अस्त्रज्ञानी अपने देश के प्रति आसक्ति के कारण अँधा बन चुका होता है। साथ में वह एक आँख से काना भी होता है। वह अपने देश व उससे जुड़े मुद्दों को खुली आँख से देखता है, परन्तु जो मुद्दे उसे अपने देश के ज़रा भी विरुद्ध लगे, उसे वह अपनी फटी हुई आँख से देखता है, बेशक वे युक्तियुक्त ही क्यों न हों। उसके वैसे पक्षपात व द्वैतयुक्त रवैये से डरा हुआ नवदेश, उसके पदभार संभालते ही कांपने लग जाता है। अस्त्रज्ञानी नहीं चाहता कि कोई उभरता हुआ नया देश, उसके देश के संसाधनों के ऊपर अपना अधिकार जमाने का प्रयत्न करे। अतः वह नवदेश के विरुद्ध हरसंभव प्रयास करने लगता है। वैसे भी, आसक्त व द्वैतपूर्ण लोगों से किस बुराई की उम्मीद नहीं की जा सकती। आसक्तिभाव को अनासक्तिभाव के साथ और द्वैतभाव को अद्वैतभाव के साथ प्रदर्शित करने की, देहपुरुषों की यह कलाकारी भी गजब की होती है। जो लोग अस्त्रज्ञानी के कार्यों से नाराज भी होते हैं, वे भी उसके विरुद्ध आन्दोलन नहीं कर सकते, क्योंकि वह भी एक बहुत महत्त्वपूर्ण अधिकारी होता है, जो देहदेश को क्रियाशील व सुव्यवस्थित बनाए रखने में बहुत सहायता करता है। अस्त्रज्ञानी की नाजायज दखलंदाजी से परेशान नवदेश को, समय से पूर्व ही मूलदेश को छोड़कर, बाहर के बीहड़ों में विस्थापित होना पड़ता है। क्योंकि नवदेश का पूर्ण विकास ही नहीं हुआ होता है, अतः वह अपने पृथक अस्तित्व को बना कर नहीं रख पाता, और शीघ्र ही नष्ट हो जाता है। अपना उद्देश्य पूरा होता देखकर, ईर्ष्या से कुटिल बन चुका अस्त्रज्ञानी ख़ुशी से झूम उठता है। स्वार्थ में अंधा व निर्दयी बन चुका वह, सुकोमल नवदेश के ऊपर तनिक भी दया नहीं दिखाता। वहीँ दूसरी ओर देशभक्त, मानवता से पूर्ण, समर्पित व कर्मठ प्रस्तरज्ञानी, बेचारा उस क्षण को कोसता रह जाता है, जिस क्षण उसको बाहर का रास्ता दिखाया गया था। वैसे यदि नवदेश का अधिकाँश विकास पूरा हो गया हो, और मूलदेश का राजा उसके ऊपर विशेष ध्यान दे, तो कई बार वह अपनी बिखरती हुई पृथक सत्ता को वापिस समेट भी लेता है।

कई देहदेशों के कुछ जनसमाज अपने राजा को निरंतर उद्विग्न व दुखी करते रहते हैं। राजा अपने देश के पतन के भय से, उनके ऊपर कठोर कार्यवाही भी नहीं कर पाता, क्योंकि वे समाज देश के बहुत महत्त्वपूर्ण अंग होते हैं। इसलिए राजा सदैव उनको शाँत करवाने के प्रयास में लगा रहता है। वैसे, वे समाज एक प्रकार से राजा की भलाई ही कर रहे होते हैं, क्योंकि दुःख व पीड़ा के कारण राजा को जीवन के सत्य को अनुभव करने की शक्ति प्राप्त होती है। उस संचित मानसिक शक्ति से, वह आसक्ति को त्याग कर अद्वैतयुक्त भी बन जाता है, जिससे उसकी कुण्डलिनी भी पुष्ट

होती रहती है। इस तरह से, लम्बे समय तक अद्वैत के अभ्यास से, वह अनायास ही योगसाधना में संलग्न हो जाता है। उससे उसकी कुण्डलिनी को अतिरिक्त तीव्र बल मिलता है। यौनयोग के और अधिक अतिरिक्त बल से, वह जाग जाती है। राजा की इस प्रकार की निष्ठा व उसके दिव्य व्यक्तित्व को देखते हुए, उसके बागी देशवासी भी काफी हद तक सुधर भी जाते हैं।

पूर्वोक्त स्वयंवर में, अधिकाँश बार तो राजकुमार आते ही नहीं। निमंत्रितदेश उन्हें भेजता ही नहीं, क्योंकि संभवतः उसे निमंत्रकदेश पसंद ही नहीं आया होता है। परन्तु इससे निमंत्रकदेश को कोई अंतर नहीं पड़ता। उसके वहाँ तो बैठकों का दौर यथावत चलता रहता है। यदि राजकुमार नहीं आते हैं, तो राजकुमारी और उसकी सखियाँ विश्रामगृह में कुछ समय के लिए रुकती हैं, और फिर साध्वियां बन कर, एकांत में योगयुक्त जीवन बिताते हुए, अखंडसमाधि में स्थित होकर, ब्रम्हलीन हो जाती हैं। फिर प्रशासन का ध्यान उस नवदेशगर्भक बीहड़क्षेत्र से हट जाता है, और वह अन्य आवश्यक विषयों पर ध्यान देने लगता है। इससे संभावित नवदेश के विकास के लिए बनाई गई आधारभूत संरचनाएँ, बिना रखरखाव के नष्ट-भ्रष्ट होने लगती हैं। सड़कें भी खस्ताहालत हो जाती हैं। इस तरह से, देहदेश के संसाधनों की व उसकी शक्ति की बहुत बर्बादी हो जाती है। परन्तु विशालदेश को इससे कोई फर्क नहीं पड़ता, अपितु कुल मिलाकर लाभ ही होता है; क्योंकि उन नियमित बैठकों व तैयारियों से, वह देश निरंतर रूप से सजग, विकासोन्मुख व चलायमान अर्थव्यवस्था से युक्त रहता है। उसके समस्त देशवासी भी अद्वैतमयी कर्मयोग में स्थित रहते हैं, और आत्मानंद प्राप्त करते हैं। उन्हें देख कर, राजा भी प्रसन्न व आत्मविभोर हो जाता है। कई बार राजकुमार स्वयंवरकक्ष तक पहुँचने में बहुत देर कर देते हैं। ऐसा संभवतः निमंत्रित राजा को ठीक से सूचना न मिलने के कारण होता है, या राजा का उद्देश्य, नए देश का निर्माण नहीं, अपितु अपने देशवासियों को प्रसन्नता व अद्वैतयुक्त कर्मशीलता की खुराक (tonic) देना होता है। वैसी स्थिति में, जब कुमार स्वयंवरस्थल पर पहुंचते हैं, तो स्वयंवरसभा, बिना विवाह के ही संपन्न हो चुकी होती है। ऐसा ही एक नजारा लेखक को भी देखने को मिला था। लेखक ने देखा कि एक बार वे राजकुमार, राजकुमारी की बेवफाई से नाराज होकर, पागल जैसे हो गए थे। वे उस बात को सहन नहीं कर सके कि राजकुमारी उनकी प्रतीक्षा किए बिना ही, अपने परिवारजनों के साथ कैसे चली गई। वे उसे राजकुमारी की बेवफाई व उसका अहंकार समझने लगे। उन्हें प्यार में बहुत बड़ा धोखा हाथ लगा था, और उनके आत्मसम्मान को गहरी ठेस पहुँची थी। वे क्रोध से भर गए। मानसिक अवसाद ने उन्हें चारों ओर से घेर लिया। यद्यपि उतने बड़े मानसिक आघात को भी

उन्होंने अपने अद्वैतभाव से संभाल लिया था। फिर उस महान अद्वैत के फलस्वरूप, उनको एकदम से पूर्ण आत्मज्ञान (full enlightenment) हो गया, जिससे वे साधु-फकीर की तरह भटकने लगे, और किसी भी समाज में मिश्रित नहीं हो सके। इधर-उधर भटकते हुए ही, उनके शरीर योगाग्नि से भस्म हो गए, जिससे वे ब्रम्ह में विलीन हो गए। इसी तरह, कई बार राजकुमार समयपूर्व ही वहाँ पहुँच जाते हैं। जब तक घृतंभरा वहाँ पहुंचती है, तब तक वे उस भोगविलाससंपन्न देश में खो जाते हैं, और स्वयंवरसभा को पूर्ण रूप से संपन्न करवाने का मूल उद्देश्य ही भूल जाते हैं। कई कुमार, सागर की उछलती हुई लहरों पर नाचते-कूदते प्रतीत होते, सुन्दर व सजे-धजे हुए यांत्रिक-वाहनों को देखकर, उनकी सवारी करने दौड़ पड़ते हैं, और असफल होने पर, स्नानोपरांत, रेतीले तटों पर धूप सेंकते हुए सुस्ताने लगते हैं। कई कुमार, नारियल की स्थानीय मदिरा को पीकर, अपनी सुध-बुध ही खो बैठते हैं। कई तो दुकानों में खरीददारी करने लगते हैं, और मोह-माया में फंसकर, अपना अभियान ही भूल जाते हैं। कुमारीदेश की तरह ही, कुमारदेश भी उस आयोजन के लिए, अपनी अत्यधिक शक्ति व असीमित संसाधनों का उपयोग करता है। स्वयंवर की कठिन परीक्षा के कारण, बहुत से कुमारों का जीवन दांव पर लगा होता है। उनके वस्त्र, जूते आदि घातकपर्यावरणरक्षक वस्तुएँ व सुरक्षा के अन्य उपकरण भी अतिविशिष्ट श्रेणी के होते हैं। वे राजकुमार स्वयं भी आम लोगों से अलग, अतिविशिष्ट होते हैं। अतः उन्हें विशेष व सर्वगुणसम्पन्न बनाने के लिए, देहदेश को अपनी बहुमूल्य वस्तुओं व सेवाओं को खर्च करना पड़ता है, स्वर्णजटित मुकुट भी जिनमें से एक है। उन खर्च की गई, देश की बहुमूल्य वस्तुओं व सेवाओं को अपने पूर्व के मूलस्तर तक पहुंचाने के लिए, पूरे देश को कड़ा संघर्ष करना पड़ता है, और उसमें समय भी काफी लग जाता है। कई बार राजा सभी देशवासियों को उत्तम श्रेणी का वैदिक/तांत्रिक आमिषाहार करवाता है, जिससे उनकी कार्यक्षमता एकदम से व काफी अधिक बढ़ जाती है। उससे शीघ्र ही देश के भुक्त/लुप्त संसाधनों की भरपाई हो जाती है, यद्यपि वह कई बार अधिक खर्चीला पड़ता है, और उसमें हिंसा-दोष भी होता है। उसे दोष-निवारण के लिए देश में शान्तियज्ञ भी करवाने पड़ते हैं, जिसमें भी कुछ संसाधन खर्च हो जाते हैं। इतने खर्चों के बावजूद भी राजा उनकी परवाह नहीं करता, क्योंकि अपने देशवासियों की अद्वैतपूर्ण क्रियाओं को देखकर, वह भी अद्वैत के आनंदसागर में निमग्न हो जाता है। कई बार कोई बुद्धिमान राजा, तांत्रिकविधि को अपनाते हुए, बहुत थोड़े से कुमारों को ही स्वयंवर के लिए, अपने देश से बाहर भेजता है। यद्यपि वह पूरे देश से उनकी वास्तविक संख्या को छिपा कर रखता है, जिससे देश को पूर्ववत/पूर्वोक्तानुसार ही अद्वैतमयी

तांत्रिक लाभ भी मिल जाता है, और वस्तु-सेवाओं की अधिक बर्बादी भी नहीं होती। उससे समस्त देशवासियों का यौनयोग हो जाता है। यौनयोग केवलमात्र कुण्डलिनीजागरण के लिए ही नहीं, अपितु लौकिक सफलता के लिए भी समान रूप से आवश्यक होता है। इससे अवसाद, चिंता आदि मानसिक दोष नष्ट हो जाते हैं, और मानसिक गुणों का विकास भी होता है। परन्तु कई बार, पूरे देश से स्वयंवर-यात्रा के लिए आए हुए, और सीमा के निकट बने हुए सम्बंधित क्षेत्रीय कार्यालय में इकट्ठे होए हुए राजकुमार, उस धोखे से नाराज होकर हंगामा भी खड़ा कर देते हैं, और कई बार तो तोड़-फोड़ पर भी उतारू हो जाते हैं। उन्हें समझाने के लिए राजा को बहुत से, प्यार-भरे व शाँतिपूर्ण प्रयास करने पड़ते हैं। साथ में, उन्हें वहाँ पर अच्छा भोजन-पानी व अन्य सभी सुविधाएँ उपलब्ध करवाई जाती हैं, जिनसे प्रसन्न होकर वे शीघ्र ही अपने-अपने मूलनिवासस्थानों को वापिस लौट जाते हैं। पूरे देश में बदनामी से बचने के लिए और नवकुमारों को शाँत रखने के लिए, बीच-बीच में निमंत्रित राजा को उस प्रथा का पूर्ण आयोजन भी करवाते रहना पड़ता है। फिर भी, यदि राजा को नया देश बनवाने की इच्छा न हो, तो वह बड़ी चतुराई से, राजकुमारों को उस समय स्वयंवरकक्ष में पहुंचवाता है, जिस समय घृतंभरा स्वयंवरकक्ष में उपलब्ध ही नहीं होती है। सर्वाधिक परेशानी तो तब होती है, जब वरदेश व वधुदेश के बीच में बने हुए मधुर संबंधों की आड़ में, उत्पथगामी व तथाकथित बुरे लोग भी एक-दूसरे के क्षेत्रों में प्रविष्ट होते रहते हैं। उनसे संभावित हानि से बचने के लिए, सम्बंधित क्षेत्रों में सुरक्षा प्रबंध पुख्ता रखने पड़ते हैं। कई बार, उन दुष्टों का आतंक इतना अधिक बढ़ जाता है कि देश की सुरक्षा व्यवस्था उनसे निपट ही नहीं पाती। वैसी अवस्था में, मित्रदेशों से सुरक्षा के लिए अपील की जाती है। इस तरह से, तनाव बढ़ने के साथ, कई बार युद्ध के जैसी परिस्थितियाँ भी उत्पन्न हो जाती हैं।

परन्तु कई बार निमंत्रकराजा, निमंत्रित राजा की, उपरोक्त तांत्रिक चतुराई से भरी हुई योजना के ऊपर पानी फेर देता है। वह निमंत्रित राजा को उसके मुख्यतममंत्री से अलग-थलग करवा देता है। कुंडलदेव नाम का, राजा का मुख्यतममंत्री बहुत ही योग्य, श्रेष्ठ, दिग्दर्शक, विश्वासपात्र व सदैव राजा का साथ निभाने वाला मंत्री होता है। वह राजा के लिए उतना ही महत्त्वपूर्ण होता है, जितनी महत्त्वपूर्ण एक कुण्डलिनीसाधक के लिए उसकी कुण्डलिनी होती है। वह हर प्रकार से राजा का हित साधता है, तथा उसे लौकिक-पारलौकिक, भौतिक-आध्यात्मिक आदि सभी प्रकार के सुखों को उपलब्ध करवाता है। वह राजा को शक्ति का दुरुपयोग करने से भी रुकवाता रहता है, और हरसंभव विधि से उसका संरक्षण करवाता रहता है। लेखक ने देखा कि

इसी तरह एक बार, तंत्रहा नाम के एक पड़ौसी/निमंत्रक राजा के प्रलोभन-जाल में फंसा हुआ, तंत्रपत नामक निमंत्रित राजा, अपने उस योग्यतम मंत्री को भूल गया। कुंडलदेव की संगति के बिना, तंत्रपत नवदेशनिर्माण-विभाग पर समुचित नियंत्रण नहीं रख सका। तंत्रहा उसके उस विभाग के क्षेत्रीय कार्यालय के संपर्क में निरंतर बना रहा, और वहाँ के अधिकारियों को विभिन्न प्रकार के प्रलोभन देता रहा। उस कपटी राजा ने तो उसके पूरे देश के बहुत से अधिकारियों व मंत्रियों को भी अपने वश में कर लिया था। फिर वे सभी प्रबुद्ध देशनिवासी आपस में मिलकर, सम्बंधित क्षेत्रीय कार्यालय के, परतंत्र नाम के मुख्याधिकारी को बहुत उकसाने लगे। उसने भी उकसावे में आकर, सभी इच्छुक राजकुमारों को विदेश यात्रा की अनुमति दे दी। उसे देखकर तंत्रपत बहुत प्रसन्न हो गया, क्योंकि उसे प्रतीत हुआ कि उसने अपने पड़ौसी राजा से मधुर सम्बन्ध बना लिए थे, इसलिए वह उससे अप्रत्याशित सहायता की अपेक्षा करने लगा। यद्यपि वह झूठी अपेक्षा होती है, तथा निमंत्रकदेश द्वारा उससे सम्बंधित दिया गया आश्वासन/दिलासा भी झूठा ही होता है, क्योंकि उस क्षतिपूर्ति की भरपाई पूर्णरूप से कभी नहीं हो सकती। असंख्य राजकुमारों के विदेशगमन को निमंत्रित देश सहन ही नहीं कर पाता, स्थूलरूप से भी व भावनात्मक रूप से भी। वे राजकुमार अत्यंत शिक्षित, प्रशिक्षित व गुणवान होते हैं। देश ने उनके ऊपर बहुत से साधन व संसाधन व्यय किए हुए होते हैं। पूर्वोक्तानुसार, उनके वस्त्रों व उद्घाटित अंगों को बहुमूल्य रत्नों व मणियों से सजाया गया होता है। फिर लेखक ने देखा कि तंत्रहा राजा ने तंत्रपत राजा को अपने विश्वास में बनाए रखने के लिए, उसे बहुत सी सुख-सुविधाएँ प्रदान कीं। यद्यपि वह एक ढोंग ही था, क्योंकि कोई व्यक्ति किसी का खजाना लूटने के बाद, उसे क्योंकर भरेगा। यदि कोई विरला आदमी उसे भर भी दे, तो भी उसमें बहुत सा समय लग जाता है, और साथ में, चारों ओर अस्त-व्यस्तता व तनाव का माहौल भी फैल जाता है। देशवासी उस शक्तिह्रास व काम के बोझ के कारण पागल जैसे हो जाते हैं, और उनमें सोचने-समझने की शक्ति बहुत क्षीण हो जाती है। इसका सर्वाधिक दुष्प्रभाव राष्ट्रीय राजधानी में स्थित मंत्रियों व अधिकारियों पर पड़ता है, क्योंकि उनका स्वाभाविक कर्म ही चिंतनप्रधान होता है। कुंडलदेव तो लगभग विलुप्त ही हो जाता है। फिर भी, यदि उस अभियान के समय कुंडलदेव का ध्यान किया जाता रहे, तो वह बुरे समय में राजा का साथ निभाने आ भी जाता है, परन्तु शक्ति में क्षीणता तो आ ही जाती है, यद्यपि अपेक्षाकृत कुछ कम मात्रा में। ऐसा प्रतीत होता है कि तंत्रहा राजा ने अपना बड़प्पन दिखाने के लिए व तंत्रपत राजा को घुटनों के बल लाने के लिए ही वह कुटिल योजना बनाई थी। तंत्रहा को

भी उससे कोई विशेष भौतिक उपलब्धि प्राप्त नहीं हुई थी, अपितु उसका अहंकार व बड़प्पन ही पुष्ट हुआ था। वह एक प्रकार का अप्रत्यक्ष व छद्मपूर्ण युद्ध ही तो था। वह एक कायराना युद्ध भी था, क्योंकि उसमें प्रभावित राजा के द्वारा पलटवार की संभावना लगभग न के बराबर ही थी। ऐसा इसलिए था, क्योंकि तंत्रहा ने सीधा आक्रमण नहीं किया था, अपितु उसने तंत्रपत को बड़े ही प्रेम व बड़ी ही चतुराई से अपने कुचक्र में फंसाया था। यदि कभी कोई विरला राजा विरोधी अभिक्रिया को थोड़ा सा भी प्रदर्शित करता है, तब तो वह पूरे विश्व में ही अपमानित हो जाता है, और सभी राजा उसकी एकस्वर में कड़ी भर्त्सना करते हैं। पड़ौसी देशों से मधुर सम्बन्ध बनाने के लिए भारी-भरकम खर्च में कोई बुराई नहीं है, परन्तु वह खर्च राजकुमार-प्रेषक निमंत्रितराजा की पूर्णसहमति से ही होना चाहिए, किसी दूसरे/निमंत्रक देश की कुटिल योजना के अनुसार नहीं। वास्तव में, इस सम्बन्ध में निर्णय लेने का सम्पूर्ण अधिकार निमंत्रित राजा को ही होना चाहिए, क्योंकि वही उस अभियान से सर्वाधिक प्रभावित होता है। परन्तु कई राजा बहुत मूर्ख होते हैं। वे दूसरे देश में अपने देश का डंका बजाने के लिए आत्मघाती कदम भी उठा लेते हैं, और असंख्य राजकुमारों को निरंतर ही भेजते रहते हैं, अपने देश की क्षति को अनदेखा करते हुए। अतः निमंत्रकदेश को चाहिए कि वह वैसे निमंत्रितदेश को प्यार से समझाते हुए, उसे अच्छे-बुरे का ज्ञान कराए। साथ में, उसे पूर्वोक्त तंत्रसदृश-मध्यमार्ग को अपनाने के लिए कहे, जिससे साँप भी मर जाए और लाठी भी न टूटे। वह ऐसे अभियान के समय, सदैव कुंडलदेव की संगति में बना रहे। जब इस सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण अभियान में कुंडलदेव को सर्वाधिक महत्त्व दिया जाता है, तब वह गौरवान्वित व प्रसन्न हो जाता है, तथा अपने प्रेमी राजा का साथ एक क्षण के लिए भी नहीं छोड़ता। यदि च्युतिवश या निर्धारित योजना के अनुसार, कभी यह अभियान पूर्णरूप से भी निष्पादित करवाना पड़े, तब भी विश्वास व संगति में बना कर रखा गया कुंडलदेव, उसको भौतिक पतन से काफी हद तक बचा भी लेता है, और साथ में, उसे आध्यात्मिक उन्नति भी प्रदान करता है। वैसे, निमंत्रित राजा को भी चाहिए कि बीच-बीच में, निर्बल निमंत्रक राजा का सम्मान रखने के लिए, कुंडलदेव की संगति से युक्त स्वयंवर-अभियान को पूर्णता से भी निष्पादित करवाता रहे। यद्यपि नए देश के निर्माण के लिए, दोनों राष्ट्राध्यक्षों का सहमत होना आवश्यक है, क्योंकि नए राष्ट्र ने उन दोनों के संसाधनों से ही तो विकसित होना होता है। यदि वे दोनों, नए राष्ट्र का निर्माण न चाहें, तो दोनों मिलकर पूर्वोक्त स्वयंवरोद्वाहावरोधक कूटनीतिक चालों को भी

चल सकते हैं, जिससे दोनों के राष्ट्रवासी भी अद्वैत से प्रसन्न व आत्मविभोर हो जाएं, तथा नए देश के निर्माण की चुनौती का सामना भी न करना पड़े।

कई बार, कोई निमंत्रकराजा छल-बलपूर्वक या मूर्खतावश अपनी घृतंभरा का स्वयंवरोद्वाह करवाना चाहता है, नए देश के निर्माण से सम्बंधित उत्तरदायित्वों को समझे बिना ही। ऐसा ही एक घटनाक्रम एकबार लेखक ने भी देखा था। उसने देखा कि उडायनराज नामक एक निमंत्रकराजा ने, विकुंडलराज नामक अपने मित्रराजा के देश से, राजकुमारों की भीड़ को अपने देश में छलपूर्वक, उस समय बुलवा लिया, जब उसके अपने अधिकारी घृतंभरा के स्वयंवर की साज-सज्जा में जुटे हुए थे। बाद में उसे अपनी भूल का अहसास हो गया, और विकुंडलराज भी उसकी कुटिलता को शीघ्र ही समझ गया। अतः विकुंडलराज नाराज होकर, नए देश के विकास में सहयोग देने से मना करने लगा। ऐसे में, उडायनराज के पास भी बीहड़ों में पाए जाने वाले प्रस्तरज्ञानी-वंश के तद्वंशसमाज-बहिष्कृत/अमानवीय लोगों से सहायता लेने के अतिरिक्त, कोई भी विकल्प शेष नहीं था। वास्तव में, उस समय उसके देश में वास्तविक/मानवीय/सामाजिक प्रस्तरज्ञानी की नियुक्ति नहीं हुई थी, या वह लम्बे अवकाश पर था। उसके स्थान पर, अस्त्रज्ञानी अपनी सेवाएं दे रहा था। परिणामतः उस देश के नवदेशनिर्माणविभाग के क्षेत्रीय कार्यालय में, अस्त्रज्ञानी फलदेव के साथ मिलकर, पूर्वोक्त महान स्वयंवर व विवाहोत्सव को अच्छी तरह से निपटाने के लिए जी-जान से जुटा हुआ था। वैसी आपातकालीन अवस्था में, बीहड़ों से, बहिष्कृत प्रस्तरज्ञानी को बुलवाना पड़ा। वह पूरी तरह से तद्देशीय प्रस्तरज्ञानी की तरह नहीं होता, यद्यपि उससे बहुत मिलता-जुलता है, और उसके बहुत से काम बखूबी कर लेता है। वास्तव में, वे दोनों एक ही वंश-परंपरा से सम्बंधित होते हैं, यद्यपि बीहड़ों में रहने वाले प्रस्तरज्ञानी-समुदाय के लोगों को कुछ प्रशिक्षण भी देना पड़ता है। प्रशिक्षण देने के झमेलों से बचने के लिए, कई बार राजा के द्वारा दूसरे देशों से भी प्रस्तरज्ञानी बुलवा लिए जाते हैं। लेखक ने फिर देखा कि निमंत्रकदेश के भीतर प्रविष्ट होने के बाद, वे राजकुमारी के निवासस्थान के आसपास इकट्ठे हो गए। वहाँ पर घृतंभरा एक अतिसुन्दर महल में निवास करती है। वह महल तीनों लोकों में अतुलनीय होता है। वह त्रिलोक की सभी सुख-सुविधाओं से पूर्ण होता है। पूर्णतः स्वर्णनिर्मित उस महल में, भोजन-पानी के अतिरिक्त सभी कुछ स्वर्ण से बना होता है। यहाँ तक कि वस्त्र व जूते भी कोमल व महीन स्वर्ण-तंतुओं से बने होते हैं। वहाँ पर राजकुमारी की सखी-सहेलियाँ व उसके ज्ञातिजन, उसे स्वयंवर के लिए तैयार करने में जोर-शोर से लगे हुए थे। उस तैयारी में बहुत

अधिक वित्तीय खर्च हुआ, और समय भी बहुत लगा, क्योंकि प्रस्तरज्ञानी-समुदाय के लोग महल के चारों ओर हो-हल्ला व नारेबाजी कर रहे थे। वे आसपास के लोगों को भी अपने विश्वास में लेने लगे, जिससे वे भी उनके साथ जुड़ने लगे। अस्त्रज्ञानी ने उनको समझाने का बहुत प्रयत्न किया, परन्तु वे अपने कर्तव्यनिर्वहन के साथ जरा भी समझौता नहीं कर रहे थे। प्रस्तरज्ञानी-समुदाय राजकुमारी को रोकने का हरसंभव प्रयास कर रहा था। पूर्वोक्तानुसार, अस्त्रज्ञानी-समुदाय व प्रस्तरज्ञानी-समुदाय के बीच का वैर-विरोध तो जगजाहिर है ही। भय एवं अविश्वास के माहौल के कारण, राजकुमारी की परिचारिकाएँ हतोत्साहित सी होकर, राजकुमारी की सेवा-शुश्रुषा से किनारा करने लगीं। यद्यपि अस्त्रज्ञानी ने कुमारी के सुखद भविष्य के सम्बन्ध में, उन्हें विश्वास दिलाने का बहुत प्रयत्न किया, परन्तु वह सफल नहीं हो सका। अंत में राजकुमारी का सजना-संवरना रुक गया। धीरे-धीरे करके उसका सारा श्रृंगार फीका पड़ने लगा, और वह पुनः एक साधारण स्त्री की तरह लगने लगी। स्वयंवर रद्द कर दिया गया, क्योंकि राजकुमारी लज्जा, हीनता की भावना व भय के कारण; राजमहल से बाहर निकलने को राजी ही नहीं हुई। उच्चाधिकारी/लंबहस्त भी वहाँ पहुंचकर, राजकुमारी को समझाने-बुझाने व उसे ढाढस बंधाने लगा, परन्तु वह भी क्षेत्रीयाधिकारी/अस्त्रज्ञानी की सकारात्मक रिपोर्ट (report) के बिना कुछ नहीं कर सका। लंबहस्त को राष्ट्रीय मुख्यालय में कार्यरत अपने उच्चाधिकारी, ज्ञानराज से निरंतर डांट पड़ रही थी, इसलिए वह भी अपनी भड़ास निकालने के लिए अस्त्रज्ञानी को डांटे जा रहा था। अस्त्रज्ञानी अपना गुस्सा छोटे-छोटे अधीनस्थ कर्मचारियों के ऊपर निकाल रहा था। सबसे छोटे कर्मचारियों को विवश होकर, अधिकारियों का सारा गुस्सा स्वयं ही झेलना पड़ा, क्योंकि उनसे छोटे कोई कर्मचारी थे ही नहीं, जिन पर वे अपना गुस्सा निकाल पाते, यद्यपि कुछ कुटिल कर्मचारी आम जनता से घृणापूर्वक बर्ताव करके, अपने गुस्से को जरूर कुछ हल्का कर रहे थे। उन्हें दोहरी मार पड़ रही थी, क्योंकि एक ओर जहाँ उन्हें अधिकारियों के क्रोध का शिकार बनना पड़ रहा था, वहीँ दूसरी ओर प्रस्तरज्ञानी-लोग उन्हें अपना काम नहीं करने दे रहे थे। यदि बहिष्कृत प्रस्तरज्ञानी-समुदाय के पहुँचने से पहले ही, सजी-धजी हुई घृतंभरा राजमहल से बाहर निकलकर, स्वयंवर-स्थल की ओर प्रस्थान कर दे, तब तो प्रस्तरज्ञानी भी उसे रोक नहीं पाता। फिर वह नई चाल चलता है। वह घृतंभरा के यात्रामार्ग में बहुत सी विघ्न-बाधाएँ खड़ी कर देता है, ताकि उससे परेशान होकर, घृतंभरा की पालकी को उठाने वाले कहार धीरे-धीरे चल पाएं, जिससे उसके देरी से पहुँचने के कारण, स्वयंवर को ही रद्द कर दिया जाए। इसी तरह, वे विदेश से आ रहे कुमारों के

मार्ग में भी बहुत सी बाधाएँ उत्पन्न कर देते हैं, ताकि वे भी समयानुसार स्वयंवर-स्थल तक न पहुँच सकें। यद्यपि प्रस्तरज्ञानी की ये चालें अधिकाँशतः सफल नहीं हो पातीं। विरले मामलों में तो उसकी प्रथम चाल भी सफल नहीं हो पाती, विशेषतः यदि नवदेशनिर्माणविभाग के अधिकारियों व कर्मचारियों के इरादे बहुत मजबूत हों। कई बार, स्वयंवर-रोको अभियान से नाराज नागरिक, देश के विभिन्न कोनों में हल्की-फुल्की तोड़-फोड़ भी कर देते हैं, यद्यपि वे देश को गंभीर क्षति पहुंचाए बिना, शीघ्र ही शाँत भी हो जाते हैं।

संभवतः उन दोनों राजाओं के बीच में आपसी मनमुटाव के कारण या उनकी क्लेशपूर्ण अवस्था के कारण ही उपरोक्त घटनाक्रम घटित होता है। कई बार निमंत्रितराजा बिना प्रेमभाव के, यांत्रिककार्य की तरह ही उस प्रथा को निभाना चाहता है। प्रेमभाव तो दूर की बात रही, वह निमंत्रकराजा के मान-सम्मान का भी ध्यान नहीं रखता। बदले में, निमंत्रकराजा भी उससे वैसा ही व्यवहार करता है। यह सर्वविदित ही है कि व्यर्थ के आपसी मनमुटाव से लाभ की अपेक्षा हानि ही होती है। फिर तो उनके बीच में छल-बल व छीना-झपटी का सिलसिला शुरु हो जाता है। दोनों के बीच में, अपने आप को अधिक बड़ा व बलशाली दिखाने की, एक कूटनीतिक होड़ सी लग जाती है। पहले तो निमंत्रितराजा विजयी जैसा प्रतीत होता है, परन्तु अपने उत्तेजित व्यवहार के कारण वह शीघ्र ही थक जाता है, और शाँत होकर बैठ जाता है। उस समय निमंत्रकराजा को बदला लेने का एक अच्छा मौक़ा मिल जाता है। अतः वह छल-बलपूर्वक, पूर्वोक्त प्रकार से निमंत्रितदेश की शक्ति का हरण कर लेता है। फिर तो निमंत्रितराजा मृतप्राय जैसा ही हो जाता है। उसके सोचने-विचारने की शक्ति भी नष्ट हो जाती है, क्योंकि वे बहुमुखी कुमार ही अपनी चित्र-विचित्र व मनोरंजक लीलाओं से, उसके मनमंदिर में जान फूंकते रहते थे। बहुत समय के बाद ही नए कुमारों का संगठन फिर से क्रियाशील हो पाता है, जिससे राजा पुनः राहत का अनुभव करने लगता है। बुद्धिमान राजा तो संभल जाते हैं, और अपना आचरण सुधार लेते हैं, परन्तु बहुत से मूर्ख राजा तो निरंतर रूप से उनको खोते रहते हैं, और सदैव बेतालों की तरह इधर-उधर भटकते रहते हैं। कई निमंत्रकराजा तो बहुत ही भले व देवतुल्य होते हैं। वे कभी भी निमंत्रितदेश के अन्दर धोखे से सेंध नहीं लगाते, बेशक निमंत्रितराजा कितना ही दुराचारी क्यों न हो।

कई चतुर राजा तो चालाकी की सारी हदें ही तोड़ देते हैं। एक बार लेखक क्या घटनाक्रम देखता है कि विचित्रानंदपुर नामक एक देश के राजा ने अंतरदेशीय/अंतरराष्ट्रीय (international) बीहड़ों से कबाड़ का भारी-भरकम सामान मंगवाया, और उसे अपने देश की सीमा के निकट स्थित

नवदेशनिर्माणस्थल पर गिरवा दिया। उस सारी अंतर्देशीय/अंतर्राष्ट्रीय (intranational) बीहड़ भूमि को उसने उस आयातित रद्दी माल से पटवा दिया था। उस माल में टूटे-फूटे हुए लोहे के बड़े-बड़े व भारी यंत्र (machines) भी थे, रद्दी की विषाक्त वस्तुएँ व धातुएँ भी थीं, और यहाँ तक कि बड़ी-बड़ी चट्टानें भी थीं। इसलिए लोग उनसे दूर-दूर ही रह रहे थे। यदि वे वस्तुएँ उनके काम की होतीं भी, तो भी वे गाँव के साधारण लोग, आधुनिक यंत्र उपलब्ध न होने के कारण उन्हें उठा नहीं पाते। फिर लेखक क्या देखता है कि विचित्रानंदराज ने उन कुमारों के मार्ग में कोई भी घातक विघ्न-बाधा उपस्थित नहीं होने दी, और उन्हें समुचित संख्या में सकुशल स्वयंवरस्थल तक पहुँचने दिया, क्योंकि उसे पता था कि उस कबाड़ के कारण नवदेशनिर्माण तो हो ही नहीं सकता था। बहुत से कुमार, मार्ग में लगने वाले उस नवदेशजनक बीहड़स्थल में रखे गए विशालकाय कबाड़ के अन्दर भटकते अवश्य रह गए थे, यद्यपि उससे कोई विशेष अंतर नहीं पड़ा। शाहीविवाह के बाद शाहीजोड़ा, शाहीबारात के साथ, उस बीहड़स्थान में बने महल की ओर निकल पड़ा था। उस बीहड़स्थल पर सपरिवार पहुंचा वह शाहीजोड़ा, कबाड़ से भरी हुई अपनी कर्मभूमि को देखकर बहुत व्यथित हुआ। उससे उसे राजमहल में बिताए गए सुखभरे पुराने दिन याद आने लगे। उसे वहाँ पर अपना महल भी कहीं दिखाई नहीं दे रहा था। बहुत खोजबीन के बाद, उस शाही परिवार को वह महल बड़ी-बड़ी चट्टानों से दबा हुआ दिखाई दिया। वह महल बहुत क्षत-विक्षत हो चुका था, और रहने के लायक तो कतई भी नहीं था। उस भारी कबाड़ को उठाना उनके लिए असंभव था, इसलिए उन्होंने आसपास के लोगों को सहायता के लिए बुलाया, परन्तु डर के मारे कोई भी नहीं आया। अंत में थक-हार कर, उन्हें अद्वैतयुक्त गृहस्थधर्म से भरे हुए नवदेशनिर्माण के अभियान को बंद ही करना पड़ा। उनकी सारी आशाएँ व अभिलाषाएँ टूट चुकी थीं। वे हतोत्साहित हो गए थे। अद्वैत के प्रभाव से, कुण्डलिनी तो उनके अन्दर पहले से ही क्रियाशील थी। नवदेशनिर्माण अभियान के, बीच में ही असफल होने से, उसके लिए प्रचंड बनी हुई उनकी मानसिक ऊर्जा अनायास ही उनकी कुण्डलिनी को लग गई। उससे उनकी कुण्डलिनी जागृत हो गई। वे बहुत समय तक, आसपास के बीहड़ क्षेत्रों में एकान्तपूर्ण व साधनामय (यौनयोगमिश्रित कुण्डलिनीयोग) जीवन जीते रहे। फिर धीरे-धीरे करके उनकी सम्प्रज्ञात समाधि असम्प्रज्ञात समाधि में परिवर्तित हो गई, और वह युगलकिशोर सपरिवार ही मुक्त हो गया।

राजकुमारों को निमंत्रकदेश की ओर भेजकर तांत्रिक लाभ लेने के लिए, और साथ में; उनके प्रति अपनी मोह-ममता के कारण उन्हें स्वयंवर-समारोह में भाग लेने, तथा चयनित कुमार को

विवाह के व तदोपरांत नवदेशनिर्माण के महान उत्तरदायित्वों से बचाने के लिए, देहदेश चित्र-विचित्र प्रकार के उपायों का आश्रय भी लेते हैं। एक बार लेखक ने देखा कि असंयमपुर नामक एक देश के राजा ने प्रियदर्शनपुर नामक अपने मित्रदेश के साथ जोड़ने वाले, अपने सीमान्त-पुल (boundary-bridge) के अंतिम छोर पर एक बहुत ऊंची व मजबूत दीवार बना ली थी। वास्तव में देश के सदाकान्क्षीचयनित/वैकल्पिक व सर्वमाननीय महामंत्री, कुंडलदेव का वैसे पुल के ऊपर सर्वश्रेष्ठ नियंत्रण कायम होता है। वह अपने राजा की अनुमति से ग्रहण की गई, नवदेशनिर्माणविभाग व केंद्रीय मुख्यालय के बीच में अपनी गतिशीलता से, जब चाहे उस सारे पुल को अस्थायी तौर पर पूर्णतः बंद भी करवा सकता है। उपरोक्तानुसार, राजकुमारों के बहुत प्रयत्न करने पर भी, वे उस पुल को लांघ नहीं पाए। नीचे गहरी नदी थी, जिसको वे तैरकर भी पार नहीं कर सकते थे। इस वजह से सारे राजकुमार लम्बे समय तक पुल पर ही कैद होकर रह गए थे। फिर राजा ने उन्हें वापिस अपने देश के अन्दर लौटने को कहा, परन्तु वे नहीं माने। वे अपने को अपमानित महसूस कर रहे थे, और वापिस लौटने को अपनी शान के विरुद्ध समझ रहे थे। वे अपने मान-सम्मान की रक्षा-हेतु, राज-अवज्ञा के दण्ड को झेलने के लिए भी तैयार थे। चित्र-विचित्र विचारों के बीच में डूबते-इतराते हुए, वे प्रियदर्शनपुर के अन्दर आयोजित किए जा रहे स्वयंवर-समारोह में भाग लेने के लिए ललायित हो रहे थे। घृतंभरा का लुभावना व त्रिलोकसुन्दर चेहरा उनके मन में निरंतर घूमता जा रहा था, और उससे जुड़ी हुई यादें उनका पीछा ही नहीं छोड़ रही थीं। निरंतर रूप से किए गए उस प्रगाढ़ व प्रेमपूर्ण स्मरण से, उनके मन में घृतंभरा की कुण्डलिनी जागृत हो गई, और वे आत्मानंद में निमग्न हो गए। उनका सारा जीवन, उस जीवन की सारी यादें व उनका सारा अहंकार अनायास ही उस जागृत कुण्डलिनी के सामने फीका पड़ गया। इस तरह से, उनका सभी कुछ क्षीण हो गया, केवलमात्र कुण्डलिनी ही विद्यमान रही। उन्हें आसपास के पहाड़ों में, कंदराओं में, पुल में व नदी में, हर स्थान पर कुण्डलिनी ही नजर आ रही थी। गजब की सम्प्रज्ञात समाधि में स्थित हो गए थे वे सारे के सारे कुमार। उन्होंने असंयमराज से बहुत अनुनय-विनय किया कि वे राजकुमारी के दर्शन के बिना मर जाएंगे, इसलिए उन्हें प्रियदर्शनपुर के अन्दर प्रविष्ट होने दिया जाए। परन्तु राजा अपने लक्ष्य के प्रति दृढ़ बना हुआ था, और उनके आगे कतई भी नहीं झुका। उससे कुमारों की रही-सही सभी आशाओं के ऊपर भी पानी फिर गया। फिर उन्होंने घृतंभरा को भूल जाना ही बेहतर समझा। जैसे ही वे घृतंभरा को पूरी तरह से भूल जाने में सफल हुए, वैसे ही वे असम्प्रज्ञात समाधि में प्रविष्ट हो गए। उनका सभी कुछ

शून्य सा हो गया। उनका सभी कुछ (मानसिक जगत) तो चमचमाती मानसिक घृतंभरा के सामने पहले ही नष्ट हो चुका था, अब घृतंभरा भी मन से ओझल हो गई थी। केवल असम्प्रज्ञात समाधि का आनंदमयी शून्य ही बचा था। वास्तव में, मन में सभी कुछ था, यद्यपि पूर्ण अद्वैत व पूर्ण अनासक्ति के साथ। उन्हें अपने मन का सारा प्रपंच इतना अधिक धीमा व हल्का लग रहा था, जैसे कि वे कोटिजन्म पूर्व की कोई मधुर व शान्त स्मृतियाँ हों। उसी शून्य के बीच में उन्हें अचानक व अनायास ही आत्मज्ञान (Enlightenment) हो गया। अब वे पूर्णमुक्त व पूर्णज्ञानी बन चुके थे। जीवन के प्रति उनका मोह पूर्णतः भंग हो चुका था। उन्होंने अपनी लम्बी जीवनयात्रा पूरी कर ली थी। उन्होंने जानने योग्य सभी कुछ जान लिया था, और करने योग्य भी सभी कुछ कर लिया था। वे अपने वास्तविक घर को वापिस लौट आए थे, इसलिए वे अपने पुराने देश व पुराने घर को मानो कि जैसे भूल ही गए। इस तरह से, जब वे अपने देश के अन्दर वापिस लौटने को राजी नहीं हुए, तब राजा ने भी उन आत्मज्ञानियों के प्रति दया व सम्मान दिखाते हुए, उनको जंगलों में एकाकी जीवन बिताने के लिए, उस पुल के ऊपर से एक रास्ता निकलवा दिया। कुछ कुमार तो कहीं भी जाने की आवश्यकता ही महसूस नहीं कर रहे थे, क्योंकि उन्हें अपना आध्यात्मिक/वास्तविक निवासस्थान जो मिल गया था। परन्तु राजा ने उन्हें बलपूर्वक वहाँ से हटवा दिया, ताकि वे शत्रुओं व हिंसक जीवों को, उसके अपने देश के ऊपर आक्रमण करने के लिए आकर्षित न करते। असंयमराज उनकी हानि से थोड़ा दुखी अवश्य हुआ, यद्यपि उन आत्मज्ञानी कुमारों की दिव्य व आत्मानंदमयी सुगंध पूरे असंयमपुर में फैल चुकी थी, जिससे कुछ दिनों के लिए पूरा देश हर्षित, तनावरहित, थकानरहित, ज्ञानयुक्त, व आत्मानंदित जैसा हो गया था। यह उपाय तो नवदेश के उत्तरदायित्व से बचाने वाले नरम उपायों में से एक था, परन्तु कई देश तो सख्त कदम भी उठा लेते हैं। एक बार लेखक क्या देखता है कि अलसपुर नामक एक देश के राजा ने अपने देश के कुमारों को उपरोक्त व अतिप्राचीन स्वयंवर प्रथा को निभाने के लिए, अरायपुर नामक अपने एक मित्रदेश के अन्दर प्रविष्ट करवाने का पूरा मन ही बना लिया था। यद्यपि उसे अपनी भूल का अहसास बहुत देर बाद हुआ, जब दोनों ही मित्रदेश संसाधनों के अभावकाल से गुजरने लगे थे। अलसराज ने पुल के ऊपर, निष्कासन द्वार के निकट, पूर्वोक्त अवरोधक-भित्ति को बनाने का प्रयत्न भी नहीं किया था। संभवतः या तो वह थका हुआ था, या फिर वह लापरवाही बरत रहा था। अरायराज ने भी उसे सही सलाह नहीं दी। हो सकता है कि यदि उसने सलाह दी भी हो, तो भी अलसराज ने वह न मानी हो। अब उस प्रथा में विघ्न डालने का सारा उत्तरदायित्व

अरायराज पर ही आ गया था, क्योंकि वे राजकुमार उसके देश में प्रविष्ट हो चुके थे। उसके देश में जिस स्थान पर वह पुल जुड़ा हुआ था, वह स्थान एक विस्तृत भूभाग का हिस्सा था। उस भूभाग में चित्र-विचित्र प्रकार की बहुत सी घाटियाँ, कन्दराएँ, घने जंगल, पत्थर-चट्टानें व पर्वत आदि प्राकृतिक संरचनाएँ विद्यमान थीं। अतः वहाँ पर उन कुमारों को भित्ति से रोकना संभव नहीं था। परिणामतः राजा को मजबूरी के कारण कठोर कदम उठाना पड़ा, क्योंकि वे कुमार किसी की भी बात सुनने के लिए ज़रा भी तैयार नहीं थे। उसने उस क्षेत्र में गुप्त रीति से विष का छिड़काव करवा दिया। उसके अतिरिक्त और कोई भी मर्यादित विकल्प उसके पास नहीं था। देखते ही देखते वे कुमार बड़ी चुस्ती-स्फूर्ति व नए जोशो-उमंग के साथ, उस नए व मनोरम देश में प्रविष्ट हुए। चारों ओर की विविध संरचनाओं व प्रकृति के नजारों को निहारते हुए, मानो कि जैसे उनके नेत्र तृप्त ही नहीं हो रहे थे। हरे-भरे वृक्षों से आते हुए सुमधुर व ठंडी हवा के झोंकों ने उनकी सारी थकान को दूर कर दिया था। विविध पक्षियों के सामूहिक संगीत-गान के साथ कोयलों की सुमधुर जुगलबंदी को सुनते हुए, उन्हें आकाशवाणी-यंत्र (radio) को अपने घर में ही छोड़ आने का पश्चाताप नहीं हो रहा था। हिरन, खरगोश आदि भीरु जंतु भी इधर-उधर कूदते-फुदकते हुए दिख जाते थे। कभी-कभी शेर, हाथी आदि हिंसक व मतवाले जानवरों से भी उनका आमना-सामना हो जाता था, परन्तु कुमारों के भारी संख्या में होने के कारण, वे जानवर उनका कुछ नहीं बिगाड़ पा रहे थे। संभवतः यदि हिंसक जीव अधिक संख्या में होते, तो कुछ बिगाड़ भी देते। तभी वे कुछ सुस्ताने लगे। उन्हें लगा कि लम्बी यात्रा की थकान के कारण वैसा हो रहा था। फिर सभी कुमार पेड़ों की छाँव-तले सो गए, परन्तु उनमें से आधे ही वापिस जाग पाए, बाकी के आधे तो यमपुरी की, और अधिक लम्बी यात्रा के लिए प्रस्थान कर चुके थे। काल के मुख से बचे हुए कुमार आश्चर्य व भय के मिश्रित भाव से भर गए। उन्हें मृत्यु का भय सताने लगा। चित्र-विचित्र व डरावनी यादें उनके मन-मस्तिष्क में उभरने लगीं। अपने गतजीवन के, शास्त्रों-पुराणों के पढ़े-सुने व अनजाने प्रकार के डरावने मानसिकदृष्य भी उन्हें प्रताड़ित करने लगे। उनके बीच में अटकलों का बाजार भी गर्म हो गया था। कोई बोल रहा था कि वहाँ पर भूतों का वास था। कोई बोल रहा था कि वहाँ पर किसी दूसरे ग्रह के प्राणियों का अड्डा था। यद्यपि उनके वे सभी विचार/भाव व क्रियाकलाप, उनके स्वाभाविक अद्वैतभाव से संपन्न थे, इसलिए वे बंधनकारी नहीं, अपितु मुक्तिकारी ही थे। भूख-प्यास से सताए हुए जिन कुमारों ने वहाँ के फल-फूल, कंद-मूल व जल का प्रयोग किया था, वे तो सबसे पहले टपक गए थे, क्योंकि उनके भक्षण-पान से उन कुमारों के अन्दर विष का दुष्प्रभाव

बहुत अधिक बढ़ गया था। फिर धीरे-धीरे करके सभी कुमार इतने अधिक विषाक्त हो गए थे कि उनके अन्दर सोचने-विचारने की शक्ति भी नहीं रह गई थी। अद्वैत के प्रभाव से, वे सभी बारी-बारी से आनंदमयी-निद्रा में समाते रहे, और ब्रम्ह में विलीन होते रहे। उनके ब्रम्हतेज की दिव्य सुगंध, दोनों पड़ौसी देशों में प्रसारित हो गई थी, जिससे वहाँ पर कई दिनों तक तांत्रिक-तेज की चकाचौंध का ही बोलबाला रहा। दोनों देशों का, विशेषकर अरायपुर का हितैषी वह निम्नकोटि के तांत्रिक-प्रकार का अभियान सफल हो गया था, यद्यपि कई बार ऐसा अभियान असफल भी हो जाता है, क्योंकि कई बार कुछ कुमार विष के दुष्प्रभाव से बचकर, अपने लक्ष्यस्थान तक पहुँच भी जाते हैं। उससे अधिक प्रभावशाली अभियान तो पूर्वोक्त भित्तिनिर्माण का अभियान ही है, क्योंकि वह बहुत विरले मामले में ही असफल होता है, विशेषतः तभी यदि भूस्खलन, आंधी, अतिवृष्टि, भूकंप आदि प्राकृतिक आपदाओं के कारण वह दृढ़भित्ति क्षत-विक्षत हो जाए।

कई बार, अस्त्रज्ञानी बहुत धीरे-धीरे काम करते हुए, घृतंभरा को स्वयंवर के लिए रवाना करने में बहुत अधिक समय लगा देता है। उतने लम्बे समय तक तो राजकुमार स्वयंवरकक्ष में रुकते ही नहीं। उस कारण से, घृतंभरा का विवाह नहीं हो पाता। वैसे अस्त्रज्ञानी को लेटलतीफी की आदत सी पड़ी होती है। वह हर बार वैसा ही करता है। उस लापरवाही में, उसके वरिष्ठ अधिकारी फलदेव का भी हाथ होता है। परन्तु वह भी सारा दोष अपने वरिष्ठ अधिकारी ज्ञानराज के ऊपर ही मढ़ देता है। वैसी परिस्थिति में राजा उस स्थिति के ऊपर विचार करता है, और बाहर के बीहड़-स्थलों से ज्ञानराज के समकक्ष, किसी अधिकारी को आमंत्रित करता है। उसे वह सौदा अपने देश की जटिल कार्यप्रणाली को सुधारने की अपेक्षा अधिक सस्ता व आसान प्रतीत होता है। बाद में धीरे-धीरे, कई बार उसके अपने अधिकारी भी लापरवाही छोड़कर सुधर जाते हैं, विशेषतः जब उनको दुष्प्रभावित करने वाली विभिन्न कार्यप्रणालियों में अपेक्षित सुधार हो जाता है। कई देशों में, उपरोक्त अधिकारी बहुत फुर्तीले होते हैं, और बड़ी तीव्रता से कार्य संपन्न करवाकर, घृतंभरा को स्वयंवरकक्ष में समयपूर्व ही पहुंचवा देते हैं। वैसी हालत में, निमंत्रक राजा को निमंत्रित राजा से, अपने राजकुमारों को अतिशीघ्रता से पहुंचाने के लिए, विशेष प्रार्थना करनी पड़ती है, ताकि घृतंभरा को अधिक समय तक स्वयंवरकक्ष में प्रतीक्षा न करनी पड़े, और वह कहीं ऊब कर, चली न जाए। कई बार प्रस्तरज्ञानी अपना पद ही नहीं छोड़ता, जिससे अस्त्रज्ञानी को स्वयंवर को आयोजित करने का अवसर ही उपलब्ध नहीं हो पाता। वास्तव में, उसके पद छोड़ने में, प्रगल्भज्ञानी नामक अधिकारी का विशेष हाथ होता है, जो आमतौर पर उसके कार्यभार को

अस्थायी रूप से ग्रहण करके, उसे कार्यमुक्त करता है। बाद में वह, अस्त्रज्ञानी के पहुँचने पर, उसको कार्यभार सौंप देता है। ऐसा विशेषतः तब होता है, जब नवदेशगर्भक बीहड़ में घुसे हुए शत्रुओं के साथ युद्ध चल रहा होता है। उन शत्रुओं ने या तो प्रगल्भज्ञानी को डराया-धमकाया होता है, या वह उनसे रिश्वत आदि लेकर, उनके साथ मिला हुआ होता है। वैसा करना शत्रुओं के जीवनयापन के लिए जरूरी भी होता है, क्योंकि प्रस्तरज्ञानी ने जो सुविधाएँ नवदेश के लिए उपलब्ध करवानी होती हैं, उन सुविधाओं को वे शत्रु, बलपूर्वक अपने लाभ के लिए प्रयोग में लाते रहते हैं। वैसी हालत में भी, राजा बीहड़-देशों से ही, प्रगल्भज्ञानी के समकक्ष अधिकारी को आमंत्रित करवाता है, जो सारी प्रक्रिया को शीघ्र ही सुधार देता है, क्योंकि वह उन तुच्छ शत्रुओं के आगे कतई नहीं झुकता, और प्रस्तरज्ञानी को हटाकर ही दम लेता है। इस तरह से, प्रस्तरज्ञानी-प्रदत्त सुविधाओं के क्षीण होने से, वे चतुर शत्रु भी बहुत क्षीण हो जाते हैं, और कई बार देहदेश के द्वारा शीघ्र ही मिटा भी दिए जाते हैं।

देहदेश के राजदरबार में अनेक प्रकार की संगीत-मंडलियाँ, नृत्य-मंडलियाँ, स्तुतिगान-मंडलियाँ, हास्यविनोद-मंडलियाँ व साहित्य-मंडलियाँ विद्यमान होती हैं। वे सभी मंडलियाँ राजा की सेवा में सदैव उपस्थित रहती हैं। उन मंडलियों के चित्र-विचित्र कलाकार, राजा को प्रसन्न रखने का हरसंभव प्रयास करते रहते हैं। विभिन्न कारणों से, जब राजा को अवसाद होने लगता है, तब वे मंडलियाँ उसकी सेवा में उपस्थित हो जाती हैं, और उसे प्रसन्न कर देती हैं। राजा जी के अत्यधिक काम के बोझ के समय भी वे उन राजा का मनोरंजन करती हैं। वे मंडलियाँ राजा के आदेश पर, एकदम से अपने साजो-सामान के साथ उपस्थित हो जाती हैं। महामारी या युद्धादि के समय भी, तद्संबंधित नाटक-मंडली अपनी कला के प्रदर्शन से राजा की पीड़ा को हर लेती है। जब राजा प्रेमरस में निमग्न होना चाहता है, तब भी वे विशिष्ट मंडलियाँ अपने हृदयस्पर्शी नृत्य-गीतों से राजा के मन को प्रेम से भर देती हैं। जब सुबह के समय राजा सोकर उठता है, तब स्तुतिगान-मंडली उसकी स्तुति करने, गाजे-बाजे के साथ उसके शयनकक्ष में उपस्थित हो जाती है। इसी तरह, राजा के सोते समय भी राग-मंडली वहाँ पहुंच कर, सुन्दर राग सुना कर, उसको मीठी नींद सुला देती है। जब राजा युद्ध जीत कर आता है, तब गुणगान-मंडली उसे आह्लादित करने, उसके दरबार में पहुँच जाती है। उसी तरह, जब राजा किसी विशेष विकासात्मक अभियान को सफलतापूर्वक पूर्ण करता है, तब भी वह मंडली राजा की सेवा में उपस्थित हो जाती है। जब राजा काम के व अन्य विभिन्न उत्तरदायित्वों के बोझ से बेचैन हो जाता है, तब शान्तिरागों को गाने

वाली मंडली राजा को शान्ति से सरोबार कर देती है। यदि उस मंडली से भी राजा को पूर्ण शान्ति न मिले, तब योग-मंडली राजा की सेवा में उपस्थित हो जाती है। वह राजा से शान्तिदायक योगाभ्यास करवा कर, उसे शाँतिलोक में पहुंचा देती है। किसी विकासात्मक या सुरक्षात्मक अभियान को सफल बनवाने के लिए, एक विशेष प्रोत्साहक-मंडली को बुलवाया जाता है, जो राजा को सकारात्मक बनाते हुए, उसके तनाव व उसकी उदासी को दूर भगा देती है। रोग, युद्ध आदि, तथा अन्य संकटपूर्ण व भयपूर्ण परिस्थितियों में; राजा के सामने युद्धघोष-मंडली उपस्थित रहती है। वह शंखनाद आदि विभिन्न युद्धघोष-वाद्यधुनों से राजा की ऊर्जा, शक्ति, स्फूर्ति व उसके उत्साह को कई गुना बढ़ा देती है। उनसे राजा अद्वैतपूर्ण बन जाता है, जिससे उसका भय भी छूमंतर हो जाता है। इस तरह से, वह मंडली राजा को शत्रुओं का चक्रव्यूह आदि भेदने में और यहाँ तक कि आवश्यकता पड़ने पर, वहाँ से निकल भागने में भी सहायता करती है। राजा को शक्तिदायक खुराक व औषधि पिलाने वाले लोग भी उस दल में शामिल होते हैं। वह मंडली विभिन्न प्रकार के संबंधित रागों, वाद्य-धुनों व स्तुतिगानों से राजा को असीम शक्ति प्रदान करते हुए, उसे सान्त्वित करती रहती है। ऐसी ही विकट परिस्थितियों में, उस मंडली के सान्निध्य से, राजदरबार में स्थित मंत्रीगण भी असीम शक्ति प्राप्त करते हैं, और पूरे देश को सतर्क व क्रियाशील करवा देते हैं। उससे सुरक्षाव्यवस्था का प्रबंधन यकायक बढ़ जाता है। साथ में, अस्त्र-शस्त्र भी सज्ज हो जाते हैं। सुरक्षा से जुड़ी व्यवस्थाओं की ओर खाद्य-पानी व अन्यावश्यक विभिन्न साजो-सामान की आपूर्ति भी अत्यधिक रूप से बढ़ जाती है। खाद्यपदार्थों व अन्य सभी वस्तुओं के भंडारगृहों के दरवाजों पर, वर्षों से लटके हुए ताले भी खुलवा दिए जाते हैं, और वहाँ से पूरे देश के लिए, उनका व्यवधानरहित व यथावश्यक आबंटन प्रारम्भ कर दिया जाता है। उस मंडली के कलाकलापों से राजा एक प्रकार का सात्विक/सुखप्रद नशा जैसा भी अनुभव करता है, जिसके प्रभाव से दुःख-दर्द अनुभव करने की उसकी शक्ति भी बहुत घट जाती है।

समय-समय पर, देहदेश में सफाई अभियान भी चलाया जाता रहता है। उस अभियान में, सीमाभित्ति पर उगी हुई घनी व कंटीली झाड़ियों को काटा जाता है। वे लम्बी झाड़ियाँ विशेषतः देश की उत्तरी सीमा पर बहुतायत से पनप जाती हैं, क्योंकि वहाँ पर उन्हें अपनी बढ़ोत्तरी के लिए अनुकूल पर्यावरण मिल जाता है। वहाँ पर नमी भी अधिक होती है, और भूमि में पोषक तत्त्वों की भी भरमार होती है। उन झाड़ियों में घुसपैठिए छिपे होते हैं, जिनके बीच में कई बार उग्रपंथी तत्त्व भी मौजूद होते हैं। झाड़ियों का कटान शुरु होते ही, वे इधर-उधर भाग जाते हैं। सीमाभित्ति

के आसपास के गड्ढों में, कंदराओं में व चट्टानों के बीच में भी बहुत से घुसपैठिए छिपे रहते हैं। वे सीमा के अन्दर से छोटा-मोटा सामान चुराकर, अपनी आजीविका चलाते रहते हैं। सामान के खाली लिफाफों (polybags) व पैकेटों (packets) को, वे वहीँ इधर-उधर फ़ेंक देते हैं, जो अन्य संभावित घुसपैठियों को भी आकर्षित करते रहते हैं, और छिपने में भी उनकी सहायता करते हैं। राजा उन गंदगियों को हटवा कर, सीमाक्षेत्र को बराबर साफ-सुथरा करवाता रहता है। उससे उन घुसपैठियों का प्रकोप काफी कम हो जाता है। वैसे तो उनमें कुछ मित्र-घुसपैठिए भी होते हैं, फिर भी उनके ऊपर विश्वास करना कठिन होता है। उनके ऊपर किया गया विश्वास, कई बार नुकसानदायक भी सिद्ध हो जाता है। हवाई अड्डों पर उगी हुई घास को भी काट दिया जाता है। उस घास से, वायुयानों को उड़ान भरने (take off) व उतरने में, कई कठिनाइयां सामने आती रहती हैं, जिससे देश के व्यापार व अर्थव्यवस्था के ऊपर दुष्प्रभाव पड़ता है। इसी तरह से, खेती के विभिन्न उपकरणों, उद्योगों के विभिन्न यंत्रों व अन्य चित्र-विचित्र प्रकार के लघु यंत्रों की भी समय-समय पर साफ-सफाई व सर्विसिंग (servicing) की जाती रहती है। वास्तव में, समय के साथ-साथ, विभिन्न उपकरणों व यंत्रों के ऊपर जंग आदि भी लगता रहता है, जिससे उनकी कार्यक्षमता घटती रहती है। वैसे भी वे काम करते हुए, घिसते-पिटते रहते हैं, विशेषतः जब उनका स्नेहक-तेल (lubricating oil) सूख जाता है। यदि वे साफ-सफाई से भी पूरी तरह से ठीक न हो पाए, तो उन्हें बदलते भी रहना पड़ता है। पूरे देश के सभी यंत्रों व उपकरणों की एक निश्चित आयुसीमा (lifetime) व मृत्युतिथि (expiry date) होती है। आयुसीमा पूरी होते ही, पुराने उपकरणों के स्थान पर नए उपकरण लगा दिए जाते हैं, यहाँ तक कि सीमाभित्ति को भी निश्चित अंतराल पर बदल दिया जाता है। उससे पूरे देश की कार्यक्षमता सर्वोत्तम बनी रहती है, और साथ में, किसी दुर्घटना आदि की आशंका भी नहीं रहती। बदले गए पुराने उपकरणों को कबाड़ी लोग इकट्ठा कर लेते हैं, और उन्हें परिष्करण-उद्योगों को भेज देते हैं। वहाँ पर उन टूटे-फूटे उपकरणों व यंत्रों को, उनके विभिन्न हिस्सों में अलग-थलग करके, उनसे पुनः बहुमूल्य उपकरण व यंत्र बना लिए जाते हैं। उस अद्वैतपूर्ण देश में अधिकाँश पुराना सामान, परिष्करण के बाद दुबारा से प्रयोग में (recycling) लाया जाता है। इस तरह से हम देख सकते हैं कि देहदेश में संसाधनों की बर्बादी कम से कम की जाती है।

पूर्वोक्तानुसार; राजा देहदेश में युद्धाभ्यास, व्यायामाभ्यास, क्रीड़ाभ्यास आदि भी करवाता रहता है। यदि वैसे अभ्यास न करवाए जाएं, तो वास्तविक युद्ध, विद्रोह आदि के समय, व दुर्भिक्ष,

महामारी, बाढ़ आदि प्राकृतिक आपदाओं के समय भारी कठिनाई का सामना करना पड़ सकता है। उस अभ्यास के बहाने से, सड़कें व अन्य आधारभूत संरचनाएँ भी दुरस्त करवा दी जाती हैं। उससे सैनिकदेहपुरुषों में चुस्ती छा जाती है, और उनके शरीर फुर्तीले बन जाते हैं। उनके शरीर में रक्तसंचार बढ़ जाता है, जिससे उनके तन-मन को समुचित पोषण प्राप्त होता है। मस्तिष्क को समुचित पोषण मिलने से, उनका मन सकारात्मकता, ताजगी व उमंग से भर जाता है। उससे उनके शरीर को उचित मात्रा में प्राणवायु भी उपलब्ध हो जाती है, और शरीर के विजातीय पदार्थ आसानी से बाहर निकल जाते हैं। उन अभ्यासरत देहपुरुषों की देखा-देखी में, देश के अन्य पुरुष भी जी-जान से अपने-अपने कामों में जुट जाते हैं। यदि काम न हो, तो वे भी उन्हीं की तरह, अपने तन-मन को फुर्तीला रखने के लिए खेलों, व्यायाम व योग आदि के ऊपर समुचित ध्यान देने लग जाते हैं। योग के तो वे बहुत शौक़ीन होते हैं, क्योंकि स्वभाव से भी वे अद्वैतशील योगी की तरह ही तो होते हैं।

कई घुसपैठिए नौटंकीबाज भी होते हैं, जो वेष बदलने में माहिर होते हैं। जैसे ही गुप्तचर लोग उनको देश के अन्दर देखते हैं, वैसे ही वे उनकी शक्लों के व उनके हुलियों के चित्र (photographs) खींच लेते हैं। फिर वे उन चित्रों को लेकर, रक्षा-विभाग के कार्यालय में पहुंचते हैं, और उसे पूरी वस्तुस्थिति से अवगत करवाते हैं। रक्षाविभाग भी उन चित्रों की बहुत सी प्रतियां निकलवा कर, उन्हें अपने सभी सैनिकों को उपलब्ध करवा देता है, और उनको युद्ध के लिए कूच करने का आदेश भी दिलवा देता है। परन्तु जब सैनिक, गुप्तचरों द्वारा सूचित किए गए ठिकानों पर पहुंचते हैं, तब उनके द्वारा उपलब्ध कराए गए चित्रों से मिलते-जुलते, कोई भी लोग उन्हें वहाँ पर दिखाई नहीं देते हैं। वास्तव में, तब तक वे घुसपैठिए अपना हुलिया पूरी तरह से बदल चुके होते हैं। इस तरह से, सुरक्षाबल बार-बार उनसे गच्चा खाते रहते हैं। वे चतुर घुसपैठिए, बार-बार गुप्तचरों व सुरक्षाबलों को, इसी तरह से धोखा देते रहते हैं, और धीरे-धीरे करके, पूरे देश में छा जाते हैं।

देहदेश में बहुत से गुणवान अधिकारियों की कमी होती है। वह देश सुख-सुविधाओं से संपन्न होता है, इसलिए वहाँ के मानव-संसाधन, भोग-विलास की चपेट में आ जाते हैं, और अपनी गुणवत्ता खोने लगते हैं। अतः देश का कामकाज सुचारू रूप से चलने के लिए कुछ गुणवान लोगों को, बाहर के बीहड़ों से आप्रवासित (immigration) किया जाता रहता है। वास्तव में, बाहर बीहड़ों में बहुत से छोटे-छोटे व मूर्ख जैसे देश विद्यमान होते हैं। उन देशों में भूमि की, संसाधनों

की व लोगों की कमी होती है। यदि किन्हीं देशों में ये प्रचुर मात्रा में उपलब्ध भी होते हैं, तो भी वहां के लोगों में, विशेषतया प्रशासक लोगों में दिमाग की व सूझ-बूझ की कमी होती है। इसलिए वे देश पिछड़े हुए होते हैं। परिणामतः उन देशों के लोगों को निरंतर ही बहुत सी समस्याओं का सामना करते रहना पड़ता है। वहाँ की जलवायु व वहाँ के मौसम भी प्रतिकूल होते हैं। वे लोग अन्य भी बहुत सी विकट परिस्थितियों में रहते हैं। उन्हें पूरी तरह से स्वावलंबी बन कर रहना पड़ता है; क्योंकि उनके अन्दर आवश्यकताधिक आत्मसम्मान की भावना व स्वाभाविक मूर्खता के कारण, उनके बीच में एक-दूसरे के प्रति सहयोग की भावना भी बहुत कम होती है। उनकी अर्थव्यवस्था बहुत छोटी और साधारण होती है। उन देशों में बड़े व विकसित देशों के जैसी सुख-सुविधाएँ नहीं होतीं। ऐसे ही विभिन्न कारणों से, वहाँ पर रहने वाले बहुत से लोगों में, अनेक प्रकार के दिव्य गुण विकसित हो चुके होते हैं। यद्यपि प्रोत्साहन व योजनाबद्धता की कमी से, वे लोग, विशेषतः अधिकारी लोग अपने देश में कुछ विशेष काम नहीं कर पाते, परन्तु विशाल देहदेश में बस जाने के बाद, वे वहाँ पर बहुत परिश्रम करते हैं, और उसकी प्रगति में बहुत बड़ी भूमिका निभाते हैं। उनमें से कई अधिकारी तो इतने आवश्यक होते हैं कि उनके बिना देहदेश अपने को सुव्यवस्थित व सुचारू रूप में बना कर रख ही नहीं सकता। कुछ अतिमहत्त्वपूर्ण अधिकारियों के बिना तो देश विघटित ही हो जाए। वे अधिकारी लम्बे समय तक अपनी सेवाएं देकर, सेवानिवृत्त हो जाते हैं, और अपने मूलदेश को वापिस चले जाते हैं। उनके द्वारा सेवित देहदेश उनको बहुत सारे अनुवृत्ति-धन (pension sum) के साथ ससम्मान विदा करता है। कई बार गुणवान विदेशी नागरिक आवश्यकता से अधिक संख्या में भी देहदेश में पहुँच जाते हैं, जिन्हें भी ससम्मान अपने देश को वापिस भेजा जाता रहता है। फिर सेवानिवृत्त अधिकारियों के रिक्त पड़े पदभारों को सँभालने के लिए, पुनः नए अधिकारियों को आमंत्रित किया जाता है। बदले में, देहदेश भी उन आमंत्रित अधिकारियों के मूलदेशों की बहुत सहायता करता है, और उन्हें सुरक्षासहित बहुत सी सुविधाएँ उपलब्ध करवाता है। लेखक ने एक बार देखा कि देहदेश में वामना उपनाम के सभी अधिकारी सेवानिवृत्त हो गए थे, परन्तु नए अधिकारी मिल नहीं रहे थे। उससे उसके अधिकारक्षेत्र के अधिकाँश कार्य दुष्प्रभावित होने लग गए। कैमरामैनों (cameramen) के कैमरे रिपेयर (repair) नहीं किए जा रहे थे, जिससे उनके द्वारा खींचे गए विभिन्न चित्रों की गुणवत्ता (quality) बहुत घट गई थी। वे चित्र राजा को पसंद नहीं आ रहे थे। रक्षाविभाग भी सुस्ताने लग गया था। विभिन्न सीमा-भित्तियों का ठीक ढंग से रखरखाव नहीं

किया जा रहा था। संविधान का पालन भी ठीक ढंग से नहीं किया जा रहा था। उपरोक्त सभी दुष्प्रभावों से गंभीर स्थिति उत्पन्न होने पर, राजा को वस्तुस्थिति से अवगत करवाया गया। उसने मूलसमस्या का पता लगाने के लिए, विभिन्न उपायों का आश्रय लिया। पता लगने पर, उसने अपने राजदूत को उन छोटे देशों की यात्रा पर, विशेषतः रक्तपुर नामक देश की यात्रा पर भेजा, जिन्होंने अपने नागरिकों के, विशेषतः गुणवान व शिक्षित नागरिकों के उत्प्रवास (emigration) के ऊपर पाबंदी (ban) लगाई हुई थी। अतः उन देशों के साथ बहुत सी संधियों पर हस्ताक्षर किए गए। वास्तव में, वह बड़ा देश उन छोटे देशों को उचित सुरक्षा व संसाधन उपलब्ध नहीं करवा रहा था, और कई बार तो वह उनके ऊपर अतिक्रमण (encroachment) करने का प्रयत्न भी कर रहा था। बड़े देश का छोटे देशों के साथ सफल समझौता हो गया था, जिसके अनुसार बड़े राजा ने छोटे राजाओं की भरपूर सहायता करना प्रारम्भ कर दिया। बदले में, छोटे राजाओं ने भी उत्प्रवास पर लगाई गई पाबंदी को हटवा दिया, जिससे बड़े देश को भी कुशल अधिकारी पर्याप्त संख्या में उपलब्ध होने लग गए। रक्तपुर नाम इसलिए पड़ा है, क्योंकि उस देश के लोगों को लाल रंग बहुत पसंद है, और उनका राष्ट्रीय ध्वज भी लाल रंग का ही है।

एक बार लेखक ने देखा कि शाकालीन नामक एक देहदेश में थाबरमण उपनाम के अधिकारियों की कमी चल रही थी। पूरे देश में, उनका पदभार संभालने के लिए आवश्यक योग्यता, किसी भी नागरिक में नहीं थी। उससे उन अधिकारियों के कार्यक्षेत्र दुष्प्रभावित हो रहे थे। उन कार्यक्षेत्रों में मुख्य थे; यातायात-विभाग, ऊर्जा-विभाग, सूचना एवं प्रसारण विभाग, संचार-विभाग, केन्द्रशासित राष्ट्रीय-राजधानी का रखरखाव, रक्षा-विभाग, जलशोधन विभाग आदि। वास्तव में, एक ही विभाग में भी कई-कई अधिकारियों का नियंत्रण होता है, यद्यपि उनके कार्यों में कुछ न कुछ अंतर तो होता ही है। परन्तु कई बार, एक ही कार्य को भी कई अधिकारी, उत्कृष्ट सहयोगात्मक ढंग से कर रहे होते हैं। वैसी सहयोगात्मकता तो अद्वैत से ही संभव हो सकती है, क्योंकि द्वैत से कुछ न कुछ मनमुटाव तो रहता ही है, जो कार्य को व कार्यकर्ताओं के बीच के आपसी सम्बन्ध को दुष्प्रभावित करता है। इस तरह से, क्योंकि सूचना एवं प्रसारण विभाग दुष्प्रभावित हो रहा था; अतः यह स्वाभाविक ही था कि वह विभाग, वैसे चित्र-विचित्र प्रकार के कार्यक्रमों को प्रसारित कर रहा था, जिनमें न तो लयबद्धता थी, न शालीनताथी, व न ही अद्वैत की धारणा विद्यमान थी। उन कार्यक्रमों को देख-सुन कर, सभी देशवासी भी अवसादग्रस्त हो गए थे, और उनका मन भी दोलायमान व उचाट (swinging mind) जैसा रहने लग गया था। वैसे

फिर भी वहाँ के लोग अद्वैत को नहीं छोड़ते हैं। उनकी अद्वैतनिष्ठा भी गजब की होती है। मनोदोलन भी अद्वैत के साथ व अवसाद भी अद्वैत के साथ। आश्चर्यमयी व्यक्तित्व होता है उनका। अद्वैत के कारण वे सभी दुष्प्रभावों से अछूते रहते हैं। हमारे जैसे अपेक्षाकृत द्वैतशील पुरुष भी अभ्यास से, उनके जैसे बन सकते हैं। खैर, देश के अन्य अधिकारियों व मंत्रियों ने स्थिति को संभालने के लिए, अपनी जी-जान लगा दी। परन्तु जब अति हो गई, तब राजा को भी सूचित किया गया। राजा ने जब छानबीन करवाई, तो पता चला कि वह मामला, विदेशनीति की किसी विशेष चूक से नहीं, अपितु विदेशविभाग की एक छोटी सी लापरवाही से ही हुआ था। क्योंकि विदेशविभाग का पूरा उत्तरदायित्व राजा के पास ही होता है, अतः उसमें राजा ही दोषी था। विदेशों में, विशेषतः चक्रपुर व मसनपुर नामक देशों में, पर्याप्त संख्या में योग्य उम्मीदवारों के विद्यमान होने पर भी, राजा ने उन्हें अपने देश में काम करने के लिए, निमंत्रण नहीं दिलवाया था। राजा ने तुरंत अपनी भूल को सुधारते हुए, अपने दिव्य विमानों को उन तथाकथित गुणवान लोगों को ससम्मान लाने के लिए रवाना कर दिया। वापिस शाकालीन में पहुंचते ही, उन गुणवानों को उनके दायित्व समझा दिए गए, और वे अपने-अपने कामों में उसी दिन से जुट गए। धीरे-धीरे उन्होंने देश की बिगड़ती हालत को सुधार दिया।

नरमदल के अधिकाँश अधिकारी, परन्तु चिपकू उपदल को छोड़कर, देश के ऊर्जाविभाग में बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। रबलुद्दीन उपनाम के नरमदल-अधिकारी देश की विभिन्न अंतर्देशीय (intranational) व अंतरादेशीय (international) सीमाभित्तियों, वाहन उद्योगों (vehicle factories) व अन्य विभिन्न उद्योगों में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये अधिकारी देश के सूचना उद्योग में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये उस विभाग के कैमरों के लेंसों (camera-lenses) की निर्माणशालाओं (factories) का उत्तरदायित्व भी संभालते हैं। ये विदेशी-परिचायक का काम भी करवाते हैं। ये छोटे देशों के महत्त्वपूर्ण लोगों का परिचय विदेशमंत्रालय से करवाते हैं, और उनकी महत्ता बताते हुए, उन्हें अपने देश में आने की अनुमति देने के लिए राजी करवाते हैं, ताकि उस मंत्रालय को उन्हें शरण देने में कोई शंका व हिचकिचाहट न हो। नवदेशनिर्माणविभाग में भी सेवा देते हुए, ये अधिकारी नवदेश को, विकास के लिए प्रोत्साहित करते हैं। ये अधिकारी राष्ट्रीय राजधानी में नाटक-मंडलियाँ आदि भिजवा कर, वहाँ के मंत्रियों व अधिकारियों के मानसिक तनावों को भी कम करते रहते हैं। ये नरमदल-अधिकारी अन्य कुछ अधिकारियों की तरह अड़ियल नहीं होते। इसलिए यदि ये आवश्यकता से अधिक संख्या में

भी देश के अन्दर प्रविष्ट हो जाएं, तो भी समस्या नहीं आती, क्योंकि जब उन्हें वस्तुस्थिति समझाई जाती है, तब वे अपने कुछेक साथियों को वहीँ छोड़कर, अपने घर वापिस लौट जाते हैं। बहुत बिरले मामलों में ही, ये आवश्यकता से बहुत अधिक संख्या में होने पर ही, शरणदाता देश में हल्का-फुल्का बवाल भी मचा देते हैं।

नरमदल संगठन के नयपुरी उपनाम के अधिकारी भी अपने संगठन के पूर्वोक्त निर्दिष्ट कामों को भली भांति करते हैं। साथ में, अतिरिक्त रूप से ये देश के विशालतम परिष्करण-संयंत्र व अन्य छोटे-मोटे उद्योगों में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये यातायात की समस्याओं को भी सुधारते हैं। ये देश के विद्रोही लोगों को शाँत करने में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये अधिकारी निमंत्रितदेश व निमंत्रकदेश के बीच में बने हुए पूर्वोक्त पुल को क्षतिग्रस्त होने से बचाते हैं, और क्षतिग्रस्त पुल को ठीक भी करवाते हैं। उससे स्वयंवर के लिए जा रहे राजकुमारों को समस्या का सामना नहीं करना पड़ता।

शायद देहपुरुष अद्वैत रूप अर्थात द्वैताद्वैत रूप होते हैं। अद्वैत को धारण करने से, आदमी नशेड़ी के जैसा भी लगता है। वह जागते हुए भी, सोया हुआ सा लगता है। वह काम करते हुए भी, निकम्मा जैसा लगता है। वह होश में होते हुए भी, बेहोश जैसा लगता है। वह जीवित होते हुए भी, मृत जैसा लगता है। वह स्वस्थ होते हुए भी, रोगी जैसा लगता है। वह चुस्त व तरोताजा होते हुए भी, सुस्त व थका हुआ सा लगता है। परन्तु वास्तव में वह इन सभी से अलग, एक दिव्यमानव जैसा होता है। वह विचारों के साथ होता है, परन्तु विचारशून्य सा लगता है। यही अद्वैतावस्था या द्वैताद्वैतावस्था होती है, जिसे भावाभाव की अवस्था (trans state) भी कहते हैं। उसमें भाव (presence) भी होता है, और अभाव (absence) भी। दूसरे शब्दों में यदि कहें, तो न तो उसमें भाव होता है, और न ही अभाव।

पंथक उपनाम के नरमदल-अधिकारी भी नरमदल के सभी, समान रूप से निर्दिष्ट (common to all) कार्यों को करते हैं। ये भी अन्य सभी नरमदल के अधिकारियों की तरह ही मसीपुर, अंडमानपुर, मश्कपुर, हरितपुर व लागपुर नामक छोटे-छोटे देशों के निवासी होते हैं।

नरमदल के प्रज्ञास्तानी उपनाम के अधिकारी भी अपने दल के लिए निर्धारित सभी पूर्वोक्त कामों को करते हैं। यद्यपि इस उपनाम के सदस्य सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण होते हैं। ये विभिन्न अधिकारियों को नियंत्रित करते हैं, और ये स्वास्थ्यविभाग से भी जुड़े होते हैं। साथ में, ये निम्नोक्त बाबादास उपनाम के अधिकारियों की नियुक्ति भी करवाते हैं। अपने बहुत से दलमित्रों की तरह,

ये भी संचारविभाग को अपनी सेवाएं देते हैं। राष्ट्रीय राजधानी की मनोरंजक टोलियों को भी ये नियंत्रित करते हैं। नवदेश में तो ये विभिन्न संरचनाओं के विकास व उसके सुरक्षाविभाग की देखरेख भी करते हैं। ये लोगों को प्रातः-रोग (morning sickness) नामक बीमारी से भी बचाते हैं, क्योंकि ये उन्हें सुबह-सुबह जल्दी उठा कर, योग, प्रातःभ्रमण आदि करने के लिए प्रोत्साहित करते रहते हैं। नवदेश में तो ये संचार-विभाग को, उस अतिसक्रियता से भी बचाते हैं, जिसमें वहाँ के लोग सूचनाओं के बोझ से पागल जैसे हो जाते हैं। वास्तव में, नवदेश में अराजकता की तरह के वातावरण का लाभ उठाते हुए, बहुत से लोग अपनी-अपनी गोटियाँ खेलते हुए, पूरे देश पर अधिकार जमाना चाहते हैं। इसलिए वे अफवाहों का बाजार गर्म कर देते हैं, और गलत सूचनाओं की भरमार से लोगों को गुमराह कर देते हैं। ये अधिकारी भी मूलतः पूर्वोक्त छोटे-छोटे देशों के निवासी ही होते हैं।

बाबादास उपनाम के अन्य नरमदल-अधिकारियों के निम्नलिखित विशिष्ट काम होते हैं; विशाल छापेखाने (press) में संविधान की बहुत सी प्रतियां छपवा कर तैयार रखना, ताकि वे सभी लोगों को और नवदेशों को भी समयानुसार उपलब्ध करवाई जा सकें; यातायात-वाहनों का निर्माण, विभिन्न निर्माण-सामग्रियों का उत्पादन, विभिन्न वस्तुओं को भंडारण-योग्य बनाना व सभी लोगों तक उनका समुचित वितरण सुनिश्चित करना, विभिन्न अधिकारियों की सेवाओं का हिसाब-किताब रखना व संचार-विभाग का रख-रखाव करना आदि-आदि। ऊर्जा के उत्पादन में तो लगभग सभी नरमदल-अधिकारियों का हाथ होता है। ये बाबादास अधिकारी अपने पूर्वोक्त साथियों से इसलिए कुछ भिन्न होते हैं, क्योंकि यदि ये आवश्यकता से अधिक संख्या में भी देश के अन्दर प्रविष्ट हो जाएं, तो भी इनको वापिस बाहर नहीं भेजा जाता, अपितु देश में ही बसा कर रखा जाता है, ताकि आपातकाल में या इनके जैसे/इनके समकक्ष अन्य अधिकारियों के सेवानिवृत्त होने पर, इन्हें नियुक्त किया जा सके, और बाहर से इनको बार-बार न बुलाना पड़े। फिर भी उनके लिए निर्मित की गई रिहायशी/आवासीय बस्तियों (residential colonies) के भर जाने पर तो अतिरिक्त लोगों को वापिस भेजना ही पड़ता है। ये अधिकारी अपने आत्मसम्मान का बहुत ध्यान रखने वाले भी होते हैं। यदि इन्हें सही तरीके से न बुलाया जाए, तो ये आते भी नहीं। वैसे तो सभी विदेशी नागरिक अपने आत्मसम्मान की रक्षा करते रहते हैं, परन्तु ये तो कुछ ज्यादा ही करते हैं। कई बार पुराने देश तो इनके आप्रवास के पक्ष में कम ही होते हैं, इसलिए उन देशों के ऊपर दबाव बनाने के लिए, इस दल के बहुत से विदेशी अधिकारी इकट्ठे होकर, सम्बंधित दूतावास के बाहर

आन्दोलन भी करते हैं। फिर वे देश दबाव में आकर, उनके आप्रवास पर लगी अस्थायी रोक को हटा देते हैं। वैसे, वे ही विदेशी अधिकारी अच्छे होते हैं, जो प्राकृतिक रूप से अपने मूलदेश के रहने वाले होते हैं। उनके मूलदेशों को सदियों से इस बारे में सब कुछ पता होता है कि किस-किस क्षेत्र या व्यवसाय से सम्बंधित, कितने-कितने लोग निमंत्रकदेश को भेजे जाने हैं। उससे अराजकता जैसी स्थिति उत्पन्न नहीं होती, और निमंत्रकदेश के लिए भी कोई खतरा पैदा नहीं होता। परन्तु कई बार अपने लाभ के लिए, कोई विकसित देश अंतरदेशीय बीहड़ों में ही उन अधिकारियों के जैसे लोगों को, कृत्रिम प्रशिक्षण आदि दिलवा कर, काम के लिए तैयार करवा लेता है। उससे बड़े देश के, समय, संसाधन व ऊर्जा, तीनों की भारी बचत तो हो जाती है, परन्तु वे अधिकारी कुछ असामाजिक जैसे होते हैं, जिससे उनके कारण कई बार स्थिति नियंत्रण से बाहर भी हो जाती है, और विरले मामलों में तो देश के लिए गंभीर स्थिति भी उत्पन्न हो जाती है। इस उपनाम के अधिकारी विदेशी आयात को भी प्रोत्साहित करते हैं। वे देश के भंडारों को भी भरा हुआ रखवाते हैं, देश के काम-धंधों को चलायमान रखवाते हैं, और सभी नागरिकों तक ऊर्जादायक खाद्य-पेयों की आपूर्ति भी करवाते हैं। ये देश को अपने पैरों पर खड़ा होकर, स्वावलंबी रूप से स्थित रहने में भी सहायता करते हैं, और उसे पराश्रित नहीं होने देते। ये संचारविभाग के उपकरणों, तारों (cables) व अन्य यंत्रों का रख-रखाव करते हैं, और उनकी ठोक-मुरम्मत भी करते रहते हैं। विभिन्न वाहनों के निर्माण में सहायता करके, ये देश के किसी भी भाग में, किसी भी वस्तु की कमी नहीं होने देते।

उसी नरमदल में उपस्कर उपनाम के, अन्य सभी से अलग-थलग जैसे रहने वाले अधिकारी भी शामिल होते हैं। वे बहुत गर्वीले, चटकीले व क्षणभर में ही रूठ कर चले जाने वाले होते हैं। यहाँ तक कि फिर वे अपने मूलदेश को भी छोड़ देते हैं, यदि उनके मान-सम्मान को जरा सी भी ठेस पहुँच जाए, व उनकी सुविधाओं का उचित ध्यान न रखा जाए। वे बहुत ही संवेदनशील होते हैं। उनके उसी गर्व के कारण, बड़े देश के लिए उनको अपने देश में, कुछ समय के लिए भी ठहरा कर रख पाना बहुत मुश्किल होता है। वे केवल अपने काम से काम रखते हैं। यदि कुछ काम न हो, तो वे तुरंत उस निमंत्रकदेश को अलविदा कह देते हैं। इसलिए बड़े देश को उन्हें बार-बार और अधिक संख्या में बुलाते रहना पड़ता है। उनके काम भी नरमदल के अन्य सदस्यों से काफी अलग होते हैं। वे अधिकारी देश की विभिन्न संरचनाओं के निर्माण, उनके रखरखाव व उनकी ठोक-मुरम्मत में अहम भूमिका निभाते हैं। वे सुरक्षा-प्रणाली में भी सहायता करते हैं। हल्के-फुल्के आक्रमण की

स्थिति में तो वे स्वयं ही आगे आकर, आक्रमणकारियों से भी भिड़ जाते हैं। देश के पश्चातोक्त मध्यमार्ग के प्रारम्भ में, मुख्यद्वार के आसपास, वे आयातित वस्तुओं के वर्गीकरण करने वाले, उनको चढ़ाने-उतारने (loading-unloading) वाले व अच्छी तरह से पैक (pack) करने वाले लोगों की सहायता भी करते रहते हैं। वे सड़कों के किनारों पर दुर्घटनावरोधक भित्ति (parafits) लगाने वाले लोगों की भी सहायता करते हैं, ताकि उन पर दौड़ रहे विभिन्न वाहन, सड़क से बाहर गिरकर दुर्घटनाग्रस्त व क्षतिग्रस्त न हो जाएं। यद्यपि बहुत ही अधिक संख्या में होने पर, वे भी अन्य विदेशी अधिकारियों की तरह ही एक-दूसरे से ईर्ष्या व कलह करने लग जाते हैं, जिससे कई बार उनसे गलत काम भी हो जाते हैं। ऐसे में, कई बार वे विशाल जलशोधन संयंत्र के परिसर के अन्दर घुस जाते हैं, और वहाँ के कर्मचारियों से उल्टे-सीधे काम करवा देते हैं। कई बार तो उनके किसी संगठन को भड़का कर, उनसे आन्दोलन व आँशिक चक्काजाम भी करवा देते हैं। इसी तरह, कई बार विशाल जलधक्का यंत्र के काम को भी वे हल्के-फुल्के अंदाज में दुष्प्रभावित कर देते हैं।

देहदेश में नरमदल से अलग होकर, एक उपदल भी निकलता है। उसका नाम चिपकूदल है, क्योंकि उस दल के लोग यदि एक बार किसी विकसित देश के अन्दर घुस जाए, तो बाहर ही नहीं निकलते। यदि वे संख्या में अधिक हों, तो उन्हें देश के उपयुक्त निवास-स्थान पर बसा कर रखना पड़ता है। उससे देश को बहुत सा अनावश्यक खर्च वहन करना पड़ता है। यद्यपि उसका एक लाभ यह होता है कि आपातकाल में वे देश के काम आते रहते हैं। यदि उनकी संख्या सहनसीमा (tolerable limit) से परे चली जाए, तो उन्हें बलपूर्वक व धीरे-धीरे करके, निकाला भी जाता रहता है। देश उनके संख्या-विस्फोट को नियंत्रित करने के लिए, उनके आप्रवास पर अस्थायी रूप से रोक भी लगवा देता है। पूर्ववर्णित वामना-अधिकारी भी इसी उपदल के सदस्य होते हैं। उनमें से ही एक अधिकारी-वर्ग, वडेलाल उपनाम के नरमदल-अधिकारियों से बना है, जिनका वर्णन पहले भी आया है। ये पार्थमन के सहयोगी होते हैं। इनकी मुख्य विशेषता यह होती है कि ये बहुत ही नैष्ठिक सूर्यभक्त होते हैं। जिस विकसित देश के लोग, सामूहिक रूप से सूर्यदेव के सामने खड़े होकर, न्यूनतम वस्त्रों में, उसकी भक्तिभाव से वन्दना करने लगते हैं; ये अधिकारी उस देश के प्रति आकृष्ट होकर, उसकी सेवा करने के लिए, बिना निमंत्रण के ही रवाना हो जाते हैं।

टगर उपनाम के चिपकूदल-सदस्य मस्तमौले व मनमौजी स्वभाव के होते हैं। ये हरफनमौला (alrounder) भी होते हैं, और लगभग प्रत्येक स्थान पर आसानी से उपलब्ध भी हो जाते हैं। फिर भी ये बदनामदेश, आर्यख़टदेश व कजारीस्थानदेश में मूलरूप से निवास करते हैं। शंकर की तरह,

यदि ये भोले हैं, तो क्रोध भी इनको बहुत शीघ्र आ जाता है। इसलिए इनको सही तरीके से, इनके निवासस्थान/मूल देश से ही निमंत्रण देना ठीक रहता है। फिर ये देश में अधिक संख्या में विद्यमान होने पर भी, असामाजिक भीड़ का हिस्सा नहीं बनते। परन्तु यदि इनको कृत्रिम रूप से बीहड़ों में तैयार करवाया जाए, तो बहुत सावधानी बरतनी पड़ती है, क्योंकि फिर देश में इनकी संख्या बढ़ने पर, ये असामाजिक बन सकते हैं, और उपद्रव भी मचा सकते हैं। इनके उस असामाजिकता के दौर में यदि साथ में इनको क्रोध भी आ जाए, तब तो स्थिति गंभीर भी हो सकती है। अपने स्वाभाविक क्रोध का सदुपयोग ये फकरदिन उपनाम के उत्पाती लोगों को मार भगाने के लिए करते हैं। फकरदिन लोग विकसितदेशों के देशद्रोही लोग होते हैं। वैसे तो वे चुपचाप रहते हुए, समाज से जुड़े रहते हैं, जिससे उनके मन में पनप रहे देशद्रोह के बीज का किसी को पता ही नहीं चलता। परन्तु जब देश किसी विकट समस्या में होता है, या विकास के पथ पर बढ़ता हुआ, अत्यधिक क्रियाशील होता है, तब वे लोग सही मौक़ा जानकर, अपना असली रंग दिखाना शुरु कर देते हैं। फिर वे तोड़-फोड़ करना शुरु कर देते हैं। वे इतने चालाक होते हैं कि सुरक्षाबलों की पकड़ में भी कम ही आते हैं। परन्तु टगर-अधिकारी तो उनके भी उस्ताद होते हैं। ये शीघ्र ही उन्हें ढूंढकर, उनसे भिड़ जाते हैं, और उनको गलत रास्ते से हटाकर ही दम लेते हैं। इस तरह से, जब इन्हें मुठभेड़ों का अच्छा-ख़ासा तजुर्बा हो जाता है, तब ये रक्षाविभाग के लोगों को भी अपनी सेवाएं मुहैया करवाने लग जाते हैं। सूचना व प्रसारण विभाग की कठिनाइयों को भी ये दूर करने में सहायता करते रहते हैं। ये पूर्वोक्त प्रगल्भज्ञानी नामक अधिकारियों को भी प्रशिक्षण देते हैं, जो बहुत से स्थानों पर निर्णायक भूमिका निभाते हैं, जैसे कि नवदेशनिर्माणविभाग में, देश-विदेश से सम्बंधित व्यवहारों-व्यापारों में, और देश के यातायात विभाग में आदि-आदि। नवदेशनिर्माणविभाग में सहायक प्रगल्भज्ञानी का वर्णन तो पहले भी आ चुका है। विभिन्न व्यवहारों-व्यापारों में सहायता करने वाले प्रगल्भज्ञानी अधिकारी; विभिन्न श्रमिकों की नियुक्ति करवाते हैं, उनका प्रशिक्षण करवाते हैं, उनसे भिन्न-भिन्न शारीरिक कार्य करवाते हैं, और उनके स्वास्थ्य का भी ध्यान रखते हैं। अंतर्देशीय वस्तुसेवापूर्तिविभाग के सहायक प्रगल्भज्ञानी, देश के विशाल धक्का-यंत्र से बनने वाले दबाव को नियंत्रित करवाते हैं, जिससे पूरे देश में बिछी हुई आपूर्ति-नलिकाओं (supply-pipelines) की, और नागरिकों की सुरक्षा सुनिश्चित हो जाती है।

देहदेश में कवकशील उपनाम के विशेष आधिकारियों की आवश्यकता भी पड़ी ही रहती है। वे भी पूर्वोक्त देशों में व दूसरे भी बहुत से छोटे-छोटे देशों में पाए जाते हैं। वे भी अपने आनुवंशिक

काम को पूर्वोक्त अधिकारियों की तरह ही, अपने पूर्वजों की बहुत लम्बी वंश-परम्परा से सीखते आए होते हैं। अतः अपनी पुश्तैनी विद्या में, वे भी माहिर होते हैं। उनका मुख्य काम देश की टूटी हुई सड़कों को जोड़ना/दुरस्त करना होता है, ताकि उनके ऊपर चलने वाले विभिन्न वाहन बाहर गिरकर क्षतिग्रस्त न होते रहें, और देश में वाहनों की कमी न पड़ जाए। वास्तव में उक्त विशाल देश में, अन्य कामों की तरह ही, उच्च तकनीकों से बनी हुई सड़कों को शीघ्रता से दुरस्त करना भी एक टेढ़ी खीर के समान ही है। उस काम के लिए १३ प्रकार की विभिन्न निर्माण-सामग्रियों और उन पर नियंत्रण रखने वाले १३ प्रकार के विभिन्न अधिकारियों की आवश्यकता पड़ती है। उनमें से ४ प्रकार के अधिकारी, वे उपरोक्त कवकशील अधिकारी तो बाहर से आमंत्रित किए गए अधिकारी ही होते हैं। वैसे तो देश के अन्दर भी कुछ होनहार लोगों को, उन आप्रवासित अधिकारियों का स्थान लेने के लिए प्रशिक्षित किया जाता रहता है, परन्तु उनकी संख्या पर्याप्त नहीं होती, यद्यपि फिर भी गुजारा तो चल ही पड़ता है। उन प्रशिक्षण-प्रेमियों को प्रशिक्षण दिलवाने के लिए उन विदेशी प्रशिक्षकों को बुलाया गया होता है, जिन्हें मध्यमार्ग के दक्षिणी भाग के किनारों पर बसाया गया होता है। परन्तु जो देश उन प्रशिक्षकों की या उनके द्वारा प्रशिक्षित किए गए स्वदेशी अधिकारियों की कद्र नहीं करते, उन्हें तो वे अधिकारी बाहर से अवश्य ही बुलाने पड़ते हैं। वे अधिकारी पर्वतश्रृंखलाओं पर वृक्षारोपण करवाकर, उनकी भूमि को भूमिकटाव आदि विघटनकारी परिस्थितियों से भी बचाते रहते हैं। वास्तव में, किन्हीं भी अधिकारियों की विदेशों से आपूर्ति के लिए, बहुत से बिचौलिए व विशेषज्ञ अपनी सेवाएं देते रहते हैं। बहुत से देश तो भविष्य में संभावित कानूनी व अन्य व्यावहारिक अड़चनों से बचने के लिए भी उनकी सेवाएं लेते रहते हैं, परन्तु बहुत से देश तो जल्दबाजी में, उन्हें सीधे ही, ऐसे-वैसे हथकंडे अपना कर भी बुलवा लेते हैं। यद्यपि इस मामले में विधिवत कार्य ही अधिक लाभदायक व सुरक्षित होता है। इसी तरह, और भी बहुत से नरमदल-अधिकारी देहदेश में कार्यरत होते हैं।

उपरोक्त सभी अधिकारी मृदुल स्वभाव के व नरमदल के सदस्य होते हैं, जो देहदेश की विभिन्न कार्यप्रणालियों में अहम भूमिका निभाते हैं। परन्तु प्रवालमन गोत्र के अधिकारी, जो अधिकांशतः नरमदल-अधिकारियों के गृहदेशों से भी छोटे देशों में विद्यमान होते हैं, और यहाँ तक कि भयानक व पथरीले बीहड़ों में भी एकाकी जीवन बिताते हुए मिल जाते हैं, वे पत्थरों की तरह ही कठोर स्वभाव के होते हैं। उन सभी ने मिलकर, गरमदल नाम का एक कट्टर, यद्यपि मानवतापूर्ण दल बनाया होता है। इसीलिए वे देहदेश के लोगों को, विशेषतः उन गरमदल-सेवार्थियों को चयनित व

आप्रवासित करने वाले दल को विशेष प्रिय नहीं होते। परन्तु अंतर्राष्ट्रीय विमानस्थल पर, उन्हें उनको देश के अन्दर आने की अनुमति (permission) राजनैतिक-बाध्यातावश देनी ही पड़ती है, क्योंकि उनके बिना देश के लगभग सारे ही कार्य दुष्प्रभावित हो सकते हैं। वे कोई विशेष या बड़ा काम भी नहीं करते, अपितु अपनी कठोर, दृढ़ व लक्ष्यांकित (target oriented) विचारधारा से सत्त्वगुणसंपन्न देशवासियों का हौंसला बढ़ाते रहते हैं। वास्तव में, देहदेशनिवासी भी कई बार अपनी सहनसीमा (tolerable limit)/आवश्यकता से अधिक सत्त्वगुण व अद्वैत को धारण करने लग जाते हैं। उससे उनके कार्य दुष्प्रभावित होने लग जाते हैं। क्योंकि दृष्य-संसार त्रिगुणमयी है, अतः उससे सम्बंधित सभी कर्म-भाव भी त्रिगुणमयी ही हैं। इसलिए तीनों गुण संतुलित अवस्था में रहने चाहिए। अत्यधिक सत्त्वगुण के कारण, वे देशवासी ढीले व सुस्त पड़ जाते हैं। उससे उनके कार्य करने की गति भी बहुत धीमी हो जाती है। साथ में वे जोखिम वाले काम नहीं कर पाते। वे अधिकाँश समय मनमोहक व आनंदमयी विचारों में ही खोए रहने लगते हैं। उससे उनके शरीर की अधिकाँश शक्ति उनके विचारों को लगती रहती है, जिससे उनकी कर्मेन्द्रियाँ व ज्ञानेन्द्रियाँ कमजोर पड़ जाती हैं। वे विचारों के नशे के आदी जैसे हो जाते हैं, और विचाररिक्तता को ज़रा भी बर्दाश्त नहीं कर पाते। भावशून्य अन्धकार से डरते हुए, वे सदैव उससे दूर रहने का प्रयत्न करते हैं। वे रजोगुण (चुस्ती-फुर्ती व मेहनत वाला गुण) को भी स्वीकार नहीं करते, क्योंकि उसके साथ तमोगुण (अन्धकार वाला गुण) भी विद्यमान रहता है। इन्हीं सभी कारणों से, वे जटिल काम भी ठीक ढंग से नहीं कर पाते। वे वैसे काम भी ठीक ढंग से नहीं कर पाते, जिनमें तेज व चुस्त दिमाग की आवश्यकता होती है। उस प्रकार के जटिल कामों में, नवदेशनिर्माण विभाग के काम मुख्य होते हैं। इसलिए उस विभाग में, अनेक प्रकार के प्रवालमन-अधिकारियों की आवश्यकता, बहुतायत में पड़ी ही रहती है। उस विभाग में नियुक्त होते ही, वे अधिकारी पूरे विभाग में एक नई जान फूँक देते हैं। उनके कार्यभार संभालते ही, उस विभाग के लोग आत्मविश्वास से भर जाते हैं। प्रवालमन अधिकारियों के रजोगुण व तद्सहचर तमोगुण से शक्ति प्राप्त करके, वे देशवासी अपनी शिथिलता को त्याग देते हैं, और एक नए जोश के साथ अपने-अपने कामों में पुनः जुट जाते हैं। वे अधिकारी बीहड़ों में इसलिए बहुतायत से पाए जाते हैं, क्योंकि वे उन त्यागी-फकीरों की तरह होते हैं, जो अपने जीवन के लिए न्यूनतम आवश्यकताओं की ही चाह रखते हैं। यद्यपि वे दुर्वासा मुनि की तरह कठोर और विश्वामित्र की तरह काम व लगन के पक्के होते हैं। यद्यपि सुसंगठित छोटे देशों के अधिकारी अधिक उत्तरदायी, सुविधाजनक, मानवतापूर्ण, देव-स्वभाव, पुण्यात्मा व हानिरहित

होते हैं। परन्तु बड़े व अधिक सामाजिक देशों में पाए जाने वाले अधिकारी तो सर्वाधिक सामाजिक/कर्मठ होने के कारण सर्वाधिक लाभकारी होते हैं। यद्यपि वे कई बार पापपूर्ण/अमानवतापूर्ण/राक्षस-स्वभाव/हानिकारक भी बन जाते हैं, विशेषतः यदि उनसे सेवा लेने वाले देश का राजा सतर्क, संतुलित, संयमपूर्ण, महामंत्री कुंडलदेव/गुरु से युक्त व तंत्रपूर्ण न रहे। छोटे देशों व बीहड़ों के प्रवालमन-अधिकारी तो आसानी से/न्याययुक्त ढंग से प्राप्त हो जाते हैं, परन्तु उन बड़े-सामाजिक देशों के वे उन्नत अधिकारी उन देशों के विरुद्ध षड्यंत्र करके ही हासिल किए जा सकते हैं, क्योंकि वे देश उन्हें आसानी से नहीं छोड़ते। कई लालची प्रकार के विकसित देश तो आपस में मिलकर, उन विकासशील-बड़े देशों को बंधक जैसा बना लेते हैं, और उन प्रवालमन-अधिकारियों के साथ-साथ अन्य अधिकारियों व सुविधाओं को भी उनसे छीनते रहते हैं। यद्यपि वे विकसित देश उन गरीब-विकासशील देशों का समुचित ध्यान भी रखते हैं, ताकि वे लम्बे समय तक उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति करते रहें। कई अति लालची प्रकार के विकसित देश उनके ऊपर विशेष ध्यान नहीं देते, जिससे वे विकसित देशों की सेवा करते-करते, शीघ्र ही विघटित हो जाते हैं। कई विकसितदेश तो लालच की सारी हदें ही पार कर जाते हैं, जब वे उन तकनीकी रूप से अक्षम बड़े देशों की सभी वस्तु-सेवाओं को एकदम से व एकसाथ ही प्राप्त करने के लिए, उनको जानबूझ कर तबाह कर देते हैं। फिर कुछ समय बाद, जब उन लुटेरे तकनीकसंपन्न-देशों के अपने संसाधन पुनः कम होने लगते हैं, तब वे फिर से कोई नया शिकार ढूँढने लग जाते हैं।

एक बार लेखक ने देखा कि व्ययपुर नामक एक देहदेश में, किसान लोगों ने हड़ताल की हुई थी। वे अपना काम-धाम छोड़कर, शाँतिपूर्वक प्रदर्शन कर रहे थे। वे किसी को भी हानि नहीं पहुंचा रहे थे। वास्तव में उनके कुछ साथियों को, घुसपैठ करके आए हुए उग्रपंथियों ने बंधक बना लिया था। अतः वे देश की लाचार सुरक्षा व्यवस्था व राजा की लापरवाही के विरोध में, सड़क पर उतर आए थे। इस तरह से, विभिन्न फसलों का उत्पादन पूर्णतया ठप हो गया था। परिणामस्वरूप अन्नाभाव व संसाधनों के अभाव के कारण, देश के सभी नागरिक कमजोरी महसूस कर रहे थे। कुछ दिनों तक तो खाद्य एवं आपूर्ति मंत्रालय के निर्देश पर, भण्डारण-विभाग ने खाद्य-आपूर्ति को बना कर रखा, परन्तु फिर भण्डारगृह भी खाली होने की कगार पर पहुँच गए थे। देश की अर्थव्यवस्था को रखरखाव-दौर (maintenance mode) पर स्थापित कर दिया गया था, अर्थात देश के अत्यावश्यक व देश को विघटन से बचाने वाले कामों को ही अंजाम दिया जा रहा था। अन्य सभी उत्कृष्ट व विकासात्मक क्रियाकलापों को राजा ने बंद करवा दिया था, जिसमें उसके

मंत्री भी उसको भरपूर सहयोग दे रहे थे। फिर राजा ने गंभीर स्थिति को भांपते हुए, अपनी मंत्री-परिषद् की आपातकालीन बैठक बुलवाई, और दैनिकोपयोग के लिए आवश्यक विभिन्न वस्तुओं, विशेषकर खाद्य पदार्थों को आयात करने का सर्वसम्मति से निर्णय लिया। परन्तु उसमें एक समस्या आड़े आ रही थी। वास्तव में किसानों ने अपनी-अपनी जमीनों से गुजरने वाले मुख्यतम राष्ट्रीय राजमार्ग को, स्थान-स्थान पर बंद करवा दिया था। कई स्थानों पर तो उग्रपंथियों ने राजमार्ग को नष्ट-भ्रष्ट भी कर दिया था। साथ में, कोई भी आपूर्तिकर्ता (transporter/supplier) अपनी गाड़ियों को, यहाँ तक कि पानी के टैंकरों को भी माल ढोने के लिए उपलब्ध नहीं करवा रहा था। उन्होंने पहले भी वैसी हालात में अपनी गाड़ियों को उपलब्ध करवाया था। परिणाम स्पष्ट था। राजमार्ग पर छिपे हुए उग्रपंथियों ने सारा सामान लूटकर, उनको ढोने वाली गाड़ियों को भी तहस-नहस कर दिया था। कई गाड़ियां तो वापिस भाग कर और कुछ अन्य गाड़ियां आगे की ओर भाग कर, बाहर निकलने में सफल हो गई थीं, परन्तु वे भी इतनी अधिक क्षतिग्रस्त हो गई थीं कि किसी भी काम के योग्य नहीं बची थीं। राजा को भी उस घटना को देखकर बहुत ठेस पहुंची थी, इसीलिए वह भी उन आपूर्तिकर्ताओं को बाध्य नहीं कर पा रहा था। फिर वैकल्पिक मार्ग बनाने का निर्णय लिया गया। परन्तु इतनी शीघ्रता से, वैकल्पिक मार्गों पर सुरक्षा के पुख्ता बंदोबस्त नहीं किए जा सकते थे। इसलिए उन मार्गों को यथासंभव छोटा बनाने का निर्णय लिया गया, ताकि बाहर के बीहड़ों में घूम रहे असामाजिक उग्रपंथियों की दृष्टि उन पर न पड़ती। सामान को भी अच्छी तरह से दबा-दबा कर पैक (pack) कर दिया गया, और उसे छोटी-छोटी गाड़ियों में, ठूंस-ठूंसकर भर दिया गया। वे गाड़ियां अत्याधुनिक प्रकार के, मिट्टी-पत्थर को काटने वाले यंत्रों (cutting machines) से सुसज्जित थीं, और बड़ी तेजी से सीमाभित्ति को काटकर अन्दर घुस जाती थीं। फिर वे वहाँ पर अपने सामान को जैक-प्रणाली (jack-system) से, बड़ी फुर्ती के साथ उड़ेल देती थीं। फिर वे देर किए बिना व मुड़े बिना ही, विपरीतक्रम यांत्रिक उपकरण (reverse gear) को चालू करके, सीधी पीछे हट जाती थीं। बाहर निकलते समय, वे उस मार्ग को बंद कर देती थीं। उसके लिए उनमें एक अत्याधुनिक प्रकार का, स्वचालित मुरम्मतकर्ता-यंत्र लगा होता था, जो स्वयं ही उस मार्ग को मिट्टी-पत्थर डालकर, पूर्ववत बना देता था। उनमें एक कैमरा (camera) भी लगा होता था, जो उन गाड़ियों के अन्दर जाते समय, मार्ग बनाने से पूर्व का, उस क्षेत्र का चित्र खींच लेता था, और उसे उपरोक्त स्वचालित मुरम्मतकर्ता-यंत्र को प्रेषित कर देता था। वह यंत्र उस चित्र के अनुसार ही, उस मार्ग-क्षेत्र की जमीन को, हूबहू पहले की तरह

ही भर देता था, यहाँ तक कि पेड़-पौधे व घास-फूस भी पहले की तरह ही लगा देता था। वह यंत्र उसके लिए एक एक छोटे से समय-यंत्र (time machine kit) की सहायता लेता था, जो उसके एक कोने में ही लगा (fit) होता था। वास्तव में समय-यंत्र का उपयोग व्ययपुर देश में होता ही रहता है। उसी यंत्र के कारण ही तो वहाँ के निवासी सदैव नौजवान बने रहते हैं, और कभी मरते ही नहीं। मरने से पहले ही, समय-यंत्र की सहायता से वे अपना एक दूसरा, नवयुवक के शरीर वाला असली रूप बना लेते हैं। जो उनका बूढ़ा, बिमारियों से घिरा हुआ या युद्धादि के बीच में मृत्यु से जूझ रहा शरीर होता है, वह नकली होता है, और एक यंत्रमानव (robot) से अधिक कुछ नहीं होता। उस समय-यंत्र से ही वे प्रत्येक समय में व प्रत्येक स्थान पर एकसाथ विद्यमान रह सकते हैं। कुछ समय के बाद, उस बार-बार खुल रहे व बंद हो रहे मार्ग से, वस्तु-सेवा की आपूर्ति को कुछ समय के लिए बंद करवा दिया जाता है। क्योंकि पूरा देश उस समय न्यूनतम अर्थव्यवस्था/आवश्यकता पर चल रहा होता है, इसलिए वह माल कुछ समय के लिए पर्याप्त हो जाता है। फिर माल के ख़त्म होने पर या अगली वैसी मुसीबत के समय, किसी दूसरे स्थान को मार्ग-निर्माण के लिए चुना जाता है; क्योंकि एक ही मार्ग-स्थान निस्संदेह बारम्बार की खुदाई के बाद भी पूर्ववत बन जाता हो, फिर भी उससे, उस मार्ग-स्थान की कुछ न कुछ घिसाई-पिटाई तो होती ही रहती है। यद्यपि कुछ समय के बाद, कई बार फिर से उसी मार्ग-स्थान को चुन लिया जाता है, क्योंकि तब तक वह स्थान वातावरणीय आघातों से सुदृढ़ हो चुका होता है। यंत्रोपकरणसज्जित वे यांत्रिक गाड़ियां, सामान को सीमाभित्ति से कुछ दूरी पर स्थित एक संग्रहण-स्थान (collection center) तक, अन्दर ले जाती रहती हैं; जिससे वहाँ पर परिष्कृत, डिब्बाबंद व अत्युन्नत वस्तुओं का ढेर सा लग जाता है। वहाँ से, छोटी-छोटी गाड़ियां उन वस्तुओं को पूरे देशभर में, आवश्यकतानुसार पहुंचाती रहती हैं, जिससे शीघ्र ही सारा ढेर वहाँ से गायब हो जाता है। परन्तु कई देशों के सीमान्त क्षेत्र बहुत ही कच्चे व कमजोर होते हैं। वहाँ के मिट्टी-पत्थर, वहाँ की ऋतुएँ आदि भौगोलिक व जलवायुगत कारक ही कुछ वैसी प्रकृति के होते हैं, जिनसे वहाँ की भूमि में कोई विशेष मजबूती नहीं होती। इसलिए वहाँ पर उपरोक्त प्रकार से, अस्थायी मार्गों को बारम्बार बनाया व मिटाया नहीं जा सकता, क्योंकि वैसा करने से वहाँ पर भूस्खलन का खतरा बढ़ जाता है, जिससे जन-धन की हानि होने की संभावना बराबर बनी रहती है। अतः वहाँ पर, आपूर्तिकर्ता पड़ौसी देश से लेकर प्रभावित देश तक कठोर धातु से बनी हुई एक मजबूत सुरंग बनानी पड़ती है, जिसमें कोई अन्य छिद्र, दरार आदि न हों। उससे उग्रपंथियों के व उनके द्वारा

भेजे गए सूक्ष्म लड़ाका-यंत्रों (fighter robots, ied) के, अन्दर प्रवेश करने का भय नहीं रहता। वह सुरंग लम्बे समय तक, तब तक बना कर रखी जाती है, जब तक कि प्रभावित देश की स्थिति सामान्य नहीं हो जाती। फिर उस सुरंग को तोड़ दिया जाता है, और सीमाभित्ति के प्रवेशद्वार को पूर्ववत बंद कर दिया जाता है। आवश्यकता पड़ने पर, पुनः किसी आसपास के वैसे स्थान पर वैसी ही सुरंग बना दी जाती है, जहाँ से होकर वस्तुओं से भरी हुई गाड़ियों की आवाजाही सुगम हो। उस सुरंग में गाड़ियां निरंतर दौड़ती रहती हैं। प्रभावित देश, वस्तुओं के साथ उन गाड़ियों को भी खरीद लेता है, क्योंकि उससे समय की भी बचत होती है, और सुरंग का तंग मार्ग भी, वापिस आती हुई खाली गाड़ियों से बाधित नहीं होता। उससे गाड़ियों के सामान को सीमा पर बारम्बार उतारने-चढ़ाने में बर्बाद होने वाली ऊर्जा की भी बचत हो जाती है। वह सुरंग सीधी ही, प्रभावित देश के किसी एक, भीतरी, यथोपयुक्त व सुरक्षित राजमार्ग के साथ जुड़ी होती है। अन्दर प्रविष्ट होने वाली गाड़ियां, बिना रुके ही, पूरे देश में सामान को आवश्यकतानुसार गिराती रहती हैं, क्योंकि उस देश के सभी राजमार्ग आपस में जुड़ कर, एक जाल जैसा बुनते हैं। उस सड़क-जाल में, किसी भी एक स्थान पर प्रविष्ट होकर, कोई भी, पूरे देश की सैर, बिना रुके व बिना किसी रुकावट के कर सकता है। वह सुरंग तब भी बनाई जाती है, जब देश के लिए किसी अत्यंत महत्त्वपूर्ण वस्तु की आवश्यकता, अत्यंत त्वरित रूप से व बिना किसी व्यवधान के पूरी की जानी हो; क्योंकि उपरोक्त संग्रहण-स्थान के माध्यम से की जाने वाली आपूर्ति में, सामान को स्थान-स्थान पर चढ़ाने-उतारने से, बहुत सा बहुमूल्य समय नष्ट हो जाता है। वह सुरंग अंदरूनी राजमार्ग से इसलिए भी सीधी जुड़ी होती है, क्योंकि उस पर ढोए जाने वाले मालों, जैसे कि विभिन्न वस्तुओं/सेवाओं/व्यक्तियों की गहन व बारीकी से जांच की जाती है, और क्लीन चिट (clean chit) मिलने पर ही उन्हें अन्दर भेजा जाता है। साथ में, उस सुरंग के अन्दर कोई भी, घुसपैठ नहीं कर सकता, जिससे राष्ट्रीय सुरक्षा को कोई खतरा पैदा नहीं होता। परन्तु जहाँ पर उपरोक्त गहन जांच को सम्पूर्णता से कर पाना संभव नहीं हो पाता, जिससे घुसपैठियों/घातक पदार्थों का अधिक खतरा हो, वहाँ पर तो पूर्वोक्तानुसार ही, वस्तुओं को अंदरूनी राजमार्ग से दूर, सीमाक्षेत्र के भण्डारण-स्थान पर ही गिरा दिया जाता है। उससे, विभिन्न वस्तु-सेवाओं के साथ अन्दर घुसे हुए घुसपैठिए, सीधे ही राजमार्ग के अन्दर प्रविष्ट नहीं हो पाते, अपितु इधर-उधर भटकते हुए, लालचवश पुनः उन वस्तुओं के ढेरों तक पहुँच जाते हैं, जहाँ पर वे सुरक्षाबलों के द्वारा मार गिरा दिए जाते हैं। फिर सामान की, सूक्ष्म यांत्रिक लड़ाकों व आई.ई.डी. को ढूँढने के लिए, गहन

यांत्रिक जांच की जाती है, यहाँ तक कि सूंघने वाले श्वानों की भी सहायता ली जाती है। जब सामान पूर्णतः सुरक्षित घोषित कर दिया जाता है, तब उसे छोटी-छोटी गाड़ियां, छोटे-छोटे मार्गों से होते हुए, राजमार्ग तक ले जाती हैं, जहाँ से उसे बड़ी गाड़ियां आगे ले जाती हैं। यदि शत्रु संख्या में अधिक हों, तो कई बार वे भारी भी पड़ जाते हैं, और क्षेत्रीय मुठभेड़ों को न्यौता दे देते हैं। कई बहुत विरले मामलों में तो पूरे देश में ही उच्च सतर्कता की स्थिति घोषित कर दी जाती है। क्षेत्रीय आपूर्ति का दूसरा नुकसान यह होता है कि यदि वस्तुओं की मात्रा बहुत अधिक हो, तो छोटी गाड़ियों से वे शीघ्रता से ढोई नहीं जा पातीं, जिससे वे लम्बे समय तक वहीँ पर, ढेरों के रूप में सड़ती-गलती रहती हैं। परन्तु कई बार वैसी वस्तुएँ भी भेजनी पड़ती हैं, जिनके लिए देश कुछ लम्बे समय तक भी प्रतीक्षा कर सकता है। वे वस्तुएँ लम्बे समय तक, थोड़ा-थोड़ा करके चाहिए होती हैं। उन वस्तुओं के लिए देश में कोई उपयुक्त भंडारण व्यवस्था भी नहीं होती। उससे, यदि आवश्यकता से अधिक मात्रा में वे वस्तुएँ देश में पहुंचती हैं, तो उन्हें नष्ट करना पड़ता है, और नदी में बहाना पड़ता है, जिससे बहुमूल्य ऊर्जा का दुरुपयोग होता है। उससे बचने के लिए, उन वस्तुओं को देहदेश के अन्दर, सीमा से अधिक दूर तक नहीं ले जाया जाता, अपितु उन्हें सीमाभित्ति की अंदरूनी सतह के साथ टिका कर, छोटे-छोटे ढेरों के रूप में रखा जाता है। उनके ऊपर अस्थायी तरपाल (terpaline) आदि डालकर, उनको वर्षा, धूप आदि रूपों के पर्यावरणीय विघ्नों से सुरक्षित रखा जाता है। वैसे तो वे वस्तुएँ शीघ्रता से व आसानी से ख़राब भी नहीं होतीं। उस सीमाभित्ति तक देश के आतंरिक भागों से गाड़ियां पहुँचने में बहुत अधिक समय लग जाता है। फिर उनको वहाँ से आवश्यकतानुसार, धीरे-धीरे ढोया जाता रहता है। इस तरह से, लम्बे समय तक उन वस्तुओं से सम्बंधित देश का गुजारा, एक ही बार की विदेशी आपूर्ति से चल पड़ता है।

उपरोक्त राजमार्गों से सम्बंधित प्रकरण में, कई लोगों को यह शंका हो सकती है कि जिस सबसे मुख्य/मुख्यतम राजमार्ग को उग्रपंथियों व प्रदर्शनकारी किसानों ने बाधित कर दिया था, वह कौन सा मार्ग था। वास्तव में वही, मुख्यतम, विशालतम व एकमात्र राजमार्ग होता है, जो देश को बाहरी दुनिया से, प्रत्यक्ष तौर पर जोड़ कर रखता है। वह पूरे देश के बीचोंबीच, उत्तर से दक्षिण की ओर गुजरता है। यद्यपि उत्तर के पहाड़ी क्षेत्र, जिनमें सुमेरु पर्वत भी एक होता है, उस राजमार्ग से अछूते रह जाते हैं। यद्यपि उन क्षेत्रों के लिए, विशेषकर सुमेरूपर्वत के लिए, विशेष प्रकार के स्वर्णिम, सर्वसुविधासंपन्न, सुरक्षित व व्यवधानरहित अंदरूनी राजमार्ग बनाए गए होते हैं, जो देश के मध्य में स्थित निरीक्षण-चौकी-प्रक्षेत्र (checkpost area) में, मुख्यतम राजमार्ग से

जुड़े होते हैं। वास्तव में तो देश के सभी अंदरूनी राजमार्ग उसी स्थान पर, किसी न किसी शाखा के माध्यम से जुड़े होते हैं। पहले तो उन चौकियों से बहुत से, गति-अवरोधक (speed breaker) वाले छोटे-छोटे मार्ग देश के अन्दर की ओर निकलते हैं, ताकि बाहर से प्रविष्ट कोई भी उग्रपंथी उन पर तेज रफ्तार से गाड़ी चलाते हुए भाग न पाए। फिर वे छोटे-छोटे मार्ग, आगे से आगे, आपस में मिलते हुए व वे फिर अन्य राजमार्गों से मिलते हुए, एक चौड़ा मुख्य राजमार्ग बना लेते हैं; जो फिर यातायात-मुख्यालय में प्रविष्ट हो जाता है। वहाँ पर मुख्यतम राजमार्ग से लाए हुए कुछ सामान को उल्टा दिया जाता है, और गाड़ियों में तेल आदि भरा जा कर, साथ में उनकी यथावश्यक ठोक-मुरम्मत की जाती है। साथ में, गाड़ियां वहाँ पर, उसके बदले में नए सामान को भरकर, सुमेरु पर्वत की ओर निकल पड़ती हैं। ऊपर की ओर जाता हुआ चौड़ा मुख्यमार्ग, धीरे-धीरे करके, क्षेत्रीय मार्गों में विभक्त होता जाता है, जिससे वह अधिक से अधिक संकरा होता जाता है, फिर भी सुमेरु पर्वत की ओर जाने वाला मार्ग काफी चौड़ा व विशिष्ट होता है, क्योंकि वहाँ पर राष्ट्रीय राजधानी स्थित होती है। बीच में निकले हुए वे क्षेत्रीय मार्ग आसपास के विभिन्न क्षेत्रों को अपनी सेवाएं उपलब्ध करवाते हैं। दूसरी ओर, पूर्वोक्त व बाधित मुख्यतम राजमार्ग सदैव विश्व के लिए खुला रहता है, यद्यपि उसके दोनों, आदि-अंत के किनारों पर पक्के व स्वर्णिम राजद्वार लगे होते हैं, जो आवश्यकतानुसार खोले व बंद किए जाते रहते हैं। उस पूरे राजमार्ग पर, देश की बेहतरीन सुरक्षा व्यवस्था का पहरा लगा रहता है। पूर्वोक्तानुसार वह भी देश के भीतरी राजमार्गों के जाल के साथ जुड़ा हुआ होता है, यद्यपि सीधे तौर पर नहीं। उसके व भीतरी राजमार्गों के बीच में बहुत सी निरीक्षण-चौकियां (checkposts) होती हैं। इस कारण से, उग्रपंथियों का उनसे बचकर निकलना व उनका भीतरी मार्गों में प्रविष्ट होना, लगभग असंभव सा ही होता है। यदि कभी वातावरणीय विघ्नों से या अत्यंत कुटिल शत्रुओं की चालबाजियों से, वे चौकियां क्षतिग्रस्त हो जाएं, तो कुछ शत्रु अन्दर प्रविष्ट भी हो सकते हैं, यद्यपि शीघ्र ही पकड़ भी लिए जाते हैं। विरले मामलों में ही, वे गंभीर स्थिति उत्पन्न कर सकते हैं, क्योंकि शीघ्र ही वे क्षतिग्रस्त चौकियां दुरस्त (repair) कर दी जाती हैं। कई बार, यदि युद्धादि के या वातावरणीय प्रकार के गहरे आघातों से, मुख्यतम राजमार्ग के दोनों ओर की, उसकी चौड़ाई को निर्धारित करने वाली सीमा-दीवारों को अपेक्षाकृत रूप से अधिक क्षति पहुँच जाए, तभी देहदेश के ऊपर भयंकर संकट उत्पन्न होता है, क्योंकि फिर राजमार्ग पर घात लगा कर शिकार ढूँढते हुए असंख्य व विभिन्न प्रकार के घुसपैठियों के साथ ढोई जा रही विभिन्न जहरीली रासायनिक वस्तुएँ, एकदम से

देश के अन्दर घुस कर जम के तबाही मचा देती हैं। फिर देहदेश के भोले-भाले वाहन चालकों के द्वारा, वे घुसपैठिए उन जहरीली वस्तुओं के साथ पूरे देश में शीघ्रता से फैला दिए जाते हैं। वैसी स्थिति में, पूर्वोक्तानुसार तीव्र कार्यवाही करते हुए, उन शत्रुओं को घातक व आधुनिक अस्त्रों से नष्ट करना पड़ता है, और जहरीली वस्तुओं को तेजी से बाहर निकलवाना पड़ता है, ताकि जनता की सेहत पर कम से कम दुष्प्रभाव पड़े। इसके लिए, पूरे देश में शुद्ध जल की आपूर्ति एकदम से बढ़वा दी जाती है, और लोगों को अधिक से अधिक जल पीने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है, ताकि वह विष जल में घुल कर, उनके शरीर से निकल कर, विभिन्न नालों-नदियों से होता हुआ, देश के बाहर स्थित महासागर में पहुँच कर नष्ट हो जाए। मुख्यतम राजमार्ग (मध्यमार्ग) पर स्थित प्रवेशद्वार के निकट ही, उस पूर्वोक्त वात-गुहा (stormy-cave) का द्वार भी खुलता है, जिसमें बहने वाली वह दक्खनी (दक्षिण दिशा की ओर बहने वाली), सुगन्धित व अमृतमयी हवा, पूरे देश को तरोताजा व संजीदा कर देती है। विभिन्न प्रकार की वस्तुओं से लदी हुईं विभिन्न प्रकार की गाड़ियां, उस मुख्यतम राजमार्ग के उत्तरी मुख्यद्वार से दक्षिणी मुख्यद्वार की ओर पलायन करती रहती हैं। आगे बढ़ते हुए, वे अपना सारा आयातित सामान, देश के विभिन्न क्षेत्रों के उद्योगपतियों व किसानों के, उस राजमार्ग पर प्रतीक्षा कर रहे प्रतिनिधियों के बीच में, आवश्यकतानुसार बाँटते हुए, उस राजमार्ग के दक्षिणी छोर पर पूर्णतया खाली होकर, वहाँ पर स्थित निकासीद्वार (exit door) से बाहर निकल जाती हैं। उन गाड़ियों का गमन इकलौते-उपमार्ग (single lane) में, एक ही दिशा में होता रहता है, अर्थात वे गाड़ियां वापिस नहीं मुड़तीं, और न ही दक्षिणी मुख्यद्वार से किसी भी गाड़ी को अन्दर प्रविष्ट होने दिया जाता है। उससे, गाड़ियों की यात्रा में, उनकी गति में व उनसे सामान की चढ़ाई-उतराई (loading-unloading) में कोई व्यवधान उत्पन्न नहीं होता।

वास्तव में उपरोक्त मुख्य राजमार्ग, जो अपने दक्षिणी भाग के किसान-क्षेत्रों में, मुख्यतम राजमार्ग या मध्यमार्ग से जुड़ा होता है, वह परिष्करण-मार्ग के नाम से भी प्रसिद्ध होता है, क्योंकि सर्वप्रथम वह देश के पूर्वोक्त विशालतम परिष्करण एवं भंडारण उद्योग से होकर ही गुजरता है। उस उद्योग में सभी कच्चे उत्पाद, परिष्कृत व डिब्बाबंद कर दिए जाते हैं, और आवश्यकता से अधिक परिष्कृत उत्पादों को भंडारित कर दिया जाता है। फिर वह परिष्करण-मार्ग आगे जाकर मुख्य आतंरिक राजमार्ग (मुख्य वनकमार्ग) के मध्य भाग के आसपास जुड़ जाता है। उसी राजमार्ग से होते हुए, परिष्कृत व डिब्बाबंद वस्तुएँ, अंतर्मिश्रित सड़क-जालों (interconnected road-networks) से ढोई जाती हुई, पूरे देश में उपभोग के लिए पहुंचा दी

जाती हैं। मध्यमार्ग के उपरोक्त मध्य-दक्षिणी भाग के किनारों पर, किसानों के बड़े-बड़े खेत-खलिहान होते हैं। वहाँ के किसान, उस मध्य-मार्ग से, विदेशों से आयातित की गई वस्तुओं को उठवाते हैं, और उनसे विभिन्न प्रकार की फसलों का उत्पादन करते हैं। फिर वे अपने उत्पादों के साथ उसी मध्यमार्ग के, मध्य भाग से थोड़ा सा दक्षिण की ओर के किनारों पर स्थित मंडियों में पहुँच जाते हैं। वहाँ पर वे अपने उत्पादों का मूल्य लेकर, वापिस अपने घर चले जाते हैं। उन व्यापारिक मंडियों के दुकानदार उन कृषि-उत्पादों को, विभिन्न आढ़तियों को, अधिकतम बोली पर बेच देते हैं। फिर वे आढ़ती उन उत्पादों को, सुरक्षा-चौकियों के दूसरी ओर, अंदरूनी भाग में प्रतीक्षा कर रहे परिवाहकों (transporters) को बेच देते हैं। अपने उत्पादों का सौदा वे आढ़ती दूरभाष यंत्र से या ऑनलाईन वीडियोग्राफी (online videography) से, वहीं से, मंडियों में बैठकर ही कर लेते हैं। परिवाहक लोग भी, अत्याधुनिक दूरबीनों से उन उत्पादों की गुणवत्ता को वहीं से, अंदरूनी भाग से ही देख-परख लेते हैं। फिर उत्पादों से संतुष्ट होने पर, वे परिवाहक, सुरक्षा-चौकियों को लांघकर, मंडियों से उनको अपनी-अपनी गाड़ियों में उठाते हैं, और वापसी के दौरान उन चौकियों में अपनी व अपनी गाड़ियों की गहन सुरक्षा-जांच करवाने के बाद ही, परिष्करण-मार्ग से होते हुए, वापिस अन्दर प्रविष्ट हो पाते हैं। उन मंडियों तक तो वे अंतर्मिश्रित निर्यातक/उपभोगपरक/स्वच्छतापूर्ण सड़क-जाल (निम्नोक्त अरहटमार्ग) से पहुंचे होते हैं, परन्तु वापसी वे परिष्करण-मार्ग से ही करते हैं, यद्यपि वह मार्ग भी परिष्करण-उद्योग के बाद, अंतर्मिश्रित आयातक/भंडारणपरक/अस्वच्छतायुक्त सड़क-जाल (निम्नोक्त मुख्य वनकमार्ग) से ही जुड़ जाता है। निर्दिष्ट स्थानों पर सभी सड़कें, इधर-उधर के क्षेत्रों/कार्यालयों को बार-बार विभक्त होने से, बहुत संकरी रह जाती हैं, जिससे उपरोक्त व अन्य विभिन्न प्रकार के लोगों को सड़क से बाहर निकलकर, अपने-अपने कार्यस्थानों पर पहुँचने में आसानी हो जाती है। इसी तरह, उनको अपने-अपने कार्यस्थलों से, अत्यंत संकरे परिष्करण-मार्गों के अन्दर घुसना पड़ता है, जहाँ से आगे जाते हुए, उसमें आसपास के क्षेत्रों के संकरे परिष्करण-मार्ग भी जुड़ते रहते हैं, जिससे मुख्य परिष्करण-मार्ग चौड़े से चौड़ा होता चला जाता है, और कुछ दूरी के बाद, लगभग छोटे राजमार्ग के जितना चौड़ा हो जाता है, जो सीधा ही परिष्करण-उद्योग के परिसर में प्रविष्ट हो जाता है। वहाँ पर गाड़ियों से सामान उतारने के लिए, बहुत से श्रमभोगी लदानिए काम में जुटे होते हैं। पहले तो विभिन्न वस्तुओं को भिन्न-भिन्न आकार-प्रकार के अनुसार, भिन्न-भिन्न समूहों में, अल्पकाल के लिए अस्थायी रूप से भंडारित किया जाता है। फिर जब उद्योग के अन्दर से कच्चे

माल (raw material) की मांग पहुंचती है, तब उस अस्थायीभंडारगृह में नियुक्त लिपिक (clerks), बहीखातों में माल का इन्द्राज करके, निर्दिष्ट माल को अन्दर भेजते हैं। ऐसी ही प्रक्रिया तैयार माल (finished product) के मामले में भी अपनाई जाती है। तैयार माल को भी भिन्न प्रकार के भण्डारगृहों में अस्थायी तौर पर भंडारित कर दिया जाता है। जब देश के खाद्य एवं आपूर्ति मंत्रालय से किसी भी वस्तु के लिए मांग उपलब्ध होती है, तो वह निर्दिष्ट वस्तु, यथावश्यक मात्रा में भण्डारगृह से निकाली जाकर, गाड़ी में भर दी जाती है, और फिर वह भारपूर्ण गाड़ी (loaded cargo vehicle), उपरोक्त सड़क-जाल (वनकमार्ग) की दिशा में भेज दी जाती है। इस तरह से, वहाँ पर विभिन्न प्रकार की असंख्य औद्योगिक प्रक्रियाएं प्रतिक्षण चलती रहती हैं।

पूर्वोक्त मुख्यान्तरिक राजमार्ग को भी दो हिस्सों में, काल्पनिक रूप से बांटा गया है। वास्तव में तो सभी आतंरिक मार्ग आपस में जुड़े होते हैं। एक उसकी दक्षिणी शाखा होती है, और एक उत्तरी। पूर्व व पश्चिम को भी एक-एक राजमार्ग जाता है, यद्यपि वे अपेक्षाकृत बहुत छोटे होते हैं। ऐसा इसलिए होता है, क्योंकि देश के उत्तरी छोर से लेकर देश के दक्षिणी छोर तक का क्षेत्रफल पूर्व-पश्चिम में फैले क्षेत्रफल से बहुत अधिक होता है। सभी राजमार्ग अपनी-अपनी दिशाओं से सम्बंधित क्षेत्रों की सेवा में लगे रहते हैं। दोनों ही मुख्यान्तरिक राजमार्ग भी दो-दो भागों में विभक्त हुए होते हैं। एक भाग में गाड़ियों का आना होता है, और दूसरे भाग में जाना। इसका सीधा सा अर्थ है कि वे राजमार्ग एकराही (one way) होते हैं। वास्तव में पूरे देश की सभी सड़कें एकराही (one way) ही होती हैं। जो मुख्यान्तरिक राजमार्ग, जाने के लिए निर्धारित होता है, उसे उत्तरी व दक्षिणी, मुख्य अरहटमार्ग कहते हैं। उस मार्ग में विभिन्न उत्पादों से भरी हुई गाड़ियां दौड़ती रहती हैं। उन उत्पादों में मुख्य होते हैं; परिष्कृत भोजन-पानी, वस्त्रादि, निर्माण-सामग्रियां, पाचक वात (cooking gas) से भरे हुए बेलनाकार संदूक (cylinders) आदि-आदि। इस तरह से, ये और अन्य भी विभिन्न प्रकार के असंख्य उत्पाद, उस मार्ग से ढोए जाते रहते हैं, जो पूरे देश के लोगों में बांटे जाते रहते हैं, और अतिरिक्त/लोगों द्वारा न उठाई गई आपूर्ति को वनक-मार्गों से भेजा जाकर, भंडारण के लिए वापिस लौटाया जाता रहता है। विभिन्न निरीक्षक-दल, वनक-मार्ग में उपस्थित अतिरिक्त वस्तुओं का पता लगा लेते हैं, और उन्हें भंडारित करवा देते हैं। दूसरा मुख्यान्तरिक राजमार्ग, जो मुख्य वनकमार्ग के नाम से भी विख्यात है, वह पूरे देश से वापिस आने वाली गाड़ियों के लिए बना होता है। उस मार्ग से, औद्योगिक क्षेत्रों के औद्योगिक

उत्पाद भी लाए जाते रहते हैं, और भण्डारणोपरांत, आवश्यकतानुसार अरहटमार्ग तक पहुंचाए जाते रहते हैं, उदाहरण के लिए पूर्वोक्त मुख्य परिष्करण-मार्ग। वह परिष्करण-मार्ग यद्यपि अलग सा दिखता है, परन्तु वह भी वनक-मार्गजाल का ही एक हिस्सा होता है। वनक-मार्ग से पूरे देश का व्यर्थ का कूड़ा-कचरा, अपशिष्ट पदार्थ व नागरिकों के घरों की नालियों का गंदा जल भी ढोया जाता रहता है। वे अपशिष्ट पदार्थ फिर पूर्वोक्त व विशालतम जलशोधन संयंत्र में शोधित कर लिए जाते हैं। उनके विषैले तत्त्व छान लिए जाते हैं, और निकट में ही स्थित व सीधी समुद्र को जाने वाली गन्दी नदी में बहा दिए जाते हैं। सफाई के बाद शेष बचे हुए आवश्यक पदार्थ, पुनः उन वनमार्ग-जालों में दौड़ रही गाड़ियों में भर दिए जाते हैं। वे स्वच्छ पदार्थ फिर इसी तरह से, उत्तरोत्तर रूप से प्रयोग में लाए जाते रहते हैं, जब तक कि पूरी तरह से समाप्त नहीं हो जाते। वनकमार्गों में पाचकवायु (cooking gas) के खाली संदूकों (empty cylinders) से भरी हुई गाड़ियां भी दौड़ती रहती हैं। एक अन्य प्रकार का आतंरिक सड़क-जाल भी देहदेश में विद्यमान होता है, जिसे लीलावत-मार्ग भी कहते हैं। वह वास्तव में वनकजाल का ही सहायक होता है। कई बार देश के सुदूर, सीमान्त व पिछड़े हुए क्षेत्रों से, भारी वस्तुओं को वनकमार्ग तक, पीठ पर ढोकर नहीं पहुँचाया जा सकता। अतः देश के प्रत्येक घर तक, लीलावत सड़कें भी बिछाई गई होती हैं। वे सड़कें कच्ची व संकरी होती हैं, अतः उनके ऊपर गाड़ियों की गति बहुत धीमी होती है। उनके ऊपर दौड़ने वाली गाड़ियाँ भी छोटी होती हैं, और उनके अन्दर अतिरिक्त माल का भराव भी नहीं किया जाता। उन सड़कों पर बहुत से गति-अवरोधक (speed breakers) लगे होते हैं, जिनसे गाड़ियों की तेज गति पर भी लगाम लगी रहती है, और जान-माल की हानि पर भी। उन मार्गों से, खुले घूम रहे, बंदी बनाए गए व मारे गए शत्रुओं को भी ढोया जाता रहता है। इसीलिए उन मार्गों के बीच में, स्थान-स्थान पर बहुत सी सुरक्षा-चौकियां बनी होती हैं। इस प्रकार का उन्नत प्रबंध, देश के मुख्य मार्गों व मुख्य भूभागों को शत्रुओं आदि से होने वाली संभावित हानि से बचाने के लिए ही किया गया होता है। आगे चलकर, वे सड़कें भी बड़ी से बड़ी होती जाती हैं, और उपयुक्त स्थान पर, मुख्य वनकमार्ग में मिल जाती हैं। पूरे देश की सड़कों के किनारों पर विद्युत् विभाग, सूचना-प्रसारण विभाग एवं अन्य संचार-संबंधी विभागों के स्तम्भ भी, थोड़ी-थोड़ी दूरी पर गाढ़े गए होते हैं, जिनके ऊपर सूचना-तारें (communication-cables) व विद्युत-आपूर्ति की तारें बाँधी गई होती हैं। कई स्थानों पर, जहाँ जमीन नरम होती है, व खुदाई के अनुकूल होती है, वहाँ पर वे तारें सड़क के साथ-साथ, उसके किनारों पर गढ़ी हुई होती हैं। उस सूचनातंत्र व

ऊर्जा-तंत्र को स्थापित करने के लिए, सड़कों के किनारों को इसलिए चुना जाता है, क्योंकि वहाँ पर पहले से ही सड़क के लिए जमीन खुदी हुई होती है, जिससे अलग से जमीन को तैयार करने की आवश्यकता नहीं पड़ती। साथ में, सड़क उपलब्ध होने के कारण, तारों, खम्भों आदि विभिन्न वस्तुओं को और कामगारों को लाने-ले जाने में भी कठिनाई नहीं आती। इससे बड़े भारी श्रम (labour) व धन की बचत हो जाती है।

अब देहदेश की पर्वतश्रृंखला के बारे में कहते हैं। देश के उत्तरी छोर पर स्थित, पूर्वोक्त सुमेरु पर्वत तो सबसे ऊंची पर्वतश्रृंखला का सबसे ऊंचा पर्वत होता है। वह सर्वोच्च पर्वतश्रृंखला 'हस्तीफल' नाम से भी विख्यात होती है। उसमें बहुत घने जंगल होते हैं, जिनमें विभिन्न प्रकार के असंख्य जीव-जंतु निवास करते हैं। उन जंगलों में कई बार हिंसक जंतुओं की संख्या अत्यधिक रूप से बढ़ जाती है। फिर भोजन की कमी से परेशान होकर, वे जंतु अक्सर देश के तराई वाले क्षेत्रों में उतरकर उत्पात मचाते रहते हैं। अतः राजा उससे दुखी होकर, जंगल की सफाई करवाता है। उसकी कंटीली, घनी व लम्बी झाड़ियाँ नष्ट करवा दी जाती हैं, जिनमें बहुत से हिंसक जीव छिपे होते हैं। उन आदमखोर व फसलों को हानि पहुंचाने वाले जीवों को देखते ही शिकार करने का आदेश, परेशान राजा से पहले ही मिला होता है। हस्तीफल के निचले भागों में कम घने जंगल होते हैं, क्योंकि वहाँ के लोग अपने निवास व खेती के लिए, उन जंगलों को बारम्बार काटते रहते हैं। वस्तुतः वहाँ के लोग बहुत मेहनती होते हैं, और देश की अर्थव्यवस्था में अपना बहुत महत्त्वपूर्ण योगदान देते रहते हैं। उस पर्वतश्रृंखला में बहुत सी चित्र-विचित्र गुफाएँ व कन्दराएँ भी होती हैं। कई गुफाओं में तो गन्धर्वों, किन्नरों व अप्सराओं की टोलियाँ, दिन-रात गाने-बजाने व नाचने में व्यस्त रहती हैं। उनके मधुर संगीत की आवाज दूर-दूर तक सुनाई देती रहती है। आसपास के गाँवों के लोग तो उस शब्दामृत का पान, अपने कर्णमुखों से करते हुए थकते ही नहीं। वे ग्रामवासी रात-दिन उस संगीत का आनंद उठाते रहते हैं। कई कंदराओं में तो भयानक राक्षस भी रहते हैं, जो भूल से भी अन्दर घुसने वाले को काट-पीट कर खा जाने में जरा भी देर नहीं लगाते। इसलिए लोग उन कंदराओं के आसपास जाने से भी कतराते हैं। परन्तु बहुत से भोले-भाले जीव-जंतु, अनजाने में ही अन्दर घुसते रहते हैं, जिनको खाकर वे महोदर अपना पेट भरते रहते हैं। बहुत सी कंदराओं में तो चमचमाते जुगनुओं की बड़ी-बड़ी व असंख्य बस्तियों का डेरा होता है, इसलिए वे कन्दराएँ रात-दिन चमकती रहती हैं। रात को तो वे किसी विशाल दानव की, क्रोध से भरी हुई लाल आँखों सी भयानक जान पड़ती हैं। जो कोई भी, भूल से या उनके प्रकाश से आकर्षित होकर, उनके अन्दर

घुसता है, वह वहाँ की तेज रौशनी से अंधा होकर रास्ता ही भटक जाता है, और अधिकाँशतः बाहर ही नहीं निकल पाता। बाद में कई बार, गुफाओं से बाहर निकलने वाले, चश्मों के पानी में, उनके गले-सड़े शरीर देखने को मिल जाते हैं। कई गुफाओं में बड़ी तेज हवाएँ बहती रहती हैं। उन तूफानी हवाओं का शोर दूर-दूर तक सुनाई देता रहता है। कई बार तो बड़े-बड़े पक्षी भी उन हवाओं के खिंचाव के प्रभाव में आकर, उन गुफाओं के अन्दर घुस जाते हैं। यदि वे गुफाओं में अधिक अन्दर तक न चले जाएं, तब तो वे हवा के थपेड़ों से कई बार स्वयं ही बाहर निकल भी जाते हैं। परन्तु कई बार वे थक-हार कर गुफाओं के अन्दर ही, हवा से जमीन पर गिर जाते हैं, जहाँ पर अन्धक नाम के अन्धकारप्रेमी प्राणी उनका भक्षण कर लेते हैं। कई कंदराओं में राजा के गुप्तचर छिपे हुए होते हैं, जो इधर-उधर से सूचना इकट्ठी करके, राजा को देते रहते हैं। उनके पास उन्नत प्रकार के खोजी-यंत्र (detective gadgets) भी होते हैं, जो अदृश्य किरणों व विकिरणों के माध्यम से भी, देश के बाहर की सूचनाएँ इकट्ठी कर लेते हैं। इस पर्वत श्रृंखला की विभिन्न कंदराओं से बहुत सी नदियाँ निकलती हैं, जिनमें से कुछ तो देश के अन्दर की ओर मुड़ जाती हैं, और देश के बहुत बड़े भूभाग को सिंचित करती हैं। कुछ नदियाँ देश से बाहर निकलकर, बीहड़ों में चली जाती हैं। देश के अन्दर को जाने वाली नदियों में आगे से आगे, छोटे-बड़े नदी-नाले जुड़ते जाते हैं, जिससे आगे जाकर वे नदियाँ बहुत चौड़ी हो जाती हैं, जो लगभग पूरे देश की कृषियोग्य भूमि को सिंचित करती रहती हैं। सुमेरु पर्वतश्रृंखला के नीचे, वह पूर्वोक्त व बीच में से उठी हुई संकरी घाटी विद्यमान होती है, जिसमें ठंडी-ठंडी, सुगन्धित व प्राणों से भरी हुई अमृतमयी समीर निरंतर चलती रहती है। उस हवा से वहाँ पर उगे हुए दिव्य वृक्षों के स्वर्णिम पल्लव निरंतर हिलते रहते हैं, जिससे एक बहुत ही मधुर ध्वनि उत्पन्न होती रहती है। वहाँ पर एक भव्य शिवमंदिर भी होता है, जहाँ पर शिवगण, गन्धर्व, अप्सरागण व किन्नर आदि दिव्यपुरुष सदैव गाते-बजाते व नाचते रहते हैं। उस मधुर संगीत से आकृष्ट होकर, दूर-दूर के रहने वाले लोग भी वहाँ इकट्ठे होते रहते हैं, जिससे वहाँ पर सदैव एक उत्सव के जैसा माहौल होता है। उसी दिव्य शिवमंदिर के कारण ही उसका दूसरा नाम शिवघाटी भी है। शिवघाटी से दक्षिण की ओर जाने पर, एक लम्बा-चौड़ा भूभाग दिखाई देता है। एक मध्यम आकार के, देश की चौड़ाई में स्थित पर्वत के बाद, बहुत सी छोटी-छोटी पर्वतमालाएं, पूर्व से पश्चिम की ओर, समानांतर रूप से फैली होती हैं। उनके बीच में बहुत सुन्दर व उपजाऊ घाटियाँ होती हैं। उन्हें पुष्प-घाटियाँ भी कहते हैं, क्योंकि उन घाटियों में सदैव असंख्य प्रकार के रंग-बिरंगे पुष्प खिले रहते हैं। उनके ऊपर सदैव भंवरे गुंजायमान रहते हैं।

विविध प्रकार की रंग-बिरंगी तितलियों के लिए तो वे घाटियाँ किसी जन्नत से कम नहीं हैं। उन घाटियों को मधुलोक भी कहते हैं, क्योंकि पूरे देश के मधुपालक, वहाँ पर इकट्ठे होकर, मनचाहा मधु इकट्ठा करके, उसके विपणन के लिए दक्षिण की ओर चले जाते हैं। किसान लोग भी उन घाटियों में बहुत सी फसलों को उगाते हैं, जिनसे देश की अधिकाँश आवश्यकताएँ पूरी हो जाती हैं। उस क्षेत्र से, पूर्व व पश्चिम की ओर भी एक-एकविशाल पर्वतमाला निकलती है, जो देश के क्षेत्रीय विस्तार को बहुत अधिक बढ़ा देती हैं। उन पर्वतमालाओं में हंथ नाम की, बहुत परिश्रमी लोगों की एक जनजाति निवास करती है। यद्यपि वहाँ पर उपयुक्त जमीन की कमी के कारण, वे लोग मेहनत-मजदूरी के लिए, पूरे देश में और यहाँ तक कि विदेशों में भी पलायन करते रहते हैं। देश की अर्थव्यवस्था में उन लोगों का बहुत बड़ा हाथ होता है। उन्हीं घाटियों के पश्चिम की ओर, वह पूर्वोक्त वायुपूर्ण व विशाल जलाशय भी विद्यमान होता है, जिसका जल तेज हवा के थपेड़ों से ऊंचे-ऊंचे हिलोरे खाता रहता है। उस जलाशय के निकट ही वह पूर्वोक्त विशाल जलधक्कायंत्र (water pump) भी उपस्थापित (install) किया गया होता है। निकटस्थ जलाशय की ठंडक से, उस यंत्र का तापमान भी स्थिर बना रहता है। उस यन्त्र के लगाए गए बलशाली धक्कों व उपरोक्त/निकटस्थ जलाशय के, आसमान की ओर उछलते हुए जल से, आसपास के भूखंड भी थरथराते हुए से प्रतीत होते हैं, परन्तु चारों ओर की सुदृढ़ पर्वतश्रृंखलाओं की जकड़न में वे सुरक्षित स्थित रहते हैं। उन विशाल संरचनाओं के दक्षिणी किनारों पर, बहुत ऊंचा, सीधा खड़ा व अपेक्षाकृत रूप से कम चौड़ाई वाला एक पर्वत विद्यमान होता है। वह पर्वत उस उत्तेजित भूभाग (disturbed land) से देश के मध्य भाग के मैदानी क्षेत्रों को अलग करके, उन्हें सुरक्षित कर देता है। वह पर्वत पूरे देश की चौड़ाई में फैला होता है, और देश को विभाजित सा करता हुआ प्रतीत होता है। पश्चिम दिशा में, सीमा के निकट, उपरोक्त संवेदनशील संरचना-भूमियों (sensitive lands) को अतिरिक्त सुरक्षा देने के लिए, देश की पूरी चौड़ाई के माप के क्षेत्र के लगभग बीच में, उसके उत्तरी छोर के निकट से लेकर दक्षिणी छोर के निकट तक, एक अद्भुत व अंतर्मिश्रित/अंतर्युग्मित (interconnected) पर्वत श्रृंखला गुजरती है। वास्तव में वह सुमेरु पर्वत के आधार से लेकर, दक्षिण में समुद्र तट तक फैली होकर, लगभग पूरे ही देश से होकर गुजरती है। उस श्रृंखला में चित्र-विचित्र संरचनाएँ, आकृतियाँ, कन्दराएँ, चट्टानें, जीव-जंतु व वृक्षादि होते हैं। उस पर्वतश्रृंखला में बसने वाले पहाड़ी लोग बहुत बुद्धिमान होते हैं, जो समय-समय पर देश के काम-काज में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते रहते हैं। उस श्रृंखला के पर्वत आपस में कलापूर्ण ढंग से

जुड़े होते हैं, और ऐसे प्रतीत होते हैं कि मानो जैसे बहुत से विशालकाय महामानव एक-दूसरे का हाथ, कलापूर्ण ढंग से पकड़कर, एकपंक्ति में खड़े होकर, हास्यमुद्रा में लयबद्ध नृत्य कर रहे हों। उस पर्वतश्रृंखला के आसपास की वायु उच्च दबाव के साथ ऊपर उठती रहती है, जिससे वहाँ पर वायुयानों को उड़ान भरने में बहुत सहायता मिलती है। इसीलिए उस श्रृंखला के आसपास बहुत से विमानपत्तन (airports) बने होते हैं। उससे देश की आतंरिक व बाह्य परिवहन-प्रणालियों (transport systems) को बहुत बल मिलता है, जिससे पूरे देश की आवश्यकताओं को त्वरित रूप से व कम खर्चे के साथ पूरा करने में बहुत सहायता प्राप्त होती है। वह श्रृंखला पूरे देश को बाहरी आक्रमणों से भी बचाती है। देश का मध्य भाग पठारी होता है। वहाँ के भूभाग में खनिजों के अपार भण्डार होते हैं। वह भाग देश का औद्योगिक क्षेत्र (industrial area) भी होता है। वहाँ पर विभिन्न प्रकार के उद्योग होते हैं। देश का पूर्वोक्त विशाल परिष्करण-यंत्र भी तो उसी भाग में स्थित होता है। वहाँ पर कृषि-आधारित उद्योग भी बहुतायत में होते हैं। वहाँ पर कृषि-व्यवसाय का भी काफी बोलबाला होता है, यद्यपि देश के वास्तविक कृषिक्षेत्र तो दक्षिणी भूभाग के प्रारम्भ में ही स्थित हैं; पूर्वोक्तानुसार, जहाँ से कच्चे माल को मध्यवर्ती भूभाग के औद्योगिक क्षेत्रों तक पहुँचाने के लिए, सड़कों का एक जटिल जाल बिछा होता है। दक्षिणी भूभाग तो पूर्णतया मैदानी होता है। वहाँ पर विभिन्न फसलों के उत्पादन के लिए उपयुक्त जलवायु व बहुत ही उपजाऊ भूमि होती है। उत्तरी व मध्य भूभाग से आने वाली नदियाँ, वहाँ पहुंचकर, निःस्वार्थ परसेवा करके समृद्ध हो जाती हैं। उन नदियों के जल में खनिजों व अन्य पोषक तत्त्वों की भी भरमार होती है। उस जल से सिंचित, वहाँ की भूमि सोना उगलती है। उस कृषियोग्य भूभाग से और नीचे, दक्षिण की ओर मंडी-स्थान (market place) होता है, जहाँ पर कृषि-उत्पाद इकट्ठे किए जाते हैं, और इधर-उधर खरीदे-बेचे जाते हैं। उसके और अधिक दक्षिण की ओर, कृषि-उपोत्पाद परिष्करण क्षेत्र (agro byproducts purifying area) होता है। वहाँ पर फसलों के अतिरिक्त भागों, जैसे कि उनके डंठलों, पत्तों आदि को साफ किया जाता है, और उनके खाने-योग्य भागों को भंडारित कर दिया जाता है। वहाँ से, दूर-दूर से आए हुए पशु-पालक, उस पशु-चारे को ले जाते हैं, और अपने पशुओं को खिलाकर, उनसे बड़ी मात्रा में दूध, घी, ऊन, माँस, अंडा आदि पशु-उत्पादों (animal products) को बहुतायत में पैदा करते हैं। फसलों के उन अंशों को, जिन्हें पशु भी नहीं खा सकते, उन्हें मध्यमार्ग तक ले जाया जाता है, और उस पर दौड़ रही खाली गाड़ियों में भर दिया जाता है। वे फिर देशीय-सीमा के बाहर, बीहड़ों में फेंक दिए जाते हैं, जहाँ पर सड़-गल कर वे स्वयं ही नष्ट

हो जाते हैं। दक्षिणी भूभाग के पश्चिमी भाग में, समुद्र के निकट ही वह पूर्वोक्त विशाल जलशोधन यंत्र भी स्थापित किया गया होता है। वहीँ पर उसके दक्षिण व पूर्व की ओर, मुख्यराजद्वार के निकट व सीमा से सटा हुआ, नवदेशनिर्माणविभाग का पूर्वोक्त क्षेत्रीय कार्यालय व नवदेशगर्भक बीहड़स्थल भी विद्यमान होता है। फिर दक्षिण की ओर उत्तरोत्तर आगे बढ़ते हुए, मध्यमार्ग समाप्त होता हुआ दिखाई देता है, जिसके सीमाबद्ध मुख्यराजद्वार के बाहर अंतरदेशीय बीहड़ क्षेत्र व उसके और आगे समुद्र भी दिखाई पड़ता है। दक्षिणी सीमा के निकट, दो लम्बी पर्वत मालाएं भी निकलती हैं। उनमें से एक पूर्व की ओर फैली होती है, और दूसरी पश्चिम की ओर। उनमें समुद्रतटीय वन पाए जाते हैं। वहाँ पर देश के प्रमुख विदेशव्यापारिक केंद्र बने होते हैं। क्योंकि वे क्षेत्र समुद्र के निकट बने होते हैं, अतः विदेशों से व्यापार में सहायक होते हैं। उसके लिए, उनकी समुद्र से लगती तलहटियों में बहुत सी बंदरगाहें बनी होती हैं।

जो छोटे-छोटे व निम्न श्रेणी के देश, नए-नए बने होकर, विकास की प्रारंभिक अवस्था में होते हैं, उनमें सभी प्रकार के गुणवान अधिकारी उपलब्ध हो जाते हैं। इसलिए बड़े देश उनसे मित्रता करने के प्रयास में लगे रहते हैं। वास्तव में उन बड़े देशों को सभी प्रकार के गुणवान अधिकारियों की आवश्यकता, अपने विकास के लिए पड़ी होती है, परन्तु वे बड़े देश उनको उनसे छीन लेते हैं, जिससे उन छोटे देशों का विघटन हो जाता है। यद्यपि वे बड़े देश स्वार्थवश, पुनः-पुनः उन छोटे-छोटे देशों को संगठित करते रहते हैं, और उनके अन्दर विकास की मशाल जलाते रहते हैं, ताकि उन बड़े देशों की अपनी आवश्यकता लम्बे समय तक पूरी होती रहे।

गरमदल के सदस्यों में, कलिक उपनाम के आप्रवासी सबसे महत्त्वपूर्ण होते हैं। ये कठोर इरादों वाले होते हैं, और देहदेश में बसते ही, वहाँ के सुरक्षा ढाँचे को सुदृढ़ करने लग जाते हैं। देश के महत्त्वपूर्ण ठिकानों के चारों ओर, ये कठोर सुरक्षाकवच का निर्माण कर देते हैं, जिन्हें बड़े से बड़े आग्नेयास्त्र भी आसानी से नहीं भेद पाते। इसी तरह से, ये बड़े-बड़े उद्योगों के कठोर पिष्टकों (grinders) का निर्माण भी करते हैं, जो विभिन्न प्रकार की वस्तुओं को पीसकर, उनसे विभिन्न संरचनाओं के निर्माण में सहायता करते हैं। ये टूटे हुए मार्गावरणों (parafits) को जोड़ने में भी सहायता करते हैं। साथ में, ये विभिन्न क्षेत्रों की विभिन्न प्रकार की जल-नलिकाओं का भी, रिसाव आदि ढूँढने के लिए निरीक्षण करते रहते हैं, व यदि कहीं हो, तो उसे रोकते रहते हैं। लोग इनके माध्यम से, आपस में सूचनाओं का आदान-प्रदान करते हैं। ये लोगों का बल व उत्साह भी बढ़ाते रहते हैं। ये अच्छे पाचक भी होते हैं, और स्वादिष्ट व पौष्टिक भोजन बनाकर, विभिन्न समारोहों में

लोगों को खिलाते रहते हैं, जिससे वे लोग भोजन को पर्याप्त मात्रा में खाकर, स्वस्थ बने रहते हैं। देश के विशाल धक्का-यंत्र को नियमित व नियंत्रित रखने में भी ये महत्त्वपूर्ण योगदान देते हैं, अतः अप्रत्यक्षरूप में, आपूर्तिनलिकाओं के अन्दर के दबाव को भी नियंत्रण में रखते हैं। इसके साथ, ये सड़कों पर वाहनों की संख्या को भी नियंत्रित करते हैं, ताकि उनकी अधिक संख्या से व भारी वाहनों से, सड़कें क्षतिग्रस्त न हो जाएं। ये कई गुटों के विद्रोह को शाँत करने में भी भूमिका निभाते रहते हैं, विशेषतः देश के दक्षिणी भाग में, मध्यमार्ग के किनारों के निकट बसे हुए लोगों के विद्रोह को। ये अधिकारी भी यदि अधिक संख्या में, विशेषतः बीहड़ों से बुलाए जाएं, तो पूर्वोक्त उपस्कर अधिकारियों की तरह ही, विशाल जलशोधक-संयंत्र में बवाल मचवा कर, आँशिक चक्काजाम करवा सकते हैं। गरमदल के सदस्यों का स्वभाव गरम होता है, इसलिए वे एक-दूसरे को अधिक भी सहन नहीं करते, विशेषतः भिन्न उपनाम वालों को। इसलिए यदि इनको पृथक-पृथक रूप से आमंत्रित किया जाए, तो अधिक ठीक रहता है।

मागधम उपनाम के गरमदल-अधिकारी, देश के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण होते हैं, और लगभग ३०० प्रकार के छोटे-बड़े, विभिन्न कार्यों का उत्तरदायित्व संभालते हैं। ये कलिक-अधिकारियों के आप्रवास, उनकी नियुक्ति व उनको सुरक्षा उपलब्ध करवाने में भी सहायता करते हैं। ये ताकतवर श्रमिकों के उत्पात से भी देश को बचाते हैं। मुख्य कामों में, ये श्रमिकों के लिए निपुण मालिशियों का इंतजाम करवाते हैं, जो उनकी माँसपेशियों की थकान को मिटाते रहते हैं, और उन्हें चुस्त-दुरुस्त, बलवान व तरोताजा बना कर रखते हैं। ऊर्जाविभाग व वस्तुनिर्माणविभाग में भी ये सहकारी भूमिका निभाते हैं। ये अधिकारी भी हरितपुर आदि बहुत से छोटे देशों में पाए जाते हैं। हरितपुर नाम इसलिए पड़ा है, क्योंकि इस देश के पेड़-पौधे, पूरे वर्षभर हरे-भरे रहते हैं।

स्फटिक उपनाम के अधिकारी, कलिक-अधिकारियों की सहायता, उनके द्वारा विभिन्न सुरक्षा-कवचों के निर्माण में करते हैं। ये दोनों आपस में मिलकर, अपने आप्रवासक देश की विभिन्न मुलायम संरचनाओं (software) को ढांचागत आधार प्रदान करने के लिए, कठोर वस्तुओं (hardware), जैसे कि चित्र-विचित्र डब्बों, बोतलों, तख्तों, आवरणों आदि का निर्माण करवाते रहते हैं, इसलिए निर्माणाधीन नवदेश में व विकसित हो रहे पुराने देश में तो ये निर्णायक भूमिका निभाते हैं। जब किन्हीं-किन्हीं, विशेषकर कमजोर व पुराने देशों में, पूर्वोक्त अस्त्रज्ञानी के बहुत से पिछले कुकर्मों से नाराज होकर, देश का प्रशासन उसे पक्के तौर पर निकाल देता है, और उसके स्थान पर नई नियुक्ति भी नहीं करवाता है; तब उन कठोर आवरणों का क्षरण होने लगता है,

क्योंकि वही उद्दंड अधिकारी तो लोगों को दंड आदि का भय दिखाकर, उनसे राष्ट्रीय संपत्ति की सुरक्षा सुनिश्चित करवाता था। वैसी अवस्था में, कलिक व स्फटिक, दोनों वर्गों के अधिकारी, अत्यावश्यक व निर्णायक हो जाते हैं, ताकि ये उन कठोर आवरणों का शीघ्रता से नवनिर्माण करवाते रहें, और पुराने आवरणों को बदलवाते रहें। स्फटिक-अधिकारी, लोगों के घरों का निर्माण करने वाले (house builders) संगठनों व वस्त्र-जूते (apparel industries) आदि बनाने वाले उद्योगों को भी अपना सहयोग उपलब्ध करवाते हैं। इनके द्वारा बनवाए गए मकान वातानुकूलित व भूकंपरोधी होते हैं। यहाँ तक कि ये वस्त्रों-जूतों आदि को भी वातानुकूलित ही बनवाते हैं। ये भवनों का निर्माण कुछ इस तरह से करवाते हैं कि उनमें रहने वाले लोगों को हवा व धूप की कमी से भी न जूझना पड़े। राजधानी के विशिष्ट लोगों के बीच में भी ये आपसी संवाद बना कर रखते हैं। ये अधिकारी, देश के लिए अतिमहत्त्वपूर्ण व उत्तम श्रेणी के कागज़ का निर्माण भी करवाते हैं, जिनके ऊपर ज्ञान-विज्ञान की विभिन्न पुस्तकों, विशेषतः संविधान की छपाई की जाती है। इस वर्ग के लोग, देश में विद्यमान विभिन्न विचारधाराओं के बीच में, संतुलन बनाए रखने का काम भी करते हैं, जो देश की स्थिरता के लिए बहुत आवश्यक है।

देहदेश ने अपने चारों ओर भी एक अतिरिक्त सुरक्षा-घेरा बनाया होता है, जिससे अंतरिक्ष से आने वाले विशालकाय उल्कापिंडों या शत्रुओं के द्वारा दागे गए आग्नेयास्त्रों (missiles) से भी उसके नागरिकों की सुरक्षा हो जाती है। कई बार बहुत से देश आपस में इकट्ठे होकर भी, संयुक्तरूप से अपने चारों ओर एक सुरक्षा-चक्र का निर्माण कर लेते हैं। वह एक प्रकार से उन परस्पर सम्बंधित विशालकाय देशों का एक अति विशालकाय घर ही होता है।

उपरोक्त तीनों गरमदल-अधिकारियों के अतिरिक्त, सदम व कलम उपनाम के अधिकारी भी होते हैं, जो भी इन्हीं की तरह ही अधिक संख्या में चाहिए होते हैं, क्योंकि ये भी बहुत सी बड़ी-बड़ी परियोजनाओं (big projects) को शुरु करवाते हैं, या उनमें बड़ी-बड़ी भूमिकाएं निभाते हैं। परन्तु तुलनात्मक रूप से ये प्रत्येक छोटे देश में, यहाँ तक कि बीहड़ों में भी, सबसे अधिक संख्या में पाए जाते हैं, इसलिए इन अधिकारियों की कमी से कभी नहीं जूझना पड़ता।

गरमदल की बीसियों किस्म की बिरादरियाँ ऐसी भी हैं, जिनके अधिकारी लोग, अपेक्षाकृत रूप से कम संख्या में ही चाहिए होते हैं, क्योंकि वे विभिन्न कामों के अंतर्गत, छोटी-छोटी सी ही, यद्यपि बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। उनमें प्रथम वर्ग इस्पत उपनाम के लोगों का आता है। वे वस्तुनिर्माण में माहिर होते हैं। वे वात-घट (gas cylinders) ढोने वाले लोगों के वात-घटों का

व अन्य आवश्यक उपकरणों का निर्माण करवाते हैं। वे देश के विभिन्न भागों में, विशेषतः औद्योगिक क्षेत्रों में, अस्थायी/अतिरिक्त रूप से सहयोगात्मक वात-भण्डारगृहों (temporary gas-storehouses) का निर्माण भी करवाते हैं। वे सुरक्षाविभाग को भी मजबूती प्रदान करते हैं, और संविधान-पुस्तक की छपाई में भी सहयोग करते हैं। वे भी सबनदेश, पत्रदेश व पालकीवहदेश नामक छोटे-छोटे देशों में अधिकाँश रूप से बसे होते हैं। पालकीवह नाम इसलिए पड़ा है, क्योंकि उस देश के लोग, पूरे विश्वभर के लिए पालकी उठाने वालों को तैयार करते रहते हैं।

अन्य लघुसंख्यक गरमदल-अधिकारियों का वर्ग उडन्त उपनाम वालों का है। वास्तव में ये, देश के अतिमहत्त्वपूर्ण अधिकारी, थारमन के हितैषी, सेवक, भक्त व पोषक होते हैं। थारमन मुख्यतः इन्हीं लोगों के कारण ही तो पूरे देश का राजगुरु होता है। वास्तव में यदि ये थारमन का अप्रत्याशित रूप से समर्थन करना छोड़ दें, तो थारमन अपने तेज को व अपनी प्रतिष्ठा को शीघ्र ही खो दे, जिससे उसे कोई न पूछे। ये अधिकारी भी बहुत से छोटे देशों में पाए जाते हैं, जिनमें मुख्य हैं, डुगपुर, अन्डमानपुर व सगरपुर। सगरपुर नाम इसलिए पड़ा है, क्योंकि इस देश के निवासी, सागर के पुजारी होते हैं, और उसके आसपास रहना पसंद करते हैं।

गरमदल के अल्पसंख्यकवर्ग के अन्य सदस्य हैं, 'फलकराज' उपनाम के लोग। ये भी विभिन्न उद्योगों में पिष्टक-चक्रों (पीसने वाले चक्कों) की मुरम्मत व उनका रखरखाव करते रहते हैं। साथ में, ये वृक्षारोपण करवा कर, मृदाक्षरण को भी रोकते रहते हैं। ये विभिन्न संरचनाओं के आधारभूत ढाँचों (like hardwares) का निर्माण व उपद्रवियों, आन्दोलनकारियों आदि से उनका रक्षण भी करवाते रहते हैं। ये कटकदेश में, मूलरूप से बसे होते हैं।

उपरोक्त कड़ी में अगला वर्ग है, 'कपूरवास' उपनाम के लोगों का। उनका यह उपनाम इसलिए पड़ा है, क्योंकि वे लोग कपूर को बहुत पसंद करते हैं, और अधिकाँश अवसरों पर, उसकी खुशबू का प्रयोग करते रहते हैं। वे भी फकरदिन-विद्रोहियों से देश को बचाने के लिए, टगर-लोगों की सहायता करते रहते हैं। वे देश के तापविद्युतघरों में कोयले को जलवा कर, देश के लिए विद्युत-उत्पादन में सहायता करते हैं। उनके पास एक वैसी तकनीक होती है, जिससे वे सड़े-गले गोबर व घास-पत्तों से भी तेल (petrol) बना लेते हैं, जो देश की अर्थव्यवस्था में बहुत काम आता है। वे भी आधारभूत संरचनाओं के निर्माण में, फलकराज-लोगों की सहायता करते हैं। वे वात-पेटिकाओं (gas cylinders) को ढोने वाले लोगों की नियुक्ति व उनका प्रशिक्षण भी करवाते हैं। वे शिशुपुर, मसीपुर, व अन्नजपुर आदि देशों के स्थायी निवासी होते हैं, यद्यपि वे अन्य देशों में भी बिखरे हुए

मिल जाते हैं। 'शिशुपुर' नाम इसलिए पड़ा है, क्योंकि उस देश के लोगों को बालकों से बहुत लगाव व प्रेम होता है।

अगला वर्ग है, 'जनकदास' उपनाम के आप्रवासित आधिकारियों का। ये अधिकारी देश के रक्षाविभाग को अपनी सेवाएं उपलब्ध करवाते हैं। ये विभिन्न प्रकार के, खेती के अत्याधुनिक उपकरणों व अन्य भी विभिन्न क्षेत्रों से सम्बंधित अत्याधुनिक उपकरणों का निर्माण करवाते हैं, जिनसे विभिन्न कार्यों को करने में बहुत आसानी हो जाती है, और कार्यों को पूरा करने में समय भी बहुत कम लगता है। ये सड़कों की दशा को भी सुधारते रहते हैं, जिससे उन पर दौड़ रहे वाहनों की संख्या व उनकी रफ्तार (speed limit) में, सुरक्षित रूप से काफी इजाफा हो जाता है। ये अंतरराष्ट्रीय सीमा-भित्ति की भी देखरेख व मुरम्मत करवाते रहते हैं। साथ में, उसको रंग-रोगन करवाके, उसे चमका देते हैं, जिससे अंतरराष्ट्रीय जगत में देश को बहुत ख्याति प्राप्त होती है। देश की वृद्धि व विकास में ये अहम भूमिका निभाते हैं। ये मसीदेश, सगरदेश, अंडमानदेश व अन्नजदेश के मूलनिवासी होते हैं।

'कर्मबंधु' उपनाम के लोगों का एक अन्य गरमदल-वर्ग है, जिसका मुख्य काम देश की सड़कों पर दौड़ रहे वाहनों के ऊपर से अतिरिक्त वस्तुओं को उठवाकर, उन्हें भंडारगृहों में सुरक्षित रखवाना होता है। ये लोग कपूरवास-लोगों की भी, कई कामों में बहुत सहायता करते हैं। ये भी मसीपुर, अन्नजपुर, गोपुर व नटपुर नामक देशों के मूलनिवासी होते हैं। 'गोपुर' नाम इसलिए पड़ा है, क्योंकि उस देश के निवासी गो-प्रेमी होते हैं, और अधिकाँशतः गाय के साथ रहना पसंद करते हैं। 'नटपुर' नाम इसलिए पड़ा है, क्योंकि उस देश के निवासी घुमंतू व चलता-फिरता जीवन जीना पसंद करते हैं, तथा वैसा जीवन जीने वाले लोगों के साथ ही रहना पसंद करते हैं।

'सुतलानी' उपनाम के अल्पसंख्यक गरमदल-अधिकारी, टगर-अधिकारियों के घनिष्ट मित्र होते हैं। दोनों सदैव साथ-साथ रहते हैं, और साथ मिलकर ही काम करते हैं। दोनों साथ मिलकर, फकरदिन सहित कई प्रकार के विद्रोहियों से देश के लोगों की रक्षा करते रहते हैं। ये अन्य अधिकारियों के साथ मिलकर, सीमा-भित्तियों का रखरखाव भी करते हैं। ये थारमन गुरु के समर्थक भी होते हैं। सुतलानी-लोग भी सगरपुर, नया अंडमानपुर, नटपुर, मसीपुर व अन्नजपुर आदि छोटे-छोटे देशों में बहुतायत में पाए जाते हैं। अंडमानपुर देश के दो भाग हैं। पुराना अंडमानपुर व नया अंडमानपुर। नया अंडमानपुर आधुनिक व अत्युन्नत प्रकार से विकसित किया गया क्षेत्र है। उसे बने हुए थोड़ा सा ही समय हुआ है। पुराना अंडमानपुर बहुत समय पहले

अस्तित्व में आया था। वह बहुत धीरे-धीरे विकसित हुआ, और आज भी लगभग उसी पुरानी शैली में स्थित है। बड़ी गहराई से देखने पर ही, वह पहले की अपेक्षा नगण्य से अंतर के साथ दिखाई देता है। परन्तु नया अंडमानपुर तो एकाएक अस्तित्व में आया, और बड़े व विकसित देशों के सहयोग से, उसने विकास की सारी सीमाएं शीघ्र ही लांघ दीं। वास्तव में विकसित देशों ने उसे अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए ही विकसित किया। उन्होंने उस देश में बहुत से प्रशिक्षण केंद्र खुलवाए, जिनमें विभिन्न प्रकार के अधिकारियों को प्रशिक्षण दिया जाने लगा, विशेषतः उनको, जिनकी कमी से विकसित देशों को अक्सर जूझना पड़ता था। फिर वे उन अधिकारियों को उत्तम सुविधाओं का लालच देकर, अपने देशों के अन्दर आप्रवासित करने लगे। ऐसे बहुत से उदाहरण हैं, जब बड़े व विकसित देश, छोटे-छोटे देशों को अपनी सुविधा के अनुसार विकसित कर देते हैं, और फिर उन्हें कठपुतलियों की तरह नचाते रहते हैं।

अगला वर्ग है 'मंगत' उपनाम के लोगों का। ये भी टगर-लोगों व सुतलानी-लोगों के साथ मिलकर, विद्रोहियों से निपटने में, उनकी सहायता करते रहते हैं। ये लोग प्रसार-शिक्षा (extension education) में भी माहिर होते हैं। पूरे देश में, स्थान-स्थान पर, ये प्रसार-शिविर (extension-camps) लगाते रहते हैं, और उनमें जनता को जागरूक करते रहते हैं। इनसे प्रेरणा लेकर, लोग अपनी क्रियाशीलता को बढ़ा देते हैं, और अपने स्वास्थ्य के साथ-साथ, राष्ट्र के स्वास्थ्य पर भी, पहले से अधिक ध्यान देने लग जाते हैं। विभिन्न वस्तुओं के उत्पादन में भी इनका हाथ होता है। आधारभूत संरचनाओं को भी ये बढ़ावा देते हैं। ये अन्नसपुर, नटपुर व अन्नजपुर देश के मूलनिवासी होते हैं। 'अन्नजपुर' नाम इसलिए पड़ा है, क्योंकि उस देश के लोगों को अनाजों से विशेष लगाव होता है। वे केवल अनाज का ही उत्पादन करते हैं। अनाज से ही उस देश की अर्थव्यवस्था चलती है। अनाज का निर्यात करके, वे अपने लिए आवश्यक, विभिन्न वस्तुओं का आयात करते हैं। यहाँ तक कि वे सब्जियां, दालें आदि भी, बाहर से ही मंगवाते हैं।

'मेदनी' उपनाम के लोगों का, एक अन्य वर्ग होता है। इस वर्ग के लोग लगामपुर, अन्नजपुर, डुगपुर व नटपुर में बहुतायत से पाए जाते हैं। 'लगामपुर' नाम इसलिए पड़ा है, क्योंकि उस देश के लोगों को घोड़ों से विशेष प्यार होता है। वे चित्र-विचित्र घोड़ों को पालने का शौक रखते हैं, और घुड़सवारियों का आनंद उठाते रहते हैं। अक्सर वे रंग-बिरंगे व रमणीक स्थानों पर, अपने घोड़ों के साथ दिखते रहते हैं। मेदनी-अधिकारी अपने आप्रवासक देश के लोगों की रोज-रोज की विभिन्न आवश्यकताओं को पूरा करते रहते हैं, जिससे वे पूरे तन-मन से अपना काम कर पाते हैं। कुछ

आवश्यक वस्तुओं के उत्पादन में भी उनका हाथ होता है। देश की विभिन्न संरचनाओं की ठोक-मुरम्मत करने वाले विभिन्न लोगों का भी वे निरीक्षण करते रहते हैं, और उनसे शीघ्रता से अपने काम पूरे करवाते हैं, ताकि कहीं किन्हीं खराब पड़ी वस्तुओं से, कोई नई समस्या न उत्पन्न हो जाए।

'कबालिक' उपनाम के अधिकारियों की भूमिका भी किसी से कम नहीं होती। वास्तव में 'जनकदास' वर्ग व 'कबालिक' वर्ग, दोनों एक-दूसरे के, पुराने समय के रिश्तेदार होते हैं, अतः दोनों के बीच में सर्वाधिक निकटता होना तो स्वाभाविक ही है। कबालिक-लोग, जनकदास-लोगों के वंशानुगत कार्यों को भी कर सकते हैं। इसीलिए जब देश में जनकदास-अधिकारियों की कमी होती है, या जब वे छुट्टियों पर चले जाते हैं, तब कबालिक-अधिकारी ही उनके कार्यभारों को संभालते हैं। वे बाबादास नामक पूर्वोक्त नरमदल अधिकारियों को भी देश के अन्दर आप्रवासित करने में सहायता करते हैं, और उनके उच्चतर प्रशिक्षण की भी व्यवस्था करवाते हैं। सुरक्षा-विभाग में भी वे सैनिकों के साथ मिलकर, शत्रुओं को खदेड़ने में उनकी सहायता करते हैं। वे गुरु थारमन के कार्यों में भी सहयोग करते हैं। पूरे देश को समस्यारहित रखने में, वे अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

देहदेश के भिन्न-भिन्न स्थानों पर, स्थानीय आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए, भिन्न-भिन्न उद्योग स्थापित किए गए होते हैं। इससे सामान को इधर-उधर लाने-ले जाने की परेशानियों से कम ही जूझना पड़ता है। उदाहरण के लिए, खेती के उपकरण बनाने वाले उद्योग, कृषि-क्षेत्रों के आसपास होते हैं। इसी तरह से, विभिन्न अधिकारियों को, अपने विभिन्न कार्यों को अमलीजामा पहनाने के लिए, भिन्न-भिन्न वस्तुओं की आवश्यकता पड़ती है; जो उन सम्बंधित अधिकारियों के कार्यालयों के आसपास स्थित उद्योगों से पूरी की जाती है। उदाहरण के लिए, गुरु थारमन को बहुत अधिक संख्या में शिष्यगण व कार्यकर्ता आदि चाहिए होते हैं। वे तो दूसरे स्थानों से भी बुला लिए जाते हैं, परन्तु उन्हें विशेष प्रकार के वस्त्रों (वर्दी), जूतों, खाने-पीने, ठहरने व प्रशिक्षण आदि की आवश्यकता होती है। उनके विशेष वस्त्रों आदि को व उनकी प्रशिक्षित चाल-ढाल को देखकर ही पूरे देश के नागरिक समझ जाते हैं कि वे गुरु थारमन के चेले हैं, इसलिए वे अपने सम्माननीय गुरु के द्वारा भेजे गए उपदेशकों को सुनने के लिए तैयार होकर, इकट्ठे हो जाते हैं। गुरु थारमन की शिष्य-मंडलियों की अन्य दैनिकोपयोगी व विशिष्ट आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए भी, गुरु के विशाल परिसर (campus) में ही विशिष्ट उद्योग लगे होते हैं। जो सामान्य उद्योग होते हैं, वे

तो पूरे देश में बिखरे होते हैं। उन सामान्य उद्योगों को हम लघु या कुटीर उद्योग भी कह सकते हैं, क्योंकि वे छोटे-छोटे होते हैं, और आसपास की छोटी-मोटी आवश्यकताओं को पूरा करते रहते हैं। उदाहरण के तौर पर, रहने के लिए घर व पहनने के लिए वस्त्र, हर स्थान पर चाहिए होते हैं। इसी तरह, चलने के लिए सड़कें भी हर जगह चाहिए होती हैं। इसलिए ऐसी अहम जरूरतों से सम्बंधित वस्तु-निर्माण के उद्योग लगभग प्रत्येक क्षेत्र में, आवश्यकतानुसार लगे होते हैं। यदि आवश्यकता न हो या कम आवश्यकता हो, तो कुछ उद्योग बंद भी करवा दिए जाते हैं। विभिन्न यंत्रों के कलपुर्जों के उद्योग भी प्रत्येक क्षेत्र में होते हैं। सीमाभित्तियों के निर्माण में काम आने वाली वस्तुओं के उद्योग सीमाक्षेत्रों में होते हैं। मुख्यायात द्वार/मध्यमार्ग-प्रवेशद्वार पर लगे हुए, कांट-छाँट व घिसाई-पिटाई करने वाले प्राथमिक परिष्करणयंत्रों को उनके कलपुर्जों के साथ बनाने वाले उद्योग, उस आयातद्वार के निकट ही स्थापित किए गए होते हैं। हथियारों व अन्य सुरक्षा-उपकरणों को बनाने वाले उद्योग भी रक्षाविभाग के कार्यालयों के आसपास ही होते हैं। परन्तु देहदेश की रक्षाप्रणाली तो सर्वोत्तम होनी चाहिए, क्योंकि बीहड़ों में घात लगाकर बैठे हुए शत्रु, सँभलने का अवसर ही नहीं देते। इसलिए चलायमान रक्षा-उद्योगों (portable defence-industries) का प्रचलन भी वहाँ पर बहुत अधिक है। उस चलायमान प्रणाली में छोटे-छोटे चल-उद्योग होते हैं, जो पूरे देश में दौड़ते रहते हैं। वे आवश्यकता पड़ने पर, अपने किसी भी वर्तमान स्थान पर ही, हथियारों का जखीरा निर्मित कर देते हैं। इस तरह से, उन्हें हथियारों को हमेशा ही अपने साथ उठाकर नहीं घूमना पड़ता। उन हथियारों के निर्माण में प्रयुक्त होने वाला कच्चा माल भी सभी प्रकार के उद्योगों को आसानी से व हर स्थान पर उपलब्ध हो जाता है, क्योंकि कच्चे माल को ढोती हुई गाड़ियां पूरे देश की सड़कों पर घूम रही होती हैं। यद्यपि कुछ माल स्थानीय भी होता है, जो वहीं पर, आसपास में मिल जाता है। परन्तु स्थानीय माल अधिकाँशतः तभी प्रयुक्त होता है, जब बाहर से माल की आपूर्ति कम हो रही हो, क्योंकि स्थानीय क्षेत्रों के दोहन से, वहाँ का पर्यावरण दुष्प्रभावित हो सकता है। इसी तरह से, विभिन्न वस्तुओं को रखने के लिए, जिन छोटे-छोटे डिब्बों व बोतलों आदि की आवश्यकता पड़ती रहती है, वे भी सम्बंधित भण्डारगृह-परिसरों (storehouse-campuses) में स्थापित किए गए उद्योगों में ही बनाए जाते हैं। उदाहरण के लिए, नवदेश के लिए भेजी जाने वाली वस्तुओं को, सीमाक्षेत्रस्थित भण्डारगृहों में ही अंतिम रूप से परिष्कृत (final refining) व लिफाफाबंद (packing) किया जाता है, जिसके लिए उन भण्डारगृह-परिसरों में ही छोटे-छोटे उद्योग लगे होते हैं। वात-परिवहन (gas transport) से

सम्बंधित वस्तुओं का निर्माण करने वाले उद्योग भी विशिष्ट प्रकार के होते हैं। वास्तव में वात-पेटिकाओं (gas cylinders) को ढोने वाले कर्मचारियों को ही सूक्ष्म औद्योगिक-इकाइयाँ (micro industry-kits) उपलब्ध करवाई गई होती हैं, जिनसे वे चलते-चलते ही अपनी वात-पेटिकाओं के टूटे-फूटे सामान बनाते रहते हैं, और उन्हें पुनः-पुनः उसी तरह से अपनी वात-पेटिकाओं में जोड़ते रहते हैं। विभिन्न प्रकार की वस्तुओं को ढोने वाली गाड़ियों का निर्माण केन्द्रीय उद्योग में होता है, जो देश के लगभग बीचोंबीच, विशाल परिष्करण-उद्योग के साथ ही जुड़ा होता है। कई अत्यधिक क्रियाशील लोगों की बस्तियों में जो वात-भंडारणकक्ष (gas storage tanks) होते हैं, उनका निर्माण करने वाले उद्योग भी वहीँ पर स्थित होते हैं। इस विकेंद्रीकृत औद्योगिक-प्रणाली से, पूरे देश का समानरूप से औद्योगिक विकास सुनिश्चित होता है।

पूर्वोक्त कलिक-अधिकारी, मध्यमार्ग पर दौड़ रहे सार्वजनिक-वाहनों (public transport) से अपने निर्दिष्ट वाहनरोकस्थानों (bus stops) पर पहुंचते हैं, परन्तु वहाँ से देश के भीतर प्रविष्ट होने के लिए, विशेष रूप से निर्मित व्यावसायिक गाड़ियों (luxary taxis) की मांग करते हैं। वे गाड़ियां भी देश के पूर्वोक्त केन्द्रीय उद्योग में ही निर्मित होती हैं। वैसे तो उनमें से कुछ अधिकारी सार्वजनिक वाहनों से भी चले जाते हैं, यद्यपि मन मसोस कर ही। बहुत से अधिकारी तो अपनी पसंद की गाड़ी को न देखकर, आगे जाने वाली बसों में पुनः सवार होकर, आगे जाते रहते हैं, और नाराज जैसे होकर, देश से बाहर निकल जाते हैं।

देहदेश के अधिकाँश कर्मचारियों के पास चल-दूरभाषयंत्र (mobile phones) भी होते हैं। उन पर वे जहाँ कहीं पर भी उपस्थित रहते हुए, उच्चादेशों को सुनते हैं, और फिर आसपास के, उस निर्दिष्ट समूह के सभी लोग इकट्ठे होकर, सामूहिक रूप से उस दूरभाष-निर्दिष्ट काम में जुट जाते हैं। इसी तरह से सामूहिक प्रयास करके, वे काम को शीघ्रता से निष्पन्न कर देते हैं। उन चल-दूरभाषयंत्रों को बनाने के लिए, छोटी-छोटी औद्योगिक इकाइयाँ सभी के पास होती हैं। उनसे सभी लोग उनको स्वयं ही बनाते रहते हैं, और उनकी मुरम्मत भी करते रहते हैं। अन्य सभी देहदेशीय यंत्रों की तरह, वे यंत्र भी पर्यावरण-हितैषी (environment friendly) व जैवविघटनशील (biodegradable) भी होते हैं।

देहदेश के मेहनतकश लोगों को काम करने के लिए, विभिन्न प्रकार की रस्सियाँ, डोरियाँ, कीलें, पेच आदि सामान्य वस्तुएँ और कार्यानुसार विशिष्ट उपकरण भी चाहिए होते हैं। उनको बनाने का प्रशिक्षण लगभग सभी लोगों को दिया गया होता है, और लगभग सभी, अपने स्तर पर

ही, सड़कों पर दौड़ती हुई गाड़ियों से कच्चे माल को उठवाकर, अपने स्तर पर ही उनका निर्माण कर लेते हैं। कुछेक विशेष सामग्रियों के निर्माण के लिए, विशेष उद्योगों की आवश्यकता भी पड़ जाती है, जो सम्बंधित क्षेत्रों में, आसपास में ही स्थित होते हैं।

आह्लादाशीष नामक अधिकारी, देहदेश का एक बहुत महत्त्वपूर्ण अधिकारी होता है। वह देश के बहुत से अत्यावश्यक कार्यों को संपन्न करवाता है। उस पूरे देश की सड़कों पर, खाद्यान्नों से भरे हुए वाहन दौड़ते रहते हैं। परन्तु अधिकाँश नागरिक, अपने लिए आवश्यक खाद्यान्नों को, उन वाहनों से नहीं उठाते। वैसे भी देहपुरुष नैतिकता व आदर्शवाद के धनी होते हैं। वे वस्तुस्वामी की आधिकारिक स्वीकृति के बिना, किसी भी पराई वस्तु को, विशेषकर मुख्य खाद्यान्न को छूने तक को चोरी या पाप समझते हैं। अनाज को, विशेषकर मोटे व मुख्य अनाज को तो वे भगवान का रूप समझते हैं, और बिना उसके मालिक की स्वीकृति के उसे हड़पने को भगवान का अपमान समझते हैं। संभवतः उन्हें खाद्यान्न में विष होने की संभावना से उत्पन्न भय भी सताता रहता है। इसीलिए आह्लादाशीष अधिकारी की नियुक्ति की गई होती है, ताकि वह उन विशिष्ट खाद्यान्नों को ग्रहण करने के लिए, जनता को आधिकारिक स्वीकृति प्रदान करवाता रहे। साथ में वह अतिरिक्त अन्न का भंडारण भी करवाता रहता है। उसका कार्यालय पूर्वोक्त केन्द्रीय उद्योग के निकट ही, एक अतिसुन्दर स्थान पर बना होता है। वह स्थान पूर्वोक्त मुख्य वनकमार्ग के सामने ही होता है। उक्त स्थान पर, उसके छोटे-छोटे, और भी बहुत से अधीनस्थ कार्यालय, थोड़ी-थोड़ी दूरी पर बने हुए होते हैं। आह्लादाशीष के अधीनस्थ कर्मचारी पूरे देश में दौड़ते रहते हैं, और नागरिकों को खाद्यान्न उठाने की स्वीकृति देते रहते हैं। साथ में, नागरिकों की तत्संबंधित शंकाओं को भी वे दूर करते रहते हैं। कई देशों में, उनके निर्माण से लेकर ही, वह खाद्यान्नस्वीकृति-विभाग बना ही नहीं होता है, या यदि बना होता है, तो बहुत ही निम्न व नकारा दर्जे का। वैसी हालत में, देश को सदा के लिए आप्रवासित आह्लादाशीष-कर्मचारियों के आश्रित रहना पड़ता है। उस देश ने वास्तव में उस विभाग को स्थापित करना ही नहीं सीखा होता है। दूसरे देश भी उसे वैसा नहीं सिखाते, क्योंकि वे चाहते हैं कि प्रभावित देश सदा के लिए उनके आश्रित रहकर, उनकी अर्थव्यवस्था को संबल प्रदान करता रहे। कई बार, देश के आम नागरिकों को आह्लादाशीष-कर्मचारियों के ऊपर विश्वास ही नहीं होता, जिससे वे उनके द्वारा प्रदत्त स्वीकृति को अनसुना कर देते हैं। वैसे में, आह्लादाशीष अधिकारी को अपने कर्मचारियों की संख्या व अपने प्रशासन की जटिलता बढ़ानी पड़ती है। फिर जब उनमें से बहुत सारे कर्मचारी इकट्ठे होकर, लोगों की शंकाओं

व प्रश्नों को सुनते हुए, अपना पूरा जोर लगाकर व अपने विभागीय प्रशासन की जटिलता को दिखाकर, उनका समाधान करते हैं, तब कहीं जाकर लोग उनके ऊपर विश्वास करने लगते हैं, और फिर उनकी दी हुई स्वीकृति को स्वीकार कर लेते हैं। इस तरह से बहुत सा समय निकल जाता है। परन्तु जनता को इतनी अधिक अहमियत देने से, वह ज्यादा ही भाव खाने लग जाती है, और उसमें अहंकार भी भर जाता है। वैसी हालत में, उक्त अधिकारी को अपने कर्मचारियों व अन्य प्रशासनिक कार्यप्रणालियों को निरंतर ही बढ़ाते रहना पड़ता है। अंत में उसके हाथ भी खड़े हो जाते हैं। उसके सभी कर्मचारी नौकरी छोड़कर भाग जाते हैं, जिससे सम्बंधित प्रशासनिक कार्यप्रणालियाँ भी क्षीण हो जाती हैं। उससे वह अधिकारी भी हताश होकर, अपने छोटे से व साधारण से कार्यालय में, चुपचाप होकर बैठ जाता है, फिर वही पूर्वोक्त सिलसिला शुरु हो जाता है, अर्थात प्रभावित देश को विदेशी प्रणाली पर ही ताउम्र आश्रित होकर रहना पड़ता है।

आह्लादाशीष-कार्यालय के निकट ही गोलोकजन नामक अधिकारी का कार्यालय भी होता है। उसका गोलोकजन नाम इसलिए पड़ा है, क्योंकि वह दुग्धप्रेमी होता है, और खाद्यान्नों-पेयों में दूध की उपलब्धता को बढ़ावा देते हुए, दूध को सर्वाधिक प्राथमिकता देता है। देहदेशनागरिक भी दूध पीकर सर्वाधिक प्रसन्न रहते हैं। वास्तव में ये दोनों अधिकारी एक-दूसरे के व्यावसायिक सहयोगी ही होते हैं। जब देशवासी, आह्लादाशीष के इशारे पर बहुत सा खाद्यान्न उठाकर अपने-अपने घरों के अन्दर भर देते हैं, तब देश की सड़कों पर दौड़ती हुई खाली मालवाहक गाड़ियों की भरमार हो जाती है। जरूरतमंद लोगों के, विशेषकर मेहनतकश लोगों के सामने तो भुखमरी के जैसे हालात पैदा हो जाते हैं, क्योंकि वे लोग तो सीधे-साधे कर्मयोगी होते हैं, जो अपने पास भविष्य के लिए कुछ भी संचित करके नहीं रखते। वे तो रोज का कमाने वाले व रोज का खाने वाले लोग होते हैं। उन साधुस्वभाव लोगों को बचाने के लिए, उपरोक्त गोलोकजन-अधिकारी हरकत में आ जाता है। वह अपने अधीनस्थ कर्मचारियों को पूरे देश में फैला देता है। फिर वे कर्मचारी, पूरे देश में स्थान-स्थान पर बने हुए भंडारघरों से, खाद्यान्नों को बाहर निकलवाकर, उन्हें मालवाहक गाड़ियों पर लदवाते हैं। उन लदी हुई मालगाड़ियों को फिर वे भण्डारघर-परिसरों से पीछे हटवा कर, उन्हें देश के अंतर्बद्ध (interconnected) सड़कजाल (road network) के अन्दर प्रविष्ट करवा देते हैं। फिर वे गाड़ियां पूरे देश में घूमते हुए, आवश्यक खाद्यान्नों को सभी नागरिकों के लिए उपलब्ध करवाती रहती हैं। यदि खाद्यान्नों से भरी हुई गाड़ियां आवश्यकता से अधिक हो जाएं, तब आह्लादाशीष पुनः सक्रिय हो जाता है, और खाद्यान्नों के अधिकतम उपयोग के लिए, नागरिकों को प्रेरित

करवाने लग जाता है। यदि फिर भी खाद्यान्नों की मात्रा, एक अधिकतम सुरक्षितसीमा से ऊपर रहे, तब वे कर्मचारी उनको पुनः भंडारित करवा देते हैं। ऐसा करना इसलिए जरूरी होता है, क्योंकि आवश्यकता से अधिक खाद्यान्न, कई दिनों तक खुले में घूमता रहने से, वर्षा आदि पर्यावरणीय विघ्नों से भीग कर सड़ता रहता है, और देश के विभिन्न भागों में गन्दगी व बीमारियाँ आदि फैलाता रहता है। जब अकाल, बेमौसम आदि के कारण, खाद्यान्नों का उत्पादन कम होता है, तब भी यह अधिकारी क्रियाशील हो जाता है। उस समय यह अधिकारी छोटे तबके के लोगों को मछलियाँ, माँस, अंडा आदि खाने के लिए भी प्रेरित करता है, ताकि उच्चकोटि के शाकाहारीप्रिय-खाद्यान्न, उच्च तबके के लोगों को पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हो सकें, और वे कहीं नाराज होकर देश को संकट में न डाल दें। कई बार, गंभीर खाद्यान्न-संकट पैदा होने पर, वह निम्नकोटि के खाद्यान्नों, अण्डों व मत्स्यादि को रूपांतरित करवा के, उन्हें उच्चकोटि के स्वादिष्ट, पौष्टिक व डिब्बाबंद खाद्यान्न (nutrient supplements) के रूप में परिवर्तित करवा देता है। फिर वह उन्हें अच्छी तरह से सजवा कर, उन्हें पूरे देश में वितरित करवा देता है। कुछ समय के लिए, उससे भी समस्त जनता काफी हद तक संतुष्ट हो जाती है, परन्तु फिर भी, खाद्यान्न तो खाद्यान्न ही होता है। विशेषतः उच्च तबके के विद्वान लोग तो उस रूपांतरित तामसिक-अन्न से लम्बे समय तक अपना गुजारा नहीं चला पाते।

कुण्डलिनीसाधना या अन्य आध्यात्मिक गतिविधियों से भी योगी देहपुरुष की तरह की अनासक्ति भी सीख जाता है। इससे जाहिर होता है कि शरीरविज्ञान दर्शन से भी आदमी को कुंडलिनी योग या अन्य आध्यात्मिक साधनाओं का फल मिलता है। फिर भीशरीरविज्ञान दर्शन का ज्ञान आम लौकिक जनमानस के लिए ज्यादा आसान लगता है।

इस पुस्तक में वर्णित की गई सभी बातें व घटनाएँ प्रेमयोगी वज्र को वास्तविक भी लगती हैं, व काल्पनिक भी। इसी तरह, उसे कभी-कभी ये वास्तविक प्रतीत होती हैं; तो कभी-कभी स्वप्न की तरह काल्पनिक, काल्पनिक विशेषतः भौतिक परिवेश व भौतिकवादी/द्वैतयुक्त मनःस्थिति में । यहाँ तक कि इन तथ्यों व घटनाओं से जुड़े हुए अधिकाँश लोग भी इन्हें कोरी कल्पनाएँ ही ठहरा सकते हैं। वे संभवतः वही लोग होंगे, जो मन के अपार साम्राज्य को नहीं समझते, और स्थूल भौतिकता को ही सब कुछ मानते हैं। ऐसे लोगों की तो आजकल भरमार है। मन की गहराइयों में झाँकने वाले लोग तो आजकल विरले ही हैं। भौतिकरूप से भी अधिक उज्जवल, स्पष्ट व वास्तविक

यह सारा मानसिक घटनाक्रम, गुरु कृपा व देहपुरुष-चिंतन से प्राप्त द्वैताद्वैत व अनासक्ति का ही परिणाम है।

द्वैताद्वैत-दृष्टिकोण ही देहपुरुष का दृष्टिकोण होता है। वास्तव में द्वैताद्वैत से ही वास्तविक अद्वैत उत्पन्न होता है। द्वैताद्वैत के द्वैत का अर्थ यहाँ पर, सभी युक्तियुक्त/स्वाभाविक मानवीय भावों व कर्मों को बदलते हुए रूप में यथावत स्वीकार करना है; और अद्वैत का अर्थ, अपने को बदलते हुए भावों व कर्मों से अप्रभावित अनुभव करना है। सीधे ही रूप में अद्वैत का आचरण करने से द्वैत कायम रहता है, क्योंकि ऐच्छिक अद्वैत तो द्वैत से ही पोषण प्राप्त करता है, अर्थात एक प्रकार से द्वैत ही होता है (क्योंकि हमने शिकार-शिकारी परम्परा में सिद्ध किया है कि शिकार से ही शिकारी की देह बनी होती है, अर्थात शिकारी और कोई नहीं अपितु शिकारस्वरूप ही होता है)। देहपुरुष की तरह द्वैत व अद्वैत, दोनों को एकसाथ अपनाना चाहिए, क्योंकि इससे दोनों नष्ट हो जाते हैं, वैसे ही, जैसे +१ व- १ को मिलाने से दोनों ही नष्ट हो जाते हैं। इससे स्वतोसिद्ध, स्वाभाविक, अनिर्वचनीय व आनंदमयी अद्वैत स्वयं ही उत्पन्न हो जाता है। यदि द्वैत व अद्वैत दोनों को ही नकारा जाएगा, तब तो पुरुष देहपुरुष के स्वभाव के विपरीत जड़वत हो जाएगा, क्योंकि देहपुरुष की तरह साँसारिक कर्म-व्यवहार के लिए द्वैत भी आवश्यक होता है, व अद्वैत भी। अद्वैत तो देहपुरुष के साथ-साथ सम्पूर्ण प्रकृति का स्वाभाविक धर्म है ही। क्योंकि देहपुरुष व अन्य सभी प्राकृतिक वस्तु-भावों के बीच में आत्मरूप से कोई भी अंतर नहीं है, अतः सिद्ध होता है कि सृष्टिगत, समस्त प्राकृतिक वस्तु-भावों का वास्तविक आत्मस्वरूप, द्वैताद्वैतस्वरूप ही है। सागर अपने जलस्तर के बदलने के साथ कभी नहीं बदलता। इसी तरह, सूर्य अपनी चमक के स्तर के बदलने के साथ कभी नहीं बदलता। सागर के जलस्तर की तरह, पुरुष का मानसिक स्तर भी निरंतर बदलता रहना चाहिए, तभी तो उसे अद्वैत को लागू करने का अवसर मिलेगा, क्योंकि कौन कहेगा कि सागर अद्वैतस्वरूप है, यदि उसका जलस्तर एकसमान रहे। यदि पुरुष अद्वैत के नाम पर, मन के दोलन को बलपूर्वक रोककर, मन को एक जैसी स्थिति में बना कर रखने की कोशिश करेगा, तो उसे देहपुरुष-चिंतन से प्राप्त अद्वैतनिष्ठा को धारण करने का सुअवसर ही नहीं मिल पाएगा, और साथ में उसके काम भी दुष्प्रभावित हो जाएंगे। वास्तविक अद्वैत वह है, जो द्वैताद्वैत के निरंतर व लम्बे काल के प्रयास के बाद स्वयं व अनायास ही, आनंदमयी शून्यता के साथ उत्पन्न हो जाए। उदाहरण के लिए, प्रेमयोगी वज्र की प्रेमिका (consort) के सखी-समूह में भिन्न-भिन्न रूप-रंगों की देवीरानियाँ थीं। प्रेमयोगी वज्र यद्यपि सभी के मध्य के अंतर को भली

भांति समझता था, परन्तु वह किसी के सामने उसे प्रकट नहीं करता था, ताकि किसी भी देवीरानी को तनिक भी आभास न हो पाता, व उनमें से किसी के भी मन को जरा भी ठेस न पहुंचती। यही तो वास्तविक अद्वैत अर्थात द्वैताद्वैत है, जिसमें द्वैत को अच्छी तरह से समझते हुए भी अद्वैतमय दृष्टिकोण अपनाया जाता है। अतः हम देख सकते हैं कि अधिकाँश लोग अद्वैत को गलत ढंग से समझते हैं।

यह शविद नामक दर्शन वैदिक-पौराणिक विषयों में भी सकारात्मक रूप से रुचि उत्पन्न करता है। पुराणों का अनुसरण तो लोग कभी-कभी ही करते हैं, विशेषतः जब कोई विशेष धार्मिक आयोजन, जैसे कि साप्ताहिक पुराणयज्ञ आदि चल रहा हो। प्रतिदिन तो कोई भी पुराणों से अद्वैतलाभ की प्राप्ति नहीं करता। इस कारण से कोई विशेष आध्यात्मिक उन्नति प्रतीत नहीं होती, अपितु एकसमान जैसा आध्यात्मिक स्तर बना रहता है। यद्यपि जो लोग नित्यप्रति पुराणों का पठन-श्रवण करते हैं, उनका अद्वैत भाव सदैव विद्यमान रहता है। साप्ताहिक पुराणयज्ञों से पुराणों को नित्यप्रति पढ़ने की प्रेरणा प्राप्त होती है। अतः समाज को हर प्रकार से स्वस्थ बनाए रखने के लिए, साप्ताहिक पुराणयज्ञ होते रहने चाहिए। शविद, पुराणों से भी अधिक अद्वैतकारी प्रतीत होता है, क्योंकि इसका चिंतन व अनुसरण स्वयं ही नित्य-निरंतर होता रहता है, जिसका कारण है, इसका हमारे शरीर में ही नित्य-निरंतर स्थित रहना; इसीलिए यह कभी भी विस्मृत नहीं होता। अंत में, दोनों का मिश्रित उपयोग ही सर्वोत्तम प्रतीत होता है, क्योंकि 'यत्पिन्डे तत्ब्रम्हाण्डे' के अनुसार, पुराणों के सभी वस्तु-भाव पाठक के शरीर के ऊपर आरोपित होते रहते हैं, जिससे जीवन में सर्वोत्तम प्रकार का अद्वैत दृष्टिकोण सदैव बना रहता है। यह दर्शन एक चीज यह सिखाता है कि मानवीय प्रवृत्ति के बिना, अनासक्ति या द्वैताद्वैत का ज्यादा प्रायोगिक/व्यावहारिक महत्त्व नहीं है। यह बताता है कि देहपुरुष की तरह ही, मानवतापूर्ण प्रवृत्तियों के बीच में भी द्वैताद्वैत को कायम रखना ही परम फलप्रद व परम सुन्दर है, परम फलप्रद व परम सुन्दर है।
इति श्री।

प्रेमयोगी वज्र द्वारा लिखित व अनुमोदित अन्य पुस्तकें~

1) Love story of a Yogi- what Patanjali says
2) Kundalini demystified- what Premyogi vajra says
3) कुण्डलिनी विज्ञान- एक आध्यात्मिक मनोविज्ञान
4) The art of self publishing and website creation
5) स्वयंप्रकाशन व वैबसाईट निर्माण की कला
6) कुण्डलिनी रहस्योद्घाटित- प्रेमयोगी वज्र क्या कहता है
7) बहुतकनीकी जैविक खेती एवं वर्षाजल संग्रहण के मूलभूत आधारस्तम्भ- एक खुशहाल एवं विकासशील गाँव की कहानी, एक पर्यावरणप्रेमी योगी की जुबानी
8) ई-रीडर पर मेरी कुण्डलिनी वैबसाईट
9) My kundalini website on e-reader
10) शरीरविज्ञान दर्शन- एक आधुनिक कुण्डलिनी तंत्र (एक योगी की प्रेमकथा)
11) श्रीकृष्णाज्ञाभिनन्दनम
12) सोलन की सर्वहित साधना
13) योगोपनिषदों में राजयोग
14) क्षेत्रपति बीजेश्वर महादेव
15) देवभूमि सोलन
16) मौलिक व्यक्तित्व के प्रेरक सूत्र
17) बघाटेश्वरी माँ शूलिनी
18) म्हारा बघाट
19) भाव सुमन: एक आधुनिक काव्यसुधा सरस
20) Kundalini science~a spiritual psychology

इन उपरोक्त पुस्तकों का वर्णन एमाजोन, ऑथर सेन्ट्रल, ऑथर पेज, प्रेमयोगी वज्र पर उपलब्ध है। इन पुस्तकों का वर्णन उनकी निजी वैबसाईट https://demystifyingkundalini.com/shop/ के वैबपेज "शॉप (लाईब्रेरी)" पर भी उपलब्ध है। साप्ताहिक रूप से नई पोस्ट (विशेषतः कुण्डलिनी से सम्बंधित) प्राप्त करने और नियमित संपर्क में बने रहने के लिए कृपया इस वैबसाईट,"https://demystifyingkundalini.com/" को निःशुल्क रूप में फोलो करें/इसकी सदस्यता लें।

सर्वत्रं शुभमस्तु।